

# प्राथमिक शिक्षक

शैक्षिक संवाद की पत्रिका

वर्ष 42

अंक 2

अप्रैल 2018



---

## पत्रिका के बारे में

प्राथमिक शिक्षक राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् की एक त्रैमासिक पत्रिका है। इस पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है, शिक्षकों और संबद्ध प्रशासकों तक केंद्रीय सरकार की शिक्षा नीतियों से संबंधित जानकारीयाँ पहुँचाना, उन्हें कक्षा में प्रयोग में लाई जा सकने वाली सार्थक और संबद्ध सामग्री प्रदान करना और देश भर के विभिन्न केंद्रों में चल रहे पाठ्यक्रमों और कार्यक्रमों आदि के बारे में समय पर अवगत कराते रहना। शिक्षा जगत में होने वाली गतिविधियों पर विचारों के आदान-प्रदान के लिए भी यह पत्रिका एक मंच प्रदान करती है।

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त किए गए विचार लेखकों के अपने होते हैं। अतः यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक चिंतन में परिषद् की नीतियों को ही प्रस्तुत किया गया हो। इसलिए परिषद् का कोई उत्तरदायित्व नहीं है।

© 2018. पत्रिका में प्रकाशित लेखों का रा.शै.अ.प्र.प. द्वारा सर्वाधिकार सुरक्षित है। परिषद् की पूर्व अनुमति के बिना, लेखों का पुनर्मुद्रण किसी भी रूप में मान्य नहीं होगा।

---

### सलाहकार समिति

निदेशक, एन.सी.ई.आर.टी. : हृषिकेश सेनापति  
अध्यक्ष, डी.ई.ई. : अनूप कुमार राजपूत  
अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग : एम. सिराज अनवर

### संपादकीय समिति

अकादमिक संपादक : पद्मा यादव एवं उषा शर्मा  
मुख्य संपादक : श्वेता उप्पल

### प्रकाशन मंडल

मुख्य व्यापार प्रबंधक : गौतम गांगुली  
मुख्य उत्पादन अधिकारी : अरुण चितकारा  
संपादन सहायक : ऋषिपाल सिंह  
उत्पादन सहायक : प्रकाश वीर सिंह

### आवरण

अमित श्रीवास्तव

### चित्र

मुख्य पृष्ठ – विहान मित्रल, कक्षा के.जी., फ़ादर एंजेल स्कूल, नोएडा

### रा.शै.अ.प्र.प. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैपस  
श्री अरविंद मार्ग  
नयी दिल्ली 110 016 फ़ोन : 011-26562708

108, 100 फीट रोड  
होस्केरे हल्ली एक्सटेंशन  
बनाशंकरी III स्टेज  
बेंगलुरु 560 085 फ़ोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन  
डाकघर नवजीवन  
अहमदाबाद 380 014 फ़ोन : 079-27541446

सी. डब्ल्यू. सी. कैपस  
धनकल बस स्टॉप के सामने  
पनिहटी  
कोलकाता 700 114 फ़ोन : 033-25530454

सी. डब्ल्यू. सी. कॉम्प्लैक्स  
मालीगाँव  
गुवाहाटी 781 021 फ़ोन : 0361-2674869

---

मूल्य एक प्रति ₹ 65.00

वार्षिक ₹ 260.00

---

अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग द्वारा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 के लिए प्रकाशित तथा चन्द्रप्रभु ऑफ़सेट प्रिंटिंग वर्क्स प्रा. लि., सी-40, सैक्टर-8, नोएडा 201 301 द्वारा मुद्रित।

# प्राथमिक शिक्षक

वर्ष 42

अंक 2

अप्रैल 2018

## इस अंक में

संवाद		3
लेख		
1. कितने सुरक्षित हैं हमारे नौनिहाल विद्यालयों में	शारदा कुमारी	5
2. पेशेवर शिक्षक का बनना एक सतत यात्रा	मधुलिका झा	11
3. अध्यापक शिक्षा पर 'शिक्षा का अधिकार अधिनियम' का प्रभाव	उषा शुक्ला	23
4. बच्चों की रचनात्मकता को दिशा देती भित्ति पत्रिका	प्रमोद दीक्षित 'मलय'	30
5. पाठ्यक्रम में भाषा भारतीय संदर्भ	अमरीन अली	39
6. भाषा विकास	कृष्ण चन्द्र चौधरी प्रभात कुमार मिश्र	45
7. बच्चों में जानने और समझने संबंधी उपकरणों का विकास एक विवेचन	इन्दु दहिया	55
8. ऐसे कम हो सकता है बस्ते का बोझ	संदीप जोशी	63
9. निर्माण स्थलों पर घुमंतू पूर्व प्राथमिक शिक्षा केंद्र एक पहल	सुरभि चावला	71
10. प्रारंभिक बाल शिक्षा तथा देखभाल की संरचना	पद्मा यादव	79

विद्यया ऽ मृतमश्नुते



विद्यया से अमरत्व  
प्राप्त होता है।

परस्पर आवेष्टित हंस राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) के कार्य के तीनों पक्षों के एकीकरण के प्रतीक हैं—

- (i) अनुसंधान और विकास,  
(ii) प्रशिक्षण, तथा (iii) विस्तार।

यह डिजाइन कर्नाटक राज्य के रायचूर जिले में मस्के के निकट हुई खुदाइयों से प्राप्त ईसा पूर्व

तीसरी शताब्दी के अशोकयुगीन भग्नावशेष के आधार पर बनाया गया है।

उपर्युक्त आदर्श वाक्य ईशावास्य उपनिषद् से लिया गया है जिसका अर्थ है—  
विद्यया से अमरत्व प्राप्त होता है।

11. पूर्व प्राथमिक शिक्षा में शिक्षण-अधिगम विधियाँ	रीना रानी	85
12. पूर्व प्राथमिक शिक्षा में समायोजन काल का महत्त्व	ज्योतिकांत प्रसाद	91
<b>विशेष</b>		
13. उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान सीखने के प्रतिफल (कक्षा 6 से 8)		97
<b>बालमन कुछ कहता है</b>		
14. खेलों का महत्त्व	विपुल वत्स	110
<b>कविता</b>		
15. शिक्षा	सुनील कुमार गौड़	111



## संवाद

आज हर अभिभावक चाहता है कि उसका बच्चा पढ़े और जीवन में आगे बढ़े। इसी अपेक्षा के साथ अभिभावक अपने बच्चे का विद्यालय में दाखिला कराते हैं। लेकिन बच्चा जब पहली बार अपनी माँ व परिवार के सदस्यों से दूर विद्यालयी परिवेश में आता है, तब उसकी सबसे बड़ी समस्या होती है — विद्यालय में सामंजस्य स्थापित करना और इस समस्या का सामना करना उसके लिए बहुत मुश्किल होता है। लेख ‘पूर्व प्राथमिक शिक्षा में समायोजन काल का महत्व’ बच्चों की इसी समस्या का हल प्रस्तुत करता है।

प्रारंभिक शिक्षा के संदर्भ में शिक्षण विधि एक महत्वपूर्ण विषय है। यह जरूरी है कि पूर्व प्राथमिक स्तर पर शिक्षक-प्रशिक्षकों द्वारा बताए गए शिक्षण अधिगमों को प्रारंभिक शिक्षक व्यावहारिक रूप दें। शिक्षक बच्चों को अपनी समझ व साझेदारी तथा भिन्न-भिन्न क्रियाकलापों के माध्यम से ज्ञान प्रदान कर सकते हैं। शिक्षकों का यह व्यावहारिक तरीका बच्चों के मन की अभिव्यक्ति में सहायक सिद्ध हो सकता है। इसके अतिरिक्त ग्रहण करने की कला बच्चों में इतनी व्यापक होती है कि बच्चे अपने संपर्क में आने वाली हर घटना, वस्तु, दृश्य, व्यक्ति, मौसम, जल, जीवन और माटी से स्वयं को सहजता से न केवल जोड़ लेते हैं, बल्कि सीखने की प्रक्रिया को गतिशील भी करते हैं। हर बच्चा अपने अनुभव को प्रकट करना चाहता है और इस प्रकटीकरण के लिए ‘बच्चों की रचनात्मकता को दिशा देती भित्ति पत्रिका’ बिल्कुल उचित माध्यम और मंच प्रदान करती है।

अभिभावक अपने बच्चों को इसी विश्वास के साथ विद्यालय भेजते हैं कि उनके बच्चे सभ्य, सुसंस्कृत, आत्मविश्वासी, आत्मनिर्भर बनें और यह भी अपेक्षा करते हैं कि विद्यालय का वातावरण उन्हें मानसिक स्तर पर मजबूत करेगा और उनके मनोबल में वृद्धि होगी। किंतु कई बार कुछ ऐसी घटनाएँ हमारे सामने प्रस्तुत हो जाती हैं कि जिनसे विद्यालय प्रशासन एवं शिक्षा व्यवस्था तथा प्रबंधन पर विश्वास करना कठिन हो जाता है। लेख ‘कितने सुरक्षित हैं हमारे नौनिहाल विद्यालयों में’ हमें विद्यालयों में बच्चों को हो रही असुविधाओं एवं उनकी सुरक्षा से जुड़े सवालों को प्रस्तुत करता है। लेख ‘पाठ्यक्रम में भाषा — भारतीय संदर्भ’ यह दर्शाता है कि किसी भी स्तर अथवा कक्षा के पाठ्यक्रम में हिंदी विषय क्यों महत्वपूर्ण है। भाषा का अस्तित्व शून्य में विकसित नहीं होता। भाषा अन्य विषयों को साथ लेकर

चलती है। भाषा में बच्चे की समझ अच्छी है तो अन्य विषय सीखना उसके लिए सरल हो जाता है। लेख 'पेशेवर शिक्षक का बनना — एक सतत यात्रा' यह दर्शाता है कि शिक्षक को निरंतर अपनी क्षमता व ज्ञान को बढ़ाते रहना चाहिए, तभी वह अपने शिक्षण को बेहतर कर सकता है। एक पेशेवर के तौर पर शिक्षक की तैयारी अनुभव और प्रशिक्षण से आगे जाकर अपने अनुभवों, विचारों और कार्यों पर लगातार चिंतन, उनकी समीक्षा तथा चुनौतियों, असफलताओं और सफल कदमों से सीखने के सतत प्रयासों की माँग करती है अर्थात् पेशेवर के तौर पर स्थापित होने के लिए चिंतनशीलता (reflection) एक अनिवार्य शर्त के तौर पर उभरती है। इस अंक में अन्य भी रोचक लेख जैसे 'पूर्व प्राथमिक शिक्षा में शिक्षण-अधिगम विधियाँ', 'बच्चों में जानने और समझने संबंधी उपकरणों का विकास — एक विवेचन', 'ऐसे कम हो सकता है बस्ते का बोझ', 'भाषा विकास', 'निर्माण स्थलों पर घुमंतू पूर्व प्राथमिक शिक्षा केंद्र — एक पहल' और 'अध्यापक शिक्षा पर 'शिक्षा के अधिकार अधिनियम' का प्रभाव' शामिल हैं।

उम्मीद है यह अंक आपको पसंद आएगा। इस अंक से संबंधित यदि कोई सुझाव हों तो आप प्रारंभिक शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी. को भेज सकते हैं।

अकादमिक संपादक

## कितने सुरक्षित हैं हमारे नौनिहाल विद्यालयों में

शारदा कुमारी\*

अभिभावक अपने बच्चों को विद्यालय भेजते हैं ताकि उनके बच्चे सभ्य, सुसंस्कृत, आत्मविश्वासी, आत्मनिर्भर बनें और यह भी अपेक्षा करते हैं कि विद्यालय का वातावरण उन्हें मानसिक स्तर पर मजबूत करेगा, जिससे उनके मनोबल में वृद्धि होगी। अभिभावक विद्यालय प्रशासन पर आँख बंद कर के विश्वास करते हैं। वे मान लेते हैं कि विद्यालय में उनके बच्चे सुरक्षित हैं तथा उन्हें जो भी सामग्री प्रदान की जा रही है वह उनके स्वास्थ्य एवं विकास के लिए आवश्यक तथा उचित है। किंतु कई बार कुछ ऐसी घटनाएँ हमारे सामने प्रस्तुत हो जाती हैं कि जिनसे विद्यालय प्रशासन एवं शिक्षा व्यवस्था तथा प्रबंधन पर विश्वास करना कठिन हो जाता है। प्रस्तुत लेख में इन्हीं कुछ बिंदुओं पर प्रकाश डाला गया है। आखिर कितने सुरक्षित हैं हमारे नौनिहाल विद्यालयों में!

एक प्रबुद्ध, विचारशील और समृद्ध देश के निर्माण का उत्तरदायित्व उन नागरिकों पर है जो सामाजिक-सांस्कृतिक समरसता एवं संवेदनशीलता के साथ पलते-बढ़ते हैं। विचारशीलता और समरसता के ताने-बाने को बुनने और बनाए रखने में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है और इसीलिए शिक्षा मानवीय समाज की स्वाभाविक विशेषताओं के रूप में उभरी है। समाज के विकास के सभी चरणों में शिक्षा ने ही उनके निर्माण में योगदान किया है और यही कारण है कि शिक्षा भिन्न-भिन्न रूपों में सतत जारी रही। समाज की सबसे महत्वपूर्ण संस्था 'परिवार' से उपजा शिक्षा का अनौपचारिक स्वरूप आज 'विद्यालय' जैसी संस्था के पास पहुँच कर प्रत्येक वर्ग ने स्वीकार किया है और इसकी लोकप्रियता एवं स्वीकार्यता का

आकलन इस बात से किया जा सकता है कि समाज के संपन्न से संपन्नतम तबके के लोग और सुविधावंचित एवं हाशिए से परे जीवन बिताने को बाध्य लोग सभी की चाहत यही रहती है कि उनके बच्चे स्कूली शिक्षा प्राप्त करें, उनके बच्चों को स्कूल जाने के अवसर अवश्य मिलें।

आखिर क्यों कोई भी अभिभावक अपने बच्चों को विद्यालय भेजना चाहता है?

यदि अभिभावकों की भाषा में ही बात की जाए तो स्वाभाविक रूप से उत्तर इस प्रकार है —

‘हमारे बच्चे तमीज़ सीख लें।’

‘पढ़ना-लिखना सीखें।’

‘पढ़ना-लिखना सीखकर कुछ लायक बन जाएँ।’

‘उठने-बैठने, बोलने-चालने का ढंग सीख लें।’

\*प्राचार्या, मण्डल शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, सैक्टर-7, आर.के. पुरम, नयी दिल्ली

‘कुछ बन जाएँ’

‘कुछ ज्ञान की बात सीख लें।’

कहने का तात्पर्य यह है कि अभिभावक अपने बच्चों को विद्यालय भेजते हैं तो इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हैं कि उनके बच्चे सभ्य, सुसंस्कृत, आत्मविश्वासी, आत्मनिर्भर बनेंगे और यह भी अपेक्षा करते हैं कि उनके बच्चों को विद्यालय में एक ऐसा माहौल मिलेगा जो —

- उनके लिए पूरी तरह से ‘सुरक्षित’ होगा।
- उनकी शारीरिक वृद्धि एवं विकास के आड़े नहीं आएगा।
- उनके मनोबल को घटाने का काम नहीं करेगा।
- उनको किसी भी तरह की भावात्मक, मानसिक और शारीरिक चोट नहीं पहुँचाएगा।
- उनके जीवन की सुरक्षा का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाएगा।

संक्षेप में कहें तो कहा जा सकता है कि कोई भी अभिभावक स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर सकता कि ‘विद्यालय’ बच्चे की ज़िंदगी समाप्त कर देने का कारण भी बन सकता है। कई बार हमें विद्यालयों से यह समाचार मिलता है कि अध्यापक द्वारा कान खिंचाई करने पर बच्चे के कान से खून बह निकला, तो कभी चाँटा मारने पर आँख और गाल सूज गए, हाथ की अँगुलियों की हड्डियाँ चटक गईं और सबसे वीभत्स समाचार यह कि विद्यार्थी का जीवन ही चला गया।

विद्यालय से यातनालय और यातनालय से मृत्युगृह! कितना भयावह रूप हो गया है न आज की इस शिक्षा व्यवस्था का। शिक्षार्जन के उद्देश्य से भेजे गए बच्चे विद्यालयों में कितने सुरक्षित हैं? यह सिर्फ़

सरकार या प्रशासन की चिंता का विषय नहीं है, यह समूचे समाज की चिंता और सरोकार का विषय है। तो आइए मिलजुल कर इस विषय पर संवाद करते हैं। यह बात शुरू कहाँ से की जाए, क्या वह विद्यालय देहरी की भीतर जाने के बाद शुरू होता है या उससे भी पहले कई ऐसे पड़ाव हैं जहाँ उनकी सुरक्षा और चौकसी शुरू हो जानी चाहिए।

घर से विद्यालय की ओर प्रस्थान पहला पड़ाव या बिंदु है जहाँ बच्चों की सुरक्षा पर खतरा शुरू हो जाता है। बच्चे बस में जा रहे हैं, पैदल जा रहे हैं या फिर साइकिल-रिक्शा, वैन, खुद की साइकिल, ज़रिया कोई-सा भी हो, खतरा हर माध्यम से है, कैसे? तो ज़रा निगाह डालिए उस वैन पर जिसमें पहले से ही कई बच्चे ठुँसे हुए हैं और अब ये तीन बच्चे और चढ़ेंगे। पिट्टू की तरह इनकी पीठ पर बोझ लदा है, अपने शरीर को अंदर घुसाएँ या फिर अपने बस्ते को पहले अंदर पहुँचाएँ? अभी यह कशमकश चल ही रही है कि वाहन चालक अपनी ड्राइविंग कुशलता का लोहा मनवाने की गरज से गाड़ी चला देता है, उसने इस बात पर ध्यान देने की ज़रूरत ही नहीं समझी कि तीसरे बच्चे का एक पाँव अभी बाहर ही है। दो-तीन कदम तो घिसटता ही है उस नौनिहाल का पाँव और अंकिल-अंकिल, ड्राइवर भैया मेरा पैर-मेरा पैर की चीख-पुकार जब तक कँपकँपा नहीं देती तब तक ‘वाहन चालक’ समय पर विद्यालय पहुँचाने की ज़िद पर अड़ा गाड़ी चलाता ही रहता है।

अंदर बैठे बच्चों की चिल्लाहट का भी उस पर असर नहीं पड़ता। यह तो भला हो उन राहगीरों का जो चलती गाड़ी में घिसटते हुए बच्चे को देखकर अपनी संवेदनाओं के तार अपने जागरूक नागरिक होने के



दायित्व से जोड़ते हैं और दौड़कर वाहन चालक को रोकते हैं। इस तरह से एक बड़े हादसे को टालने में अपनी बड़ी भूमिका निभाते हैं।

वाहन चालक के लिए चलती गाड़ी के साथ बच्चे के पाँव का घिसटना कोई बड़ी बात नहीं है। वह बहुत ही मामूली से भाव रखकर कहता है, “नाहक लाल-पीले हो रहे हो। कोई जान थोड़ी ही गई है। ज़रा-सा पैर ही तो छिला है। अभी डिटॉल-शिटाल लगवा दूँगा।”

गोया कि ‘जान जाने’ पर ही सुरक्षा के बारे में सोचा जाएगा।

बस या वैन के दरवाज़े में हाथ का फँसना, नील या गुम चोट लगना यह तो रोज़ की बात है। क्योंकि ‘जान नहीं गई है’ इसलिए ये बातें अखबार की सुर्खियाँ नहीं बन पाती हैं। वैन या बस के संदर्भ में सिर्फ़ इतना भर नहीं और भी बिंदु हैं जो सुरक्षा व स्वास्थ्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, जैसे कि नियमित सफ़ाई न होना, क्षमता से अधिक बच्चों को बैठाना ये दोनों बातें श्वसन तंत्र पर नकारात्मक असर डालती हैं और अंततः बच्चों के स्वास्थ्य व जीवन दोनों ही पर खतरे की चेतावनी देती हैं।

अभिभावक प्रत्येक दिन वाहन चालक से बात करें और उसे याद दिलाएँ कि उसे सड़कों पर अपनी ‘ड्राइविंग कुशलता’ की बाज़ीगरी नहीं दिखानी है, बल्कि बच्चों को सुरक्षित विद्यालय लाना और पहुँचाना है।

अभिभावक थोड़ी-सी बचत के लालच में बच्चों की सुरक्षा को खतरे में न डालें और ठुँसी गाड़ी में अपने बच्चे न बैठाएँ।

यह तो बात थी बस/वैन/रिक्षाधारियों की। अब पैदल चलने वाले बच्चों की सुरक्षा के बारे में सोचेंगे तो पाषाण हृदय भी काँप उठेंगे। महानगर तो महानगर, छोटे शहरों में भी सड़क पर चलना और सड़क पार करना बहुत कठिन काम हो गया है। सड़क पर चल रहे बच्चे ही नहीं वयस्क बड़े-बूढ़े सभी का ‘वाहन चालकों’ की कृपा से सड़कों पर चलना कई कारणों से असुरक्षित हो गया है। पहला कारण तो फुटपाथ की अनुपलब्धता है। कहीं फुटपाथ हैं ही नहीं, जहाँ हैं वहाँ वे या तो पुरुषों के मूत्रालय बन गए हैं या फिर अतिक्रमण के डेरे बन गए हैं। दूसरा कारण वाहन चालकों का दृष्टिकोण। उनकी नज़र में पैदल चलने वाले ‘बेचारे’ हैं और ‘बेचारों’ को तो गरिमा से जीने का अधिकार तो जैसे होता ही नहीं है।

वाहन चालकों के नज़रिए के चलते ही पैदल चलने वाले बच्चों की सुरक्षा एक बहुत बड़ा सवाल बन गई है।

इस संबंध में विद्यालय प्रशासन अकेला कुछ नहीं कर सकता। सभी नागरिकों को अपनी-अपनी भूमिका सुनिश्चित करनी होगी। एक वाहन चालक के रूप में वे अपने कर्तव्यों और नियमों का पालन करें और एक राहगीर के रूप में स्वयं तो नियमों का पालन करें ही और जब भी किसी को सड़कों पर अधिक गति देखें तो तुरंत हिम्मत जुटाते हुए उसकी गलती को बोध कराकर हादसा रोकने में अपनी ज़िम्मेदारी निभाएँ।

घर से अब हम विद्यालय के भीतर पहुँच गए हैं। हम अभी भी निश्चित होकर राहत की साँस नहीं ले सकते कि हमारे बच्चे सुरक्षित हैं। यह देखिए प्रातः कालीन सभा आरंभ हो गई है, एक-आध बच्चे का

चक्कर खाकर गिर जाना साधारण-सी बात है। बस! बात इसलिए बड़ी नहीं बन पाई कि बच्चे की जान नहीं गई। सिर्फ़ मामूली-सी चोट आई है, या फिर बेहोश हुआ है। क्या जान जाने पर ‘सोचना’ शुरू होगा?

देर से आने वाले बच्चों को अलग कतार में खड़ा कर देना या सभी बच्चों के सामने उन्हें अपशब्द कहना, यह भी उनकी सुरक्षा से जुड़ा है। शारीरिक चोट तो नज़रअंदाज़ नहीं की जाती। बच्चे अभिभावक और अध्यापक द्वारा कब-कब मानसिक प्रताड़नाओं के शिकार होकर मानसिक स्वास्थ्य खो बैठते हैं, इस प्रकार के आँकड़ों का आकलन तो कभी किया ही नहीं गया।

हम अध्यापकों को सचेत रहना होगा कि बच्चों को अनुशासन और मानसिक रूप से मज़बूत बनाने के नाम पर हम उन्हें भावात्मक व मानसिक आघात पहुँचाने का जोखिम नहीं ले सकते।

प्रातःकालीन सभा के बाद बढ़ते हैं शौचालय की ओर। ‘शौचालय’ तो प्राकृतिक आवश्यकता को पूरा करने की जगह न बनकर अब ‘हत्यास्थल’ के रूप में सामने आ रहे हैं।

आइए जानते हैं कि शौचालय में सुरक्षा संबंधी प्रावधानों के अभाव में बच्चों को कहाँ-कहाँ किस बात से खतरा है—

- सबसे पहली बात तो शौचालयों का न होना और यदि हैं तो उनमें दुर्गंध व गंदगी का स्थायी वासा। इसे किसी भी तरह से नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। यह न समझिए कि इससे बच्चों की सुरक्षा को कोई खतरा नहीं। हम बच्चों को धीमी गति से ज़हर दे रहे हैं।

- दूसरी बात कमोड या सीट का आकार। शौचालयों में कमोड या सीट का आकार बच्चों की आयु, शारीरिक आकार के अनुपात से मेल खा रहा है या नहीं, क्या हम इस तरफ़ सोच पा रहे हैं। यह एक गंभीर मामला है। छोटे-छोटे बच्चों को मूत्र त्यागने की कोशिश में कई बार कमोड के अंदर गिरते भी देखा गया है, उनकी चीख-पुकार के बाद अध्यापक दौड़ी आती हैं, बच्चे को गंदगी में सना देखकर नाक भौं-सिकोड़ती आया को आवाज़ लगाती है, जब तक आया/सहायिका आती है तब तक बच्चा शारीरिक चोट के साथ-साथ ग्लानि व अपराध बोध की चोट सहता हुआ शर्म से हैरान-परेशान होता रहता है कि आखिर उससे गलती हुई कहाँ? अध्यापिका व आया के तानों और उलाहनों के साथ-साथ अभिभावक भी ताना मारते हैं कि ‘सँभल कर नहीं जा सकते थे क्या?’ कमोड में गिरने से छोटे-मोटे नील और गुमचोट तो पड़ी-ही-पड़ी अब इधर-उधर से तानों की बौछार से दिल भी छेद दिया गया। दर्द होता है तो होता रहे। यह समझने की चेष्टा भला हम और आप नहीं करेंगे तो कौन करेगा।

शौचालय के बाद अब बात करते हैं पेयजल की व्यवस्था है। हम अध्यापक साथी सभी अपने-आप से सवाल करें, क्या पेयजल स्थल जो भी व्यवस्था है व प्राथमिक स्तर के बच्चों के लिए सुविधाजनक है? क्या यह व्यवस्था छोटे-छोटे बच्चों की पहुँच के भीतर है? किसी दिन थोड़ा रुककर ध्यान से देखिए। नल की टोंटी ऊपर है। बच्चे उचक-उचक कर पानी पीते हैं। उचकने में एक तरफ़ गिरने का तो खतरा बना ही रहता है तो दूसरी ओर ओक लगाकर पीने से पानी की पूरी

धार कोहनी तक आती है और कोहनी से पानी बहने लगता है। यानि कि कलाई से कोहनी तक पूरी बाँह गीली हो गई। गर्मियों के दिन हैं तो बात बहुत गंभीर नहीं है पर सर्दियों में बच्चे का गीली बाँह के साथ पूरे दिन विद्यालय में रहना, उचित नहीं है। अकसर लोग कहते हैं — “अरे छोटा-मोटा बुखार, खाँसी-जुकाम तो होता ही रहता है।” नहीं जनाब! ऐसा कहकर हमें अपनी अदूरदर्शिता व संवेदनहीनता का परिचय नहीं देना है बल्कि ‘पेयजल स्थान’ की व्यवस्था के बारे में प्रत्येक दृष्टिकोण से सोचना होगा। बेहतर होगा कि बड़े और छोटे बच्चों के लिए अलग-अलग व्यवस्था हो और हर घंटे-दो-घंटे बाद वहाँ पर पोंछा लगाने की व्यवस्था की जाए। पानी फैला रहने की स्थिति में बच्चों के फिसलकर गिरने का डर बना रहता है।

शौचालय, पेयजल, प्रातःकालीन सभा के स्थलों के बाद बात करते हैं खेल के मैदान की। आप शायद प्रश्न करें कि क्या बच्चों को स्वतंत्र रूप से खेलने भी न दें। वहाँ भी निगरानी करने पहुँच गए तो बच्चे की आज़ादी का हनन नहीं होगा क्या?

यहाँ निगरानी से कहीं अधिक व्यवस्था संबंधी सावधानियों की बात की जा रही है। कुछ विद्यालयों में देखा है कि सीसों, फिसलपट्टी और पटरी झूला सब बहुत आस-पास लगा दिए जाते हैं। आप कल्पना करके देखिए कि पटरी झूले पर पेंग लेता हुआ बच्चा सीसों पर ऊपर-नीचे हुए बच्चों के बिल्कुल समीप है। आप कल्पना मात्र से सिहर उठेंगे।

हर दूसरे दिन बच्चे खेल के मैदान में दुर्घटनाओं का शिकार होते रहते हैं। हम यह सोचकर संतोष कर लेते हैं कि ‘चलो जान नहीं गई। भगवान का शुक्र है।’

ध्यान रहे कि भगवान किसी रूप में भी है हमारी गलतियों को बहुत दिनों तक सहन करने वाला नहीं है। हमें सचेत रहकर खेल के मैदान की व्यवस्था के बारे में भी सोचना ज़रूरी है। इस संदर्भ में खेल उपकरणों के लिए सही स्थान का चयन, भूमि का समतल होना, काँच, कंकड़-पत्थर रहित होना ये सब बातें बहुत ज़रूरी हैं और वयस्क विद्यार्थियों व बारी-बारी से अध्यापकों का उत्तरदायित्व भी सुनिश्चित किया जाए कि वे मध्य अवकाश के दौरान बीच-बीच में निगरानी ज़रूर रखें। ये सब वे स्थान हैं जहाँ भिन्न कोणों से अधिक चौकन्नेपन की ज़रूरत है।

कुछ विद्यालय ऐसे हैं जो मुख्य राज्यमार्गों के पास ही बने हैं। सड़क के एक पार बस्ती है दूसरी पार विद्यालय है। सड़क पर दौड़ते वाहन बच्चों की गतिशीलता से प्रतिस्पर्धा करते हुए दौड़ते ही रहते हैं।

यद्यपि सड़कों पर चेतावनी लिखी रहती है कि ‘सावधान! धीमें चलो। आगे स्कूल है।’ पर अधिकांश वाहन चालकों को सारी तेज़ी और समय पाबंदी का भाव सड़कों पर ही जाग्रत होता है वे अपनी गति पर काबू नहीं कर पाते और उनकी गति का शिकार बनते हैं मासूम बच्चे। मुझे एक भयानक हादसा याद आ रहा है। यहाँ उसका उल्लेख करना प्रासंगिक प्रतीत होता है। राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली के पश्चिमी इलाके में पंजाबी बाग से पीरागढ़ी फिर नाँगलोई को पार करता हुआ मुख्य राज्य मार्ग हरियाणा के बहादुरगढ़ को पहुँचता है। बहादुरगढ़ से पहले दिल्ली का आखिरी गाँव है मुण्डका व घेवरा। बस यहीं का दर्दनाक हादसा आपके साथ साझा करती हूँ।

मुण्डका के बच्चों की औपचारिक शिक्षा की ज़रूरत को पूरा करने के लिए सड़क पार सरकारी विद्यालय खुला। कुछ ही दिनों में उसके अध्यापकों की कर्तव्यनिष्ठा ने विद्यालय की लोकप्रियता को बढ़ा दिया। मुण्डका के अभिभावकों ने गहरे विश्वास के साथ बच्चों को विद्यालय भेजने में कभी कोताही नहीं बरती पर एक दिन ऐसा भी आया कि अभिभावकों ने उसकी विद्यालय में बच्चों को भेजने से मना कर दिया। ऐसा अचानक क्या हुआ? विश्वास के पौधों को कौन चर गया? दरअसल हुआ क्या! राज्यमार्ग पर दौड़ते एक ट्रक ने सड़क पार करते बच्चों के झुंड पर अपना करतब दिखाया। कुछ घायल हुए और एक बच्चे का जीवन खिलने से पहले ही मुरझा कर खत्म हो गया?

यहाँ दोषी कौन था? इस पर चर्चा करने से लाभ अधिक नहीं है। लाभ तो इस बात में है कि क्या-क्या प्रयत्न किए जा सकते थे और किए जा सकते हैं?

बच्चों को घर बैठा लेना उपाय नहीं है। अगर वे इस सड़क पर आज नहीं तो कभी न कभी तो आएँगे ही। तो क्या उपाय है? अभिभावकों और अध्यापकों की साझेदारी से बहुत ही रचनात्मक समाधान निकलकर सामने आया। गहन चर्चा व विमर्श से यह बात सामने आई कि गाँव के वे लोग जो अब दिहाड़ी

या काम-काज पर नहीं जाते, वे दिनवार अपनी-अपनी बारी लगा लें और पाँच-पाँच के समूह में बच्चों को सड़क पार करने में मदद करें। गाँववासियों ने एक अधोषित-सी चैक पोस्ट भी बना ली थी। आवश्यकता से अधिक गति वाले वाहनों को भी रोका जाने लगा और इस तरह से भविष्य में होने वाली दुर्घटनाओं की संभावनाओं को कम करने में भरपूर योगदान दिया।

बच्चे हमारे समाज की अमूल्य निधि हैं। यह एक कोरा-सा वाक्य नहीं है। हमें इस वाक्य के मर्म को समझते हुए बच्चों की सुरक्षा को लेकर बहुत चौकस रहना होगा। जब भी बच्चों की सुरक्षा पर खतरा मँडराता है, सीसीटीवी लगाने की फरियादे सत्ता व व्यवस्था के गलियारों में गूँजने लगती हैं। आप स्वयं से सवाल करिए कि क्या सीसीटीवी लगने से दुर्घटना होने से बचा सकता है? हम खुद क्यों नहीं उन संभावनाओं की खोज करें जो दुर्घटनाओं की संभावनाओं को कम बहुत ही कम कर दे।

उम्मीद करते हैं कि हमारे मानस और दिल में बच्चों की सुरक्षा को लेकर ऐसा भाव जाग्रत होगा जिसकी चौकसी व चौकन्नापन बच्चों को निर्भीकता से खेलने-कूदने, आने-जाने, पढ़ने-लिखने की आज़ादी देगा।

## पेशेवर शिक्षक का बनना एक सतत यात्रा

मधुलिका झा\*

शिक्षण कार्य की जटिलता शिक्षक के लगातार क्षमतावर्धन की माँग करती है, इसलिए शिक्षक के विकास हेतु सेवापूर्व और सेवाकालीन प्रशिक्षणों की परिकल्पना की गई है। एक पेशेवर के तौर पर शिक्षक की तैयारी अनुभव और प्रशिक्षण से आगे जाकर अपने अनुभवों, विचारों और कार्यों पर लगातार चिंतन, उनकी समीक्षा तथा चुनौतियों, असफलताओं और सफल कदमों से सीखने के सतत प्रयासों की माँग करती है अर्थात् पेशेवर के तौर पर स्थापित होने के लिए चिंतनशीलता (reflection) एक अनिवार्य शर्त के तौर पर उभरती है।

तकनीकी विकास ने चाहे शिक्षकविहीन कक्षा की संकल्पना को साकार करने की दिशा में कदम बढ़ा दिया हो, बावजूद इसके स्कूली शिक्षा में बेहतरी का कोई भी प्रयास शिक्षक को साथ लिए बगैर संभव नहीं है। सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में शिक्षक निर्जीव पाठ्यक्रम और जीवंत शिक्षार्थी के बीच की वो मानवीय कड़ी है, जो किसी माली की तरह हर शिक्षार्थी को उसके अनुरूप सीखने और पल्लवित होने के लिए आवश्यक वातावरण मुहैया कराकर उनके सीखने में योगदान दे रहा होता है। इसीलिए आवश्यक हो जाता है कि यह कड़ी अपने आप में इतनी सक्षम हो कि पाठ्यक्रम, शिक्षार्थी और ज्ञानार्जन की प्रक्रिया में उभरने वाले तनावों और चुनौतियों को न सिर्फ़ स्वयं झेल सके, साथ ही बच्चों को सीखने-सिखाने की इस यात्रा में सहयात्री मानते हुए

उन्हें भी चुनौतियों का सामना करने, निर्णय लेने और उन निर्णयों की ज़िम्मेदारी लेने के लिए तैयार होने में वांछित मदद कर सके। इसी संदर्भ में शिक्षक को एक पेशेवर के तौर पर देखे जाने और उसका दर्जा देने की माँग उभरती है, जिसमें यह निहित है कि शायद एक पेशेवर शिक्षक अपने कार्यक्षेत्र में आने वाली चुनौतियों का बेहतर ढंग से सामना करते हुए शिक्षा में बेहतरी के प्रयासों में सक्रिय योगदान दे सकता है।

इसलिए ज़रूरी हो जाता है कि शिक्षक की पेशेवर पहचान को परिभाषित किया जाए। पेशेवर शिक्षक के पास ऐसी कौन सी योग्यताएँ, क्षमताएँ और रुझान/मूल्य हो सकते हैं जो उन्हें शिक्षण में अधिक समर्थ बना सकते हैं? लेकिन इससे पहले पेशे को परिभाषित करना आवश्यक हो जाता है। ऐसी कौन सी शर्तें हैं जो किसी पेशे/व्यवसाय के लिए आवश्यक हैं? और

\* प्रोजेक्ट असोसिएट, अंबेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली

पेशे/व्यवसाय को रोजमर्रा के अन्य कामों से अलग कर किसी पेशेवर को एक खास दर्जा देती हैं? तभी हम यह कह सकने की स्थिति में हो सकते हैं कि शिक्षण/अध्यापन के एक पेशे के तौर पर क्या मायने हैं और किस तरह एक पेशेवर अध्यापक शिक्षण कार्य को बेहतर ढंग से निष्पादित कर सकता है।

## व्यवसाय/पेशे की शर्तें और शिक्षक—एक पेशेवर के तौर पर

डोव्नी (1990) और केल्टरहेड (1994) की व्यवसाय/पेशे की अवधारणा के अनुसार किसी व्यवसाय/पेशे की आवश्यक शर्तें इस तरह हो सकती हैं—

- प्रशिक्षण और अनुभव के माध्यम से अर्जित विशेष ज्ञानाधार या नॉलेज बेस (यहाँ वास्तविक शर्त ‘विशेष-ज्ञान का आधार’ है, प्रशिक्षण और अनुभव तो उसे प्राप्त करने के तरीके हैं)।
- अपने प्रशिक्षुओं के साथ एक खास तरह का रिश्ता।
- पेशेवर (प्रशिक्षक) का अपने उपभोक्ताओं (प्रशिक्षुओं) से आगे जाकर जन नीतियों और न्याय के मुद्दों पर उस खास ज्ञान क्षेत्र के संबंध में ज्ञानाधार के आधार पर अपनी बात रखने का प्राधिकार (authority) (निर्णय लेने और समस्या के समाधान में उस ज्ञान क्षेत्र का प्रयोग)।
- राज्य और वाणिज्य के प्रभाव से उसके पेशेवर निर्णयों का स्वतंत्र होना।

केल्टरहेड और डोव्नी की अवधारणा को देखें तो कह सकते हैं कि किसी कार्य को पेशे की श्रेणी में रखने के लिए यह चारों शर्तें स्वतंत्र रूप से आवश्यक और एक साथ मिलकर पर्याप्त होती हैं।

शिक्षण को व्यवसाय/पेशे की श्रेणी में रखने के लिए आवश्यक है कि शिक्षण का काम इन ज़रूरी शर्तों को पूरा करता हो। यहाँ यह ध्यान में रखना ज़रूरी है कि उपरोक्त चारों आवश्यक अर्हताओं में से पहली शर्त अर्थात् प्रशिक्षण और अनुभव के माध्यम से अर्जित ज्ञानाधार ही अन्य तीन शर्तों के पालन का आधार बन सकती है।

## पेशेवर चिंतनशील अध्यापक का विकास

अध्यापक की पेशेवर तैयारी को लेकर अभिव्यक्त सरोकार भारतीय शिक्षा परिदृश्य में नए नहीं हैं और ये कोठारी कमीशन (1966) से लेकर शिक्षक शिक्षा हेतु राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा—2009 (एन.सी.एफ़.टी.ई.) तक समान रूप से ध्वनित होते नज़र आते हैं। प्रशिक्षित अध्यापकों के महत्त्व को समझने और उनकी उपलब्धता पर ज़ोर देने के बावजूद यह स्पष्ट है कि सिर्फ़ सेवापूर्व प्रशिक्षण ही किसी को अध्यापक के तौर पर स्थापित करने के लिए पर्याप्त नहीं है। शिक्षक शिक्षा, एक सतत प्रक्रिया है और सेवापूर्व और सेवाकालीन प्रशिक्षण इस शिक्षा की परिकल्पना के अभिन्न अंग हैं (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986–92)। इसी बात को ध्यान में रखते हुए सेवाकालीन प्रशिक्षणों की परिकल्पना की गयी थी। एक पेशेवर के तौर पर शिक्षक की तैयारी, अनुभव और प्रशिक्षण से आगे जाकर अपने अनुभवों, विचारों और कार्यों पर लगातार चिंतन, उनकी समीक्षा और चुनौतियों, असफलताओं और सफल कदमों से सीखने के सतत प्रयासों की माँग करती है अर्थात् पेशेवर के तौर पर स्थापित होने के लिए चिंतनशीलता (reflection) एक अनिवार्य शर्त के तौर पर उभरती

है। विभिन्न दस्तावेज जैसे एनसीएफ 2005 और एन.सी.एफ.टी.ई. 2009 पेशेवर, दक्ष और चिंतनशील शिक्षक के महत्त्व को रेखांकित करते हैं। धनकर (2013) के अनुसार चिंतनशील शिक्षक के विकास हेतु आवश्यक शर्तों को इस तरह देखा जा सकता है—

- **शिक्षा के आधारभूत क्षेत्रों की सैद्धांतिक समझ** — शिक्षा की अवधारणा और मानव जीवन में उसकी अहमियत; शिक्षा के दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र और सीखने के सिद्धांतों की समझ; पढ़ाये जाने वाले ज्ञान के क्षेत्रों की प्रकृति और शिक्षण प्रक्रिया की समझ।
- **रुझान** — शिक्षण प्रक्रिया और शिक्षार्थी पर उसके प्रभावों को समझना, विचारों को गंभीरता के साथ लेने और दृढ़ता के साथ रखना, तार्किक होने, साथ ही स्थापित तथ्यों और प्रिय सिद्धांतों से परे जाकर रचनात्मक होना, गहन विश्लेषण और स्वयं सीखने के प्रति रुझान होना।
- **मूल्य** — उदार और खुला मस्तिष्क, पुराने विचारों और स्थापित विचारों को जाँचने की हिम्मत और नए को अपनाने/रचने का साहस, पेशे के प्रति समर्पण और उसमें गर्व महसूस करना।
- **क्षमताएँ** — तार्किकता, पढ़ाने की व्यावहारिक क्षमता, शिक्षण में उपयोगी विभिन्न दक्षताएँ और नयी दक्षताएँ सीखने की क्षमता।

इन शर्तों को देखते हुए यह स्पष्ट है कि केवल विषय को पढ़ाने पर केंद्रित और चंद मॉड्यूल पर आधारित सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण शायद शिक्षक को एक चिंतनशील पेशेवर के तौर पर उभरने में मदद कर सकते हैं। चिंतनशील पेशेवर शिक्षक

की विकास यात्रा में शिक्षा के आधारभूत क्षेत्रों की सैद्धांतिक समझ के साथ ही शिक्षक में शिक्षण कर्म के प्रति रुझान/प्रवृत्ति, मूल्यों और क्षमताओं का विकास बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है।

### **शिक्षक सशक्तीकरण कार्यक्रम — एक प्रयास**

चिंतनशील शिक्षक की अवधारणा के उपरोक्त वैचारिक ढाँचे के अनुसार सेवाकालीन प्रशिक्षण का एक प्रयास दिगंतर संस्था द्वारा 2013 में राजस्थान के फागी ब्लॉक में किया गया था। ‘शिक्षक सशक्तीकरण कार्यक्रम’ एक ऐसा कदम था जिसकी संकल्पना में चिंतनशील पेशेवर शिक्षक की अवधारणा निहित थी। इस प्रयास में शिक्षकों के साथ जो आरंभिक काम हुआ वह बताता है कि अपनी शिक्षण प्रक्रिया के दौरान, प्रक्रिया के बाद में और शिक्षण के लिए किया गया चिंतन किस तरह एक शिक्षक को खुद की शिक्षण प्रक्रिया का आइना दिखाते हुए उन्हें इसमें बेहتری लाने में मदद कर सकता है। यह कार्यक्रम किन्हीं कारणों से अपने पूरे समय में नहीं चल पाया, अतः समग्रता में देखने पर इससे जो समझ बनती उनसे पेशेवर शिक्षक के विकास की प्रक्रिया पर अनुभवजन्य प्रमाणों के आधार पर कुछ नतीजे निकाले जा सकते थे। लेकिन इसके आरंभिक काल में भी चिंतनशीलता और शिक्षासिद्धांत के प्रति जागरूकता की एक झलक मिलती है। दूसरी बात जो नज़र आती है वह है शिक्षकों की स्वैच्छिक भागीदारी और साझा संवाद में रुचि।

### **कार्यक्रम की संकल्पना**

दिगंतर के ‘शिक्षा समर्थन कार्यक्रम’ ने इसी ब्लॉक में लगभग 5 वर्षों तक शिक्षकों को सक्रिय सहयोग



देते हुए उनमें अपनी शिक्षण प्रक्रिया को बेहतर बनाने और इस दिशा में सोचने के लिए एक रास्ता सुझाया था। इसकी समाप्ति के दौरान शिक्षकों के मन में एक बड़ा सवाल यह था कि शालाओं में दिखाई दे रहे सकारात्मक प्रभाव को संस्था के साथियों के सहयोग के बिना कैसे आगे बढ़ाया जा सकेगा। कार्यक्रम की एंडलाइन रिपोर्ट भी शालाओं में आये इस सकारात्मक परिवर्तन को सतत बनाये रखने के लिए कुछ कदम उठाने का सुझाव देती थी। इसी पृष्ठभूमि से ‘शिक्षक सशक्तीकरण कार्यक्रम’ की संकल्पना उपजी।

इस कार्यक्रम की संकल्पना एक सहभागितापूर्ण क्रियात्मक शोध के तौर पर की गई थी जो चिंतनशील शिक्षक की विकास यात्रा में शिक्षण पोर्टफोलियो और साझा संवाद की भूमिका/महत्त्व को समझने का प्रयास था। शिक्षण पोर्टफोलियो एंटीज में शिक्षक अपने कक्षा-कक्ष के अनुभवों, काम में लिए गए सिद्धांतों, अपनाई गई तकनीकों का विश्लेषण करते हुए साथियों के साथ साझा करते थे। वहीं साझा संवाद को पोर्टफोलियो एंटीज के विश्लेषण और समीक्षा करते हुए एक-दूसरे के अनुभवों से सीखने के मंच की तरह देखा गया था। यह माना गया था कि शिक्षण प्रक्रिया, पोर्टफोलियो लेखन और साझा संवाद तीनों एक-दूसरे को प्रभावित करते हुए चिंतनशील शिक्षक के विकास में योगदान दे सकेंगे। इस तरह का कोई भी प्रयास बिना शिक्षा तंत्र के सहयोग के संभव नहीं होता, इसलिए इसे मजबूती देने और साझा सीखने-सिखाने की इस संस्कृति को आगे बढ़ाने की संकल्पना के तहत ब्लॉक और जिला शिक्षा तंत्र के सदस्यों की सक्रिय साझेदारी

इस शोध परियोजना का अनिवार्य हिस्सा थी। शिक्षकों के न्यूज लेटर को सीखने-सिखाने को साझा करने के साथ ही ब्लॉक के विस्तृत शिक्षक समुदाय के साथ जुड़ने के कदम के तौर पर देखा गया था।

### **कुछ अनुभव और विवेचन**

शिक्षक सशक्तीकरण कार्यक्रम फागी की संकल्पना में यह शामिल था कि कार्यक्रम में शामिल सभी साथी साझा सीखने-सिखाने और चिंतनशीलता की तरफ बढ़ने की यात्रा के सहभागी होंगे। चिंतनशीलता एक सख्त और कठिन प्रक्रिया है और बहुधा यह आनंददायक नहीं होती है शिक्षक सशक्तीकरण कार्यक्रम के दौरान आने वाली चुनौतियाँ इस तरफ इशारा करती हैं कि चिंतनशीलता की तरफ बढ़ने के लिए शिक्षकों को किस तरह की अकादमिक मदद, शिक्षा तंत्र के सहयोग और चिंतनशीलता को पोषित करने वाले वातावरण की दरकार हो सकती है।

### **शिक्षकों की भागीदारी**

कार्यक्रम की शुरुआत में यह सोचना बहुत स्वाभाविक था कि सरकारी शिक्षक आखिर क्यों किसी ऐसे कार्यक्रम का हिस्सा बनेंगे जो न सिर्फ़ उनसे अधिक समय और परिश्रम की, बल्कि अपनी ही शिक्षण प्रक्रिया को सवालों के दायरे में लाकर उसके बारीक विश्लेषण की भी माँग करता हो।

शिक्षकों की प्रतिक्रियाएँ बताती हैं कि किसी कार्यक्रम के प्रति शिक्षकों के नज़रिए को दिशा देने में उनके पहले के प्रशिक्षण अनुभव अहम भूमिका निभा रहे होते हैं। जैसे — ‘हमारे विभागीय प्रशिक्षणों में तो करने के लिए बहुत कम ही कुछ होता है।’



यह उदाहरण संकेत देता है कि सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षणों का सच केवल शिक्षकों की भागीदारी में अरुचि नहीं है, बल्कि बहुत कम प्रशिक्षण ऐसे होते हैं जो शिक्षकों को चुनौतीपूर्ण ढंग से कुछ नया स्वयं सोचने, सीखने और करने के लिए उत्साहित कर पाते हैं और इस तरह से सीखने की सार्थकता को शिक्षण कार्य की सार्थकता से जोड़ पाते हैं।

कुछ शिक्षक कार्यक्रम और मासिक बैठक में तो शामिल होना चाहते थे, लेकिन अपनी शिक्षण प्रक्रिया पर पोर्टफोलियो एंट्रीज़ विकसित करने की बात उन्हें काफ़ी कठिन लग रही थी। जैसे एक अध्यापिका ने कहा, “ऐसा है न मैं किसी भी हालत में लिख नहीं सकती।”

यह अभिव्यक्ति इशारा करती है कि जब एक शिक्षक ही अपने आप को अभिव्यक्ति में इतना कमजोर मानकर अपने विचारों को अभिव्यक्त करने से हिचकता हो तो क्या वह बच्चों को ऐसे मौके मुहैया करवा पायेगा। ऐसी किसी कक्षा में भाषा, अभिव्यक्ति और विकास के बीच के आपसी संबंध और सीखने की प्रक्रिया में रचनात्मकता और मौलिक अभिव्यक्ति के महत्त्व को किस तरह से देखा जायेगा।

जब अधिकतर शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम ‘कैसे पढ़ाना’ को कुछ मॉड्यूल की सहायता से तयशुदा तरीके से समझाने का प्रयास करके प्रशिक्षण को सफल मान लेते हैं और उसे निर्धारित करने वाले तत्वों जैसे विषय की प्रकृति, इंसानी सीखना और बच्चे के संज्ञानात्मक विकास के साथ उसके संबंध पर शायद ही चर्चा होती है। तब ऐसे कार्यक्रम, जिसमें शिक्षक को अपनी खुद की अध्यापन प्रक्रिया को सवालों के

दायरे में लाकर इस पर न केवल लिखना था बल्कि आगे चर्चा भी करनी थी, में भागीदारी के लिए शिक्षकों को तैयार करना और फिर उस भागीदारी को बनाये रख पाना आसान नहीं था।

### **शिक्षण पोर्टफोलियो और साझा संवाद की भूमिका**

लंबे समय से शिक्षक की क्षमतावर्धन के लिए शिक्षण पोर्टफोलियो की अहमियत को स्वीकारा गया है और कई सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षणों में इसका प्रयोग करने के उदाहरण हैं। शिक्षण कार्य की समझ को बेहतर बनाने के साथ ही शिक्षकीय ज्ञान के स्रोत भी महत्वपूर्ण हैं। शोध बताते हैं कि यह अपने कक्षा-कक्ष के अनुभवों से समझ बनाने और उनमें बेहतरी लाने का माध्यम है। लेकिन इस तरीके की अपनी चुनौतियाँ हैं, जैसे — अकेले किया गया चिंतन खुद को भ्रमित करने या अपनी ही शिक्षण प्रक्रिया को प्रतिपुष्ट करने का माध्यम बन सकता है। हालाँकि, कार्लिले और जॉर्डन (2007) इस ओर इशारा करते हैं कि पोर्टफोलियो विकसित करना अपने ज्ञान, अनुभव को एक बड़े समुदाय में समीक्षा के लिए प्रस्तुत करने का अवसर देने के साथ ही साझा सीखने की ओर ले जाता है। यह शोध शिक्षण पोर्टफोलियो एंट्रीज़ और साझा संवाद की चिंतनशीलता और चिंतनशील शिक्षक के विकास प्रक्रिया में योगदान का विश्लेषण करते हुए इसके प्रमाण जुटाने का प्रयास था।

### **आरंभिक शिक्षण पोर्टफोलियो**

शिक्षण प्रक्रिया के सचेत विकास के लिए ज़रूरी है कि शिक्षक शिक्षण प्रक्रिया के पहले, अध्यापन के

दौरान और उसके बाद भी चिंतनशील रहकर अपने सीखने-सिखाने का विश्लेषण कर पाएँ और अपने कार्यों, विचारों के अध्यापन पर प्रभाव को लेकर लगातार जागरूक रह पाएँ। शिक्षकों की पोर्टफोलियो एंट्रीज बताती हैं कि उन्होंने सीमित अर्थों में ही अपनी शिक्षण प्रक्रिया को लेकर सोचना, उसके लिए योजना बनाना और कक्षा के बाद अपने शिक्षण अनुभवों को शब्दों में समेटना शुरू किया था।

शिक्षण के क्षेत्र में मेरे अनुभव : शिक्षण प्रक्रिया में मेरे इस कुछ संचय अनुभव रहे। जैसे खुणा के विद्यार्थी वाले फार्मेट में शिक्षार्थी कभी-कभी बस्ती व गैरबस्ती के अर्थ से खुणा करते समय उसके संख्यात्मक मान से ही पूरी संख्या को खुणा कर रहे थे लेकिन निर्देश के बाद उन्होंने गलती को मही खोजा।

45 x 38	
360	45 x 8
135	45 x 3
495	(गलती का उदाहरण)

### शिक्षण योजना

शिक्षकों की शिक्षण योजना का ढाँचा बहुधा हेर्बेर्तियन पाठ योजना से प्रेरित था, जो सेवापूर्व प्रशिक्षण के दौरान काम में ली जाती है। सभी शिक्षण पोर्टफोलियो में शिक्षण योजना बच्चे के पूर्व ज्ञान और पाठ के उद्देश्यों और बच्चों को उस विषय-वस्तु तक लाने के लिए कुछ प्रश्नों से शुरू होकर शिक्षण सामग्री के चुनाव, पाठ को पढ़ाने और फिर बच्चे के सीखे हुए को जाँचने के लिए कुछ प्रश्नों के वर्णन पर समाप्त होती थी। इससे यह जाहिर होता है कि सेवापूर्व प्रशिक्षणों के दौरान शिक्षण योजना को बनाने के पीछे के निहितार्थ अगर स्पष्ट न हों तो यह पूरी कवायद केवल शिक्षण प्रक्रिया की चरणबद्ध व्याख्या तक सीमित रह जाती है और शिक्षण योजना बनाने की प्रक्रिया में उससे सीखने-सिखाने के बारे में एक

विश्लेषित समझ के निर्माण और उसे काम में लेने की प्रवृत्ति और क्षमताओं के विकास का मूल उद्देश्य कहीं पीछे रह जाता है।

निकम-गणित, कक्षा-4, विद्यार्थी संख्या-9

उद्देश्य— बच्चों को नक्शा बनाना व समझना की क्षमता देना  
सह-उद्देश्य— दिशाओं का ज्ञान कराना, इसी के हिसाब से  
आसन खेचना, दोमे बोम का ज्ञान करना।

आवश्यक सामग्री—1. चॉक बोर्ड का सहयोग  
2. बच्चों को खंडों का दिशा ज्ञान कराना

काम का तरीका—1. स्वयं के द्वारा सेचने अवगत है और  
स्वयं के द्वारा का नक्शा बना कर दिखाना  
2. बच्चों से बनवाना।

सांग्रहीत तथ्य—1. बच्चों को नक्शा बनाना का शब्दों में  
2. बच्चों को खंडों का दिशा ज्ञान  
करवाना।  
3. चार बच्चे खंडों के  
ऊपर बच्चों से पत्रन कर  
जाते करना।

### चिंतनशीलता का तत्व

विभिन्न शिक्षाविदों के अनुसार चिंतनशीलता के आरंभ के लिए किसी समस्या/चुनौती का होना पहला कदम है। सिर्फ समस्या का होना बल्कि उसे समस्या की तरह पहचानना और उस समस्या के समाधान की पेशेवर ज़िम्मेदारी लेना चिंतनशीलता के लिए दूसरा महत्वपूर्ण कदम है। साथ ही समस्या के केंद्र को समझना और इस दिशा में प्रयास करना चिंतनशीलता की दिशा में आगे ले जाता है।

शिक्षक साथियों के शुरुआती पोर्टफोलियो एंट्रीज से पता चलता है कि किसी भी शिक्षक ने सीखने-सिखाने से संबंधित किसी चुनौती को समस्या के बतौर नहीं लिया, बल्कि शिक्षण उद्देश्य ही उनके लिए समस्या बतौर था और उस उद्देश्य की प्राप्ति

करना ही उसका समाधान। नीचे दिए गए उदाहरण यह दिखाते हैं कि सीखने के दौरान आने वाली किसी चुनौती को अधिकतर बच्चों के सीखने की क्षमता में कमी या असफलता के तौर पर देखा जाता है। शिक्षक विरले ही चिंतन कर अपने सिखाने के तरीकों में किसी कमी/समस्या के बारे में सोच पाते हैं। बच्चों के सीखने-सिखाने को लेकर ऐसा कोई भी दृष्टिकोण जिसमें सिखाने पर और सिखाने के लिए चिंतन शामिल नहीं है, वह बड़ी आसानी से शिक्षक को न सिर्फ अपने सिखाने के तरीके में होने वाली किसी समस्या या चुनौती को समझने से बरी कर देता है, बल्कि सीखने-सिखाने को प्रभावित करने वाले अन्य पहलुओं पर सोचने का मौका ही नहीं देता है (स्कॉन, 1983)।

हालाँकि, कुछ उदाहरण बताते हैं कि कुछ शिक्षकों ने बच्चों के अनुभवों को पठन-पाठन की प्रक्रिया में जगह दी और उनके परिवेश से संबंधित शिक्षण सामग्री तैयार करने का प्रयास किया था। जो दिखाता है कि कुछ शिक्षक अपनी शिक्षण प्रक्रिया पर सोचने के साथ ही आगे की योजना से संबंधित सरोकारों पर विचार कर उसके लिए अपने स्तर पर प्रयास कर रहे थे। जैसे — “मेरे समझाने में कठिनाई होने पर अध्यापकों से चर्चा करके मैंने इसे समझने की कोशिश की।”

लग गये / मानव संसाधन  
उलट पलट करने लगी उसके सेन्टीमीटर की  
समझ नहीं बन सकी। शिक्षक कितना भी  
उच्चरी तरह समझाए लेकिन कई बालकों  
के समझ में नहीं आता है। कई बालकों  
एक को देखकर कार्य करते हैं।

## चिंतनशीलता के लिए आवश्यक शर्तें व शिक्षण पोर्टफोलियो में उनकी झलक

शिक्षण पोर्टफोलियो के लिखित रूप में मौजूद होने के कारण यह चिंतनशीलता की तरफ ले जाने का बेहतर माध्यम साबित हो सकता है, जिसमें एक पेशेवर अपनी कमियों, मान्यताओं के विरोधाभासों और सिद्धांतों में समझ की अस्पष्टता को आसानी से पकड़ सकता है। जैसे जो शिक्षक आनंददायी शिक्षा, परिवेश से सीखना और विद्यार्थियों से चर्चा को बढ़ावा देने की बात कह रहे थे, वे ही आगे जाकर अपनी पोर्टफोलियो एंट्री में अभ्यास और रटने पर ज़ोर देते नज़र आते हैं। यह बताता है कि शैक्षिक विमर्श में प्रचलित शब्दावली की जानकारी को चिंतन और कर्म का आधार बनने में समय लगता है और यह प्रक्रिया अपनी शिक्षण प्रक्रिया से सीखने का अवसर देने वाले वातावरण की माँग करती है।

## सीखना-सिखाना और शिक्षण विधि

सीखना-सिखाने में शिक्षक की भूमिका, विद्यालय सीखने के जगह के तौर पर, बच्चे के सीखने और सीखने में परिवेश के महत्त्व, शिक्षक-बच्चे और समाज के बीच के संबंध को लेकर शिक्षकों की अवधारणाओं, मान्यताओं और समझ की झलक उनकी शिक्षण पोर्टफोलियो एंट्रीज़ में दिखाई देती है। ये समझ और मान्यताएँ शिक्षकों की योजना, शिक्षण विधि और शिक्षण कार्य को निर्धारित करने में अहम भूमिका निभाती हैं। ‘समझाया, सिखायेंगे, जानकारी देना, ज्ञान कराना, अध्ययन करवाया।’ ये वे शब्द हैं जो सीखने के संदर्भ में शिक्षण पोर्टफोलियो में अक्सर प्रयोग में लिए गए हैं। ‘अभ्यास कराना,

बताना, ज्ञान कराना, कार्य को बार-बार करवाने से परिपक्वता, दोहराना' जैसे शब्दों का बहुतायत में प्रयोग कक्षा में सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में दोहराने के महत्त्व को बताता है। ये शब्द या वाक्यांश कक्षा में सीखने-सिखाने की प्रक्रिया, शिक्षक की भूमिका और शिक्षक-छात्र संबंध के बारे में शिक्षक की मान्यताओं की तरफ इशारा करते हैं। शिक्षक की अध्यापन योजना और कार्य इन मान्यताओं से संचालित होते हैं। किसी अवधारणा या पाठ्यवस्तु को सीखने के उद्देश्य को लेकर शिक्षक न केवल उस पाठ्यवस्तु को सीखने-सिखाने के तरीकों को बल्कि अध्यापन में प्रयोग में ली जाने वाली शिक्षण सामग्री को भी तय करते हैं। उदाहरण के लिए, बच्चों को घरों के बारे में जानकारी देना, बच्चों को नक्शा बनाने और समझने की जानकारी देना।

ये उदाहरण किसी पाठ्यवस्तु को सीखने-सिखाने के दौरान उभरने वाले उस अंतर्विरोध को सामने लाते हैं जो विषय की प्रकृति और उसमें ज्ञान निर्माण

के तरीकों की स्पष्ट समझ न होने और विषय को केवल पाठ्यक्रम का हिस्सा मानकर पढ़ाने के दौरान उपजती हैं।

उपरोक्त सामुदायिक चर्चा से समस्याओं को सुलझाने के उद्देश्य के साथ शुरू हुआ पाठ इस सहउद्देश्य के साथ आगे बढ़ता है कि परिवार के ज्यादातर सदस्य जिस बात पर सहमत हों वही फैसला ठीक रहता है। लेकिन फैसले लेने के लिए आवश्यक क्षमताओं, समझ के विकास और कोई फैसला सही क्यों माना जा रहा है, इसके बारे में हो सकने वाली किसी चर्चा का उल्लेख नहीं होता।

होशियार बच्चे, कमजोर बच्चे, कमजोर स्तर वाले बच्चे, पिछड़ गए बच्चे और अशिक्षित माँ-बाप, जैसे शब्दों का प्रयोग इंगित करता है कि शिक्षण योजना बनाते समय शिक्षक के मन में स्थापित मान्यताएँ सीखने-सिखाने को एक खास दिशा प्रदान करती हैं। इनके निहितार्थ को समझने का प्रयास तभी हो सकता था जब शिक्षक अपनी मान्यताओं और

उसके शिक्षण कार्य पर असर होने को लेकर सचेत रह पाएँ।

बच्चे के विकास और सीखने की प्रक्रिया की समझ कक्षा शिक्षण को बेहतर बनाने में योगदान देती है। इसके लिए शिक्षा के समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य और बच्चे के परिवेश का ज्ञान जरूरी है। साथ ही बच्चों के सीखने की जरूरतों को

पाठ [14] कौन ली फैसला

उप-इकाई : किस स्कूल में पढ़ेगा सुरेश?

विषय : परिवार

कक्षा : 4<sup>th</sup>

विचारणीय : 14

उद्देश्य : परिवार में सामुदायिक चर्चा से समस्याओं को सुलझाने की समझ विकसित करना।

सह-उद्देश्य : परिवार के ज्यादातर सदस्य जिस बात पर सहमत हो वही फैसला ठीक रहता है।

आवश्यक सामग्री : एक सामुदायिक परिवार का एक चार्ट जिसमें सभी सदस्यों के चित्र हों। किसी विशेष आवश्यकता वाले छात्र, छात्रा का चित्र जो आधिकारिक रूप से या पूर्ण रूप से

पूरा करने के लिए बच्चे के पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश को ध्यान में रखते हुए शिक्षण योजना बनाने की ज़रूरत होती है। सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम इस समझ के निर्माण के लिए महत्वपूर्ण पड़ाव की तरह काम कर सकते हैं।

### आकलन और सीखना

सभी शिक्षण पोर्टफोलियो में शिक्षण योजना के क्रियान्वयन के बाद एक हिस्सा बच्चे के सीखने को जाँचने का था। लगभग सभी शिक्षकों की अंत में टिप्पणी थी कि बच्चों को सीखने में आनंद आया और बच्चे पाठ सीख गए हैं। लेकिन किसी भी शिक्षक ने सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में खुद के सीखने के बारे में कोई बात नहीं की। यह इस तरफ भी इशारा करता है कि आकलन प्रक्रिया को सिर्फ बच्चे के सीखने को जाँचने और उसमें सुधार के साधन की तरह ही देखा जाता है, पर इस माध्यम से शिक्षक की अपनी शिक्षण प्रक्रिया की कमियाँ, चुनौतियाँ भी सामने आ सकती हैं इस पर कम ही ध्यान दिया जाता है।

दिनांक 13-11-14 को पुनः उसी मन्त्रालय पर विचार का (पुनः) प्रश्न करवाया गया जिसमें बच्चों के सीखने की प्रक्रिया की अधिकतर बच्चे 100% सफलता से कर पाये और बच्चों में शिक्षण प्रक्रिया में बच्चों को 100% या 80% सफलता मिलती है।

स्कूलों के अवलोकन और पिअर ग्रुप मीटिंग के दौरान भी शिक्षक इस बात पर ज़ोर दे रहे थे कि डंड बच्चे को सिखाने का प्रभावी माध्यम है और शिक्षा का अधिकार अधिनियम — 2009 के कारण बच्चों को सिखाने में उन्हें कठिनाइयाँ आती हैं। यह बताता है कि जब तक नीतियों के पीछे की

अवधारणाओं पर व्यापक बातचीत कर उनके बारे में समझ बनाने का प्रयास नहीं किया जायेगा, तब तक शिक्षा में सुधार के प्रयासों को शिक्षक केवल ऊपरी तौर पर ही अपना पाएँगे।

### पिअर ग्रुप मीटिंग की कुछ झलकियाँ

चिंतनशीलता की प्रक्रिया में आत्मविश्लेषण बेहद अहम है लेकिन साझा संवाद के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता। क्रिटिकल फ्रेंड या चिंतनशील कर्ता की उपस्थिति को चिंतनशीलता की तरफ बढ़ने के लिए एक अहम कारक के तौर पर देखा गया है। साझा संवाद ऐसा ही मंच है जो शिक्षकों को अपनी शिक्षण प्रक्रिया का विश्लेषण करते हुए चिंतनशीलता के लिए आवश्यक शर्तों को समझने, आत्मसात करने और साथ-साथ सीखने का अवसर प्रदान कर सकता है। चिंतनशीलता की तरफ सतत बढ़ते रहने के लिए अन्य पेशेवरों के साथ संवाद के अवसरों की ज़रूरत होती है। हालाँकि इस माध्यम के साथ समूह के बीच की आपसी साँठ-गाँठ और सदस्यों की एक-दूसरे पर अतिनिर्भरता जैसी चुनौतियाँ सामने आ सकती हैं। लेख में आगे शिक्षकों के साथ हुए साझा संवादों और उनकी चुनौतियों तथा चिंतनशील पेशेवर शिक्षक के विकास में इसकी अहमियत की तरफ इशारा किया गया है।

### संवाद की प्रकृति

संवाद किसी सामाजिक परिवेश में चिंतन का सीधा प्रयास होता है जहाँ लोगों की मान्यताओं, मूल्यों को चुनौती दी जा सकती है और लोगों के पास साझा करने और उनका बचाव करने के अवसर होते हैं।



लेकिन इस तरह की वैचारिक पड़ताल के लिए आपसी विश्वास, अपने विचारों की ज्ञानशास्त्रीय ज़िम्मेदारी लेना, व्यक्ति को अलग रखते हुए विचार को समझना और प्राधिकार (authority) से स्वतंत्रता जैसे मूल्यों का होना ज़रूरी हो जाता है (धनकर, 2013)। चूँकि, साझा संवाद इस कार्यक्रम का अहम हिस्सा था इसलिए यह बहुत ज़रूरी था कि सभी भागीदार चिंतनशीलता के लिए संवाद की प्रकृति को समझकर उसे सीखने-सिखाने वाले माध्यम के तौर पर इस्तेमाल कर पायें।

साझा संवाद का हर सत्र शिक्षक साथियों के एक समूह की तरह उभरने, शिक्षण क्रिया पर समालोचनात्मक दृष्टि रखते हुए एक-दूसरे से सीखने का अवसर था। हालाँकि, पहली बैठक में कुछ साथियों की अधिक भागीदारी दूसरों को बात कहने का पर्याप्त अवसर नहीं दे रही थी। शिक्षण पोर्टफोलियो एंट्रीज़ साझा करने के बाद कुछ शिक्षकों की टिप्पणियों ने अन्य शिक्षकों को आहूत किया, क्योंकि संवाद में समालोचना की बजाय स्वयं को बेहतर साबित करने और दूसरों को कम सक्षम बताने का भाव अधिक था। लेकिन इसके बाद की दूसरी बैठक में, जहाँ सभी शिक्षक साथियों ने अपनी पोर्टफोलियो एंट्रीज़ को साझा किया था, शिक्षकों का एक-दूसरे के कामों को लेकर सकारात्मक रूख दिखा।

### अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण और शिक्षा तंत्र का सहयोग

किसी को जबरदस्ती चिंतनशीलता की तरफ नहीं ले जाया जा सकता है। लेकिन चिंतनशीलता के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ और संरचनाओं की उपलब्धता

इस तरफ बढ़ने में मदद करती है (सेनेस, 2007)। चिंतनशील पेशेवर शिक्षक के विकास के लिए ऐसे वातावरण का निर्माण भी अनिवार्य है जो शिक्षकों को चिंतनशीलता के लिए आवश्यक शर्तों को स्वयं में विकसित करने का अवसर दे। साथ ही स्वयं शिक्षा तंत्र को भी चिंतनशील और जवाबदेह होना होगा। पिअर ग्रुप मीटिंग के किसी भी सत्र में डाइट या संकुल से किसी सन्दर्भ व्यक्ति का न होना इस तरफ भी इशारा करता है कि प्रशिक्षण के काम में संलग्न सदस्य शिक्षकों के साथ होकर सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में बेहतरी लाने की योजनाएँ बनाने में कम ही रुचि ले पाते हैं। शिक्षा में बेहतरी लाने का दावा करने वाली नीतियों के निर्माण और क्रियान्वयन पर ज़ोर देने के साथ ही यह ध्यान में रखना ज़रूरी है कि ऐसा वातावरण, जो प्रश्न करने की स्वतंत्रता, तार्किकता और संवेदनशीलता के साथ स्थापित मान्यताओं को तर्क की कसौटी पर कसने के बाद स्वीकारने या खारिज करने की गुंजाइश रखता हो, वही शिक्षकों को चिंतनशील कार्यकर्ता के तौर पर उभरने में हरसंभव मदद कर सकता है।

### समेकन

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 सेवाकालीन प्रशिक्षणों को शिक्षण प्रक्रिया में बदलाव ला सकने वाला महत्वपूर्ण कारक मानती है। लेकिन ऐसा कोई भी प्रशिक्षण कार्यक्रम पेशेवर चिंतनशील शिक्षक की अवधारणा और उसके विकास के लिए ज़रूरी कारकों को ध्यान में रखे बिना शिक्षा में बदलाव लाने की कल्पना नहीं कर सकता। पेशेवर चिंतनशील अध्यापक बनने की प्रक्रिया केवल सेवापूर्व प्रशिक्षणों तक सीमित नहीं हो सकती। बल्कि यह एक सतत

प्रक्रिया है जो कक्षा शिक्षण से लेकर सेवाकालीन प्रशिक्षणों तक विस्तृत है। इसके साथ ही यह माँग करती है कि प्रशिक्षण कार्यक्रमों की संकल्पना न सिर्फ शिक्षक के लिए आवश्यक ज्ञान क्षेत्रों तक सीमित हो बल्कि ऐसे वातावरण का निर्माण भी इसमें शामिल हो जो शिक्षकों को शिक्षण के लिए आवश्यक रुझानों, मूल्यों और क्षमताओं के विकास का अवसर दे। ऐसे

प्रशिक्षणों की परिकल्पना और वातावरण के बिना पेशेवर चिंतनशील शिक्षकों के विकास की कल्पना नहीं की जा सकती और शिक्षक की क्षमतावर्धन के लिए आयोजित होने वाले प्रशिक्षण कार्यक्रम उन्हें केवल तयशुदा पाठ्यक्रम को एक निर्धारित तरीके से पूरा करने की दिशा में काम करते रहने वाले शिक्षकों के तौर पर ही तैयार करते रहेंगे।

## संदर्भ

- एडवर्ड्स, ए. एवं डी. ब्रूनटन, 1993. 'स्पोर्टिंग रिफ्लेक्शन इन टीचर्स लर्निंग'. *कंसैप्टुलाइजिंग रिफ्लेक्शन इन टीचर डेवलपमेंट*. जे. कैल्डरहेड और पी. गेट्स (संपा.). फाल्मेर, लंदन. पृ. 154–166.
- एन.सी.ई.आर.टी. 2005. *नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क 2005*. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- . 2010. *नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क 2005*. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- ओ' फैरेल, सी. (संपा.). 2007. *टीचिंग पोर्टफोलियो प्रैक्टिस इन आयरलैंड — ए हैंडबुक*. डबलिन.
- कैल्डरहेड, जे. 1994. 'टीचिंग एज ए 'प्रोफेशनल' एक्टिविटी'. *टीचिंग एंड लर्निंग इन द सेकंडरी स्कूल*. राउटलैज. पृ. 143–137.
- कार्लिले, ओ. एवं ए. जोर्डन, 2007. 'रिफ्लेक्टिव राइटिंग — प्रिंसिपल्स एंड प्रैक्टिस'. *टीचिंग पोर्टफोलियो प्रैक्टिस आयरलैंड — ए हैंडबुक*. ओ' फैरेल, सी. (संपा.) eprints.teachingandlearning.ie/3430/1/o'farrell2007Teaching\_Portfolio\_Practice\_in\_Ireland(1).pdf पर ऑनलाइन देखा गया।
- कोहेन-सयाग, ई. एवं डी. फिस्चल 2012. 'रिफ्लेक्टिव राइटिंग इन प्री-सर्विस टीचर्स टीचिंग — व्हाट डज़ इट प्रोमोट?' *आस्ट्रेलियन जर्नल ऑफ़ टीचर एजुकेशन*, 37(10). <http://ro.ecu.edu.au/cgi/viewcontent.cgi?article=1592&context=ajte> पर ऑनलाइन देखा गया।
- गवर्मेंट ऑफ़ इंडिया. 1966. *रिपोर्ट ऑफ़ दि एजुकेशन कमीशन, 1964–66* — एजुकेशन एंड नेशनल डेवलपमेंट. गवर्मेंट ऑफ़ इंडिया प्रेस. [krishikosh.egranth.ac.in/bitstream/1/2041424/1/ccs270.pdf](http://krishikosh.egranth.ac.in/bitstream/1/2041424/1/ccs270.pdf) पर ऑनलाइन देखा गया।
- गवर्मेंट आफ़ इंडिया. 1986. *नेशनल पॉलिसी ऑन एजुकेशन — 1986*. डिपार्टमेंट ऑफ़ एजुकेशन, मिनिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमन रिसोर्स डेवलपमेंट, नयी दिल्ली.
- डाउनी, आर. 1990. 'प्रोफेशन एंड प्रोफेशनलिज्म'. *जरनल ऑफ़ फिलोसॉफी ऑफ़ एजुकेशन*, 24 (2), 147-159. <https://onlinelibrary.wiley.com/doi/abs/10.1111/j.1467-9752.1990.tb00230.x> पर ऑनलाइन देखा गया।
- डेवे, जे. 1910. 'हाऊ वी थिंक'. *डी.सी. हेल्थ एंड को. बोस्टन*. डी.सी. <http://rci.rutgers.edu/~tripmcc/phil/dewey-hwt-pt1-selections.pdf> पर ऑनलाइन देखा गया।

- बैरेट, एच.सी. 'द रिसर्च ऑन पोर्टफोलियोज़ इन एजुकेशन'. <http://electronicportfolios.org/ALI/research1.html> पर ऑनलाइन देखा गया।
- ब्रॉकबैंक, ए., एवं आई. मैकगिल, 1998. *फ़ेसिलिटिंग रिफ़्लेक्टिव लर्निंग इन हायर एजुकेशन*. दूसरा संस्करण. सोसायटी फ़ॉर रिसर्च इनलच हायर एजुकेशन एंड ऑपन यूनिवर्सिटी प्रैस, बर्किंगहम.
- रोज़र्स, सी., 2002. 'डिफ़ाइनिंग रिफ़्लेक्शन — एनादर लुक एट जॉन डीवे एंड रिफ़्लेक्टिव थिंकिंग, टीचर कॉलेज रिकॉर्ड. टीचर्स कॉलेज, कोलंबिया यूनिवर्सिटी. पृ. 842–866.
- लॉफ़रन, जे.जे. 2006. *डेवलपमेंट ए पेडागॉजी ऑफ़ टीचर एजुकेशन — अंडरस्टैंडिंग टीचिंग एंड लर्निंग एबाउट टीचिंग*. रूटलैज, लंदन.
- स्कॉन, डी. 1983. *द रिफ़्लेक्टिव प्रैक्टिशनर — हाऊ प्रोफ़ेशनल्स थिंक इन एक्शन*. बेसिक बुक्स, न्यूयार्क.
- सेनेस, जे. 2007. 'प्रोवाइडिंग द नेसेसरी लम्ब्रीज़ फ़ॉर टीचर रिफ़्लेक्शन'. *इनेकिंग ए पेडागॉजी ऑफ़ टीचर एजुकेशन — वैल्यूज, रिलेशनशिप्स एंड प्रैक्टिसिस*. टी. रुसेल और जे. लॉफ़रन (संपा.), रूटलैज, यूनाइटेड किंगडम.
- हैनैट्टी, ओ., एवं ओ'फ़ैरेल, सी. 2007. 'रिफ़्लेक्टिव टीचिंग पोर्टफ़ोलियो फ़ॉर कंटीन्युअस प्रोफ़ेशनल डेवलपमेंट एट ट्रिनिटी कॉलेज डबलीन' यूनाइटेड किंगडम. [https://www.researchgate.net/publication/237301669\\_Reflective\\_Teaching\\_Portfolios\\_for\\_Continuous\\_Professional\\_Development\\_at\\_Trinity\\_College\\_Dublin](https://www.researchgate.net/publication/237301669_Reflective_Teaching_Portfolios_for_Continuous_Professional_Development_at_Trinity_College_Dublin) पर ऑनलाइन देखा गया।
- हैरिस एट. एल. एवं ए. एस. 2010. *एक्ज़ामिंग एंड फ़ेसिलिटेटिंग रिफ़्लेक्शन टू इंप्रूव प्रोफ़ेशनल प्रैक्टिस*. रॉवमैन एंड लिटिलफील्ड पब्लिशर्स, यूनाइटेड किंगडम.



## अध्यापक शिक्षा पर 'शिक्षा का अधिकार अधिनियम' का प्रभाव

उषा शुक्ला\*

‘शिक्षा अधिकार’ की सार्वभौम घोषणा के साथ-साथ शिक्षा-जगत में हो रहे परिवर्तन अध्यापक-शिक्षा के संबंध में पुनर्विचार करने की आवश्यकता अनुभूत करा रहे हैं, क्योंकि अध्यापक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2009 की संकल्पना को समुचित आधार प्रदान करने तथा आधुनिक संदर्भों को आत्मसात् करने के लिए यह आवश्यक हो गया है कि हमारे शिक्षक बहुआयामी हों।

कल और आज के परिप्रेक्ष्य में शिक्षक की भूमिका के संबंध में तुलनात्मक विश्लेषण करते हुए शिक्षक-शिक्षा की आवश्यकतानुरूप रणनीति बनाना आवश्यक हो गया है। सर्वप्रथम इस बात पर विचार करना आवश्यक है कि हम कैसे शिक्षक चाहते हैं? विभिन्न शिक्षाशास्त्रियों तथा मनोवैज्ञानिकों के मतों का अध्ययन करने के उपरान्त प्रशिक्षण की प्रभावी

योजना बनाई जाएँ, जो तीन स्तरों पर शिक्षक को मार्गदर्शन प्रदान कर सकें।

- सेवापूर्व प्रशिक्षण
- सेवाकालीन प्रशिक्षण
- आवश्यकतानुरूप समर्थन — इस प्रशिक्षण कार्यक्रम का संभावित स्वरूप इस प्रकार निर्धारित किया जा सकता है —

- संगोष्ठी
- पत्राचार
- समूह चर्चा
- सतत संवाद
- आभासी स्वरूप
- सेवाकालीन प्रशिक्षण

**प्रारूप**



- सूचना के स्थान पर प्रयोग
- नवीन विषयवस्तु
- सतत मूल्यांकन
- फ़ीडबैक
- खंड प्रशिक्षण
- व्यावहारिकता
- नई तकनीक

**प्रबंधन**



- विषयवार शिक्षक समूह
- पिरामिडीय शिक्षक समूह
- अनुभव हस्तांतरण
- मेंटर्स-प्रणाली
- एकीकृत शिक्षक मंच

**समर्थन**



\* प्रवक्ता, डाइट, 1418 आनंद कॉलोनी, बलदेव बाग, जबलपुर, मध्य प्रदेश

समय की माँग, परिस्थितियों के प्रभाव और विज्ञान के विस्तार ने ज्ञान की नई परतें खोल दी हैं। अथ से इति तक प्रासंगिकताएँ और भूमिका भी बदली हैं।

गुरुमुख से सुनी गई ऋचाओं को आत्मसात् करने वाले शिष्यों के सामने सूचनाओं का मायावी संसार खुला पड़ा है। ऐसी स्थिति में स्वाभाविक है कि शिक्षक को बहुआयामी बनना ही पड़ेगा।

अध्यापक शिक्षा का ज्ञानाधार क्या हो? इस बिंदु पर विचार करने के पूर्व हमें अब की भूमिकाओं/प्रासंगिकताओं के संबंध में नए सिरे से सोचना होगा।

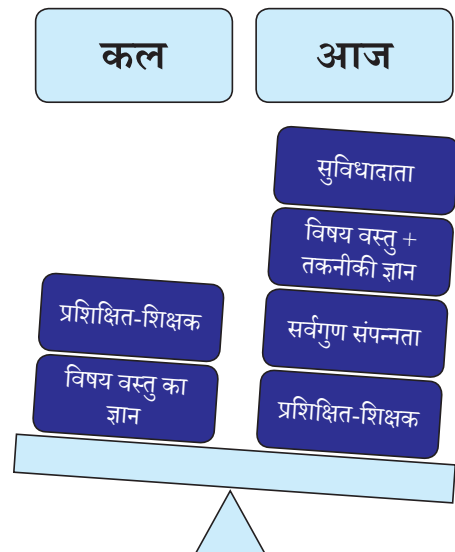
### बदलाव के बिंदु

शिक्षकों को साँच्चों के द्वारा अथवा किन्हीं कर्मशालाओं में नहीं गढ़ा जा सकता। इनकी अभिवृत्तियों का विकास हमारे प्रशिक्षण संस्थानों में ही किया जा सकता है। पूर्णतः समर्पित शिक्षक इस सदी की आवश्यकता है। शासकीय प्रशिक्षण संस्थानों के साथ-साथ निजी प्रशिक्षण संस्थानों की संख्या में तीव्रता से वृद्धि हुई है, किंतु आवश्यकता इस बात की है कि इन संस्थानों का पुनर्नवीकरण, आदर्श, भौतिक और मानवीय संसाधन, विविध उपकरण, अनुकूल परिवेश और दक्ष शिक्षक-प्रशिक्षकों की आपूर्ति ही इन संस्थानों को सही स्वरूप प्रदान कर सकेगी।

### अध्यापक शिक्षा

‘शिक्षा के अधिकार’ की सार्वभौम घोषणा के साथ-साथ परिवर्तन की जो लहर उठी है उसने अध्यापक-शिक्षा को भी कई आयाम दिए हैं क्योंकि अध्यापक शिक्षा के लिए *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा — 2009* की संकल्पना को समुचित आधार

प्रदान करने तथा आधुनिक संदर्भों को आत्मसात् करने के लिए निम्नलिखित परिवर्तन आवश्यक हैं —



- प्रशिक्षक केंद्रित प्रशिक्षार्थी केंद्रित
- निष्क्रिय शिक्षक सक्रिय भागीदारी
- कक्षागत सीमाएँ व्यावहारिक संदर्भ
- ज्ञान बनाम सूचना अनुभव ज्ञान
- बाह्य अनुशासन स्वायत्तता/अनुशासन
- रैखिक अनुभव बहुविध अनुभव
- परंपरागत पाठ्यचर्या नवीन परिवर्तनशील पाठ्यचर्या
- परंपरागत प्रविधियाँ नवीन प्रविधियाँ/प्रशिक्षण मॉडल

- समयबद्ध मूल्यांकन  
बहुविध सतत मूल्यांकन
- निर्धारित प्रशिक्षण कार्यक्रम  
आवश्यकता आधारित प्रशिक्षण
- परंपरागत पर आधारित  
प्रौद्योगिकी पर आधारित
- नियम पालन पर बल  
अनुसंधान/नवाचार पर बल

सूचना एवं प्रौद्योगिकी के विकास के उपरांत जन्मी वैचारिक क्रांति को आधार प्रदान करने एवं मानवीय मूल्यों की पुनः स्थापना करने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षकों का अभिवृत्त्यात्मक विकास किया जाए।

भारत के भावी 'कल' के निर्माता को 'आज' का सक्रिय आश्वासन देने के लिए क्रमशः राष्ट्र समाज और शिक्षक-प्रशिक्षकों के द्वारा सक्रिय पहल करने की आवश्यकता है। यह आश्वासन तीन रूपों में दिया जा सकता है—

1. सेवापूर्व प्रशिक्षण
2. सेवाकालीन प्रशिक्षण
3. आवश्यकतानुरूप समर्थन

शिक्षा का अधिकार अधिनियम की घोषणा के उपरांत समूचे शिक्षा जगत में एक हलचल-सी मची हुई है। खेतों, ढाबों, खलिहानों और गैरेजों में पसीना बहाने वाले राष्ट्र के नौनिहालों को शिक्षालय तक खींचकर लाना और सत्र पर्यंत शाला में रोके रखकर दक्षतासंपन्न बनाना एक बहुत बड़ी चुनौती है।

शिक्षकों को कैसे ज़िम्मेदार बनाया जाए। कैसे उन्हें प्रशिक्षित किया जाए कि वे अपनी

शिक्षण पद्धति को रोचक बनाएँ और शालाओं को सुन्दर बनाएँ।

शालाओं की वास्तविक स्थिति बहुत खराब है। कुर्सियों पर जमे हुए अथवा लेखन कार्य करते हुए शिक्षक महोदय और विद्यार्थी... यंत्रवत् बारह खड़ी, पहाड़े या कविताएँ रटते हुए या फिर चित्रों की भाँति पाठ्यपुस्तक के शब्दों को कॉपी पर उतारते बच्चे जड़ता, सुस्ती और अन्यमनस्कता की तस्वीर प्रस्तुत करते हैं।

5 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के लगभग अठानवे प्रतिशत बच्चे नामांकित हो चुके हैं... किंतु इस बात की क्या गारंटी है कि ये सभी आठवीं की शिक्षा आवश्यक दक्षताओं के अधिग्रहण के साथ-साथ अनिवार्यतः शिक्षा पूर्ण कर सकेंगे।

अध्यापक शिक्षा की योजना तो वर्षों से बन रही है। देखते ही देखते स्वतंत्रता प्राप्ति के कई वर्षों के बाद भी अभी तक प्रशिक्षक और प्रशिक्षणार्थियों के मध्य आपसी संवाद स्थापन संभव नहीं हो सका है।

पाश्चात्य विद्वान हैसेट के अनुसार शिक्षकीय अभिप्रेरणा के प्रतिमानों का विकास प्रत्येक प्रशिक्षण में आवश्यक है—

- प्रशिक्षण के माध्यम से शिक्षक को इतना जागरूक बनाया जाए कि वह स्वतः अपना उद्देश्य निर्धारण करे।
- उसे इस बात का अभ्यास कराया जाए कि वह प्रत्येक विद्यार्थी के प्रति आशान्वित व्यवहार करे।
- प्रत्येक शालेय गतिविधि और व्यवहार पारदर्शी हो।
- कक्षाध्यापन में विभिन्न शिक्षण-प्रतिमानों का प्रयोग करने की क्षमता का विकास हो।

- शिक्षकीय पेशे के प्रति अनुकूल अभिवृत्ति (पसंदगी) विकसित हो।
- स्वाध्याय, चिंतन, नवाचार की चेतना जाग्रत हो।

## शिक्षा का अधिकार

राष्ट्र एक जीवंत संज्ञा है। धरातलीय उच्चावच तथा भौगोलिक पृष्ठभूमि से नहीं वरन्, प्राणियों से मिलकर राष्ट्र बनता है। यह मानव-समुदाय जितना जागरूक, जितना ज्ञानवान और जितना सक्रिय होगा विश्व पटल पर राष्ट्र उतना ही गौरवान्वित होगा।

शिक्षा व्यक्ति की आंतरिक शक्तियों का उद्घाटन करने के साथ-साथ उसे सक्रिय और जागरूक भी बनाती है संभवतः इसीलिए हमारे पूर्वजों ने नव स्वतंत्र राष्ट्र की संविधान सभा में ही उद्घोषणा की थी — 6 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार होगा। लगभग आधी सदी बीत जाने के उपरांत भी हम अपने लक्ष्य को हासिल न कर सके तो भारत सरकार ने सन् 2002 की अनुशंसा के आधार पर जुलाई 2009 में शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार में सम्मिलित कर लिया। धर्म, लिंग, जाति, वर्ग और प्रांत का भेदभाव किए बिना अब शिक्षा प्रत्येक बच्चे का अधिकार है। इस अधिकार की अभिप्राप्ति की दिशा में निम्नलिखित बिंदुओं को दृष्टिगत रखा गया —

- विद्यार्थियों को सिखाने का सतत अभ्यास एवं सीखने की ललक जगाना।
- सार्थक दृष्टिकोण का विकास।
- समुचित निष्पादन हेतु मूल्यांकन प्रक्रिया को प्रभावी और परिणाममूलक बनाना।

- विद्यार्थियों को शिक्षा उपलब्ध कराने में परिवार एवं समुदाय की सक्रिय भूमिका।
- कक्षा कक्ष में समानता को समर्थन प्रदान करना।
- प्रगति का आकलन तथा समस्याओं का स्थल पर ही निपटारा।
- स्थानीय प्रशासकों का सहयोग लेना।

## निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा

यहाँ निःशुल्क से तात्पर्य — किसी भी बच्चे द्वारा ऐसी कोई फ़ीस/शुल्क/व्यय देय नहीं होगा जो उसकी प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण करने में बाधक हो। विधेयक के प्रावधानों के तहत इस आयु वर्ग (6–14 वर्ष) के बच्चों का शत-प्रतिशत नामांकन, शत-प्रतिशत उपस्थिति तथा शत-प्रतिशत बच्चों को प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण कराने की संवैधानिक अनिवार्यता राज्य सरकार की है। पालकों के लिए मूलभूत दायित्व में इसे सम्मिलित किया गया है। अप्रवेशी एवं शाला त्यागी बच्चों के लिए भी रणनीति निर्धारित की गई है, ताकि प्रत्येक बच्चा प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण कर सके।

भारत गाँवों का देश है और आज भी इसकी आबादी का इकहत्तर प्रतिशत अंश ग्रामीण है जो अज्ञान, अंधविश्वास और पिछड़ेपन के अँधेरों में घिरा हुआ है। इस घनघोर अँधेरे में ‘शिक्षा का अधिकार’ नामी अग्निशलाका को हाथ में लेकर चलना एक बहुत बड़ी चुनौती है।

इस बात की भी कोई संभावना नहीं है कि पदस्थ सभी शिक्षक-शिक्षिकाएँ अभिक्षमता से युक्त हैं क्योंकि जन साधारण में एक बात अकसर सुनने को मिल जाती है कि जिसे तलाशने पर अन्य क्षेत्रों

में रोज़गार के अवसर नहीं मिल पाते वे ही व्यक्ति शिक्षकीय पेशे को अपनाते हैं।

### **अध्यापक शिक्षा — राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा के संदर्भ में**

1. शिक्षक शिक्षा की पाठ्यचर्या की रूपरेखा एक शिक्षक की ज़रूरत है। स्कूल के संदर्भ में उत्पन्न होने वाली माँग के संबंध में तैयार करना, स्कूल ज्ञान, शिक्षार्थी और सीखने के सवालों की प्रक्रिया से पूर्ण करना हमारा दायित्व है। स्कूल प्रणाली से शिक्षक समय-समय पर परिवर्तन की उम्मीदों, व्यापक, आर्थिक और व्याप्त राजनीतिक परिवर्तन के लिए समाज में जगह ले रहे हैं।
2. शिक्षक-प्रशिक्षण में अवधारणात्मक निवेशों को इस प्रकार प्रस्तुत करना चाहिए कि वे शैक्षिक घटनाओं, जैसे — क्रिया, प्रयास, प्रक्रिया, अवधारणा और घटनाओं का वर्णन-विश्लेषण करें। इस प्रकार के शिक्षण-प्रशिक्षण कार्यक्रम में सिद्धांत और व्यवहार को समन्वित देखने का मौका मिलेगा न कि उनको दो अलग-थलग पहलुओं के रूप में देखने का। यह विद्यार्थी-शिक्षक को हर रूप में सक्षम बनाता है, ताकि उसमें क्षेत्र-आधारित पद्धतियों के प्रति आलोचनात्मक संवेदना आ सके।
3. अधिगम उस सामाजिक वातावरण/संदर्भ से बेहद प्रभावित होता है जहाँ से शिक्षार्थी और शिक्षक आते हैं। स्कूल और कक्षा का सामाजिक वातावरण सीखने की प्रक्रिया, यहाँ तक कि पूरी शिक्षा प्रक्रिया पर असर डालता है। इसको ध्यान में रखते हुए विद्यार्थी की मनोवैज्ञानिक विशिष्टता

की जगह उसके सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक संदर्भों की ओर अधिक बल देने की आवश्यकता है।

4. विविध प्रकार के संदर्भों के कारण शिक्षण में विविधता लाने की ज़रूरत होती है। स्कूल की शिक्षा पर स्कूल के बाहर के व्यापक सामाजिक संदर्भों का प्रभाव होता है।

शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रमों में समकालीन भारतीय समाज के मुद्दों और चिंताओं, उसके बहुलतावादी स्वभाव और पहचान, लिंग, समता, जीविका और गरीबी के मुद्दों के लिए स्थान होना चाहिए। इससे शिक्षकों में शिक्षा को उसके संदर्भों में रखने उसके उद्देश्य और समाज के साथ उसके संबंधों की समझ अधिक गहरी होगी।

शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रमों में साल में एक बार मूल्यांकन के चलन की जगह उसे एक सतत प्रक्रियागत गतिविधि के रूप में पहचानने की आवश्यकता है। इससे शिक्षक-प्रशिक्षक, शिक्षक-विद्यार्थियों के सहयोग, सहकार, पर्यवेक्षक, लिखित-मौखिक क्षमता, दृष्टिकोण, प्रस्तुति आदि में मौलिकता को परख सकेंगे।

### **अध्यापक शिक्षा — एक समन्वित कार्यक्रम**

अध्यापक शिक्षा वह प्रक्रिया है जो ज्ञान, विकास और दृष्टिकोण, कौशलों, प्रवृत्तियों व व्यवहार में बदलाव पर आधारित होती है जो कार्यशालाओं व स्कूली परिस्थितियों में अंतःक्रिया के माध्यम से दी जा सकती है। इसमें केवल विशेषज्ञों से ज्ञान प्राप्त करने पर ही जोर नहीं रहना चाहिए। बल्कि व्यावहारिक शिक्षा को बढ़ावा दिया जाना चाहिए, अनुभावात्मक अधिगम

को प्रोत्साहन, शिक्षकों को सक्रिय शिक्षार्थियों में बदलना, व्यवहार की सहकर्मि-आधारित समीक्षा भी व्यापक रणनीति का हिस्सा बन सकती है। आत्मचिंतन को इस कार्यक्रम का महत्वपूर्ण अवयव माना जाना चाहिए। ऐसी प्रशिक्षण नीति तैयार की जानी चाहिए जिसमें आविधिकता, संदर्भ और कार्यक्रम की पद्धतियों की चर्चा हो। लेकिन गुणवत्ता और जीवंत सुनिश्चित करने के लिए अधिक विकेंद्रीकरण व्यवस्था की जरूरत होगी, जिसमें प्रशिक्षण की पद्धति और लक्ष्य साफ़-साफ़ निर्धारित हों। नयी तकनीकों पर आधारित 'व्यापक (मास) प्रशिक्षण' का भी प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन इसके लिए साहसिकता, रचनात्मकता और ईमानदारी की आवश्यकता होगी जिसमें सेवारत शिक्षकों के सरोकारों को प्रत्यक्ष रूप से संबोधित किया जा सके।

शिक्षा आयोग (1964-66) ने सुझाव दिया था कि नौकरी के दौरान शिक्षकों के प्रशिक्षण का आयोजन विश्वविद्यालयों और शिक्षक संगठनों द्वारा किया जाना चाहिए और हर पाँच साल में इस तरह के कार्यक्रम में हर शिक्षक को दो-तीन महीने बिताने चाहिए। इस तरह के कार्यक्रम अनुसंधान के आँकड़ों के आधार पर तय होने चाहिए और प्रशिक्षण संस्थानों को साल भर सेमिनार, कार्यशाला रिफ्रेशर कोर्स, 'ग्रीष्मकालीन इंस्टीट्यूट' आयोजित करने चाहिए। शिक्षकों पर राष्ट्रीय आयोग (1983-85) ने शिक्षक केंद्रों का विचार सामने रखा था — जो एक मिलन मंच हो, लोग इकट्ठे हों और अपने-अपने अनुभवों पर विचार विमर्श करें। इसका सुझाव था

कि शिक्षक शिक्षावकाश में ज्ञान के केंद्रों की यात्रा पर जा सकते हैं।

प्रत्येक स्तर पर इन बदलावों को लागू करते हुए हम निम्नलिखित कार्यक्रमों का संपादन कर सकते हैं —

### **लंबवत्/पिरामिड शिक्षक समूह का निर्माण**

संस्कृत के प्रति अभिरुचि जगाने तथा क्षेत्रीय स्तर पर समस्या समाधान हेतु महाविद्यालयीन/विद्यालयीन तथा प्रारंभिक शिक्षकों के पैनल का निर्माण किया जाए।

### **शाला सहकार**

शिक्षक डिजिटल-माध्यमों द्वारा अपने अनुभव/ज्ञान को साझा करें।

### **मेंटर्स प्रणाली**

आवश्यकतानुसार अनुभवी शिक्षकों को मेंटर्स के रूप में नियुक्त किया जा सकता है।

### **अनुभव हस्तांतरण**

माध्यमिक/उच्चतर माध्यमिक तथा उच्च स्तर पर अनुभवों को साझा करने के लिए लेखों का विकास किया जाए।

### **सामूहिक प्रतिबद्धता**

शिक्षकों को सांस्कृतिक-सद्भावना एवं राष्ट्रीयता के प्रसार हेतु संकल्पित करना आवश्यक है।

### **निर्देशन परामर्श सेवा**

वर्तमान परिस्थिति में कुंठाग्रस्त किशोर वर्ग को समुचित निर्देशन प्रदान करने के लिए शिक्षक समुदाय को प्रशिक्षित करना होगा।



## प्रशिक्षण

- सूचना के स्थान पर प्रयोग
- नवीन विषयवस्तु
- सतत मूल्यांकन
- फीडबैक
- खंड प्रशिक्षण
- व्यावहारिकता
- नई तकनीक



## प्रबंधन

- संगोष्ठी
- पत्राचार
- समूह-चर्चा
- सतत-संवाद
- आभासी-स्वरूप
- सेवाकालीन प्रशिक्षण



## समर्थन

- विषयवार शिक्षक-समूह
- पिरामिडीय शिक्षक-समूह
- अनुभव-हस्तांतरण
- मेंटर्स-प्रणाली
- एकीकृत-शिक्षक-मंच

## संदर्भ

एन.सी.ई.आर.टी. 2005. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005. एन.सी.ई.आर.टी. नयी दिल्ली.  
 मध्य प्रदेश प्रशासन. 2007. मध्य प्रदेश राजपत्र. मध्य प्रदेश.  
 राज्य शिक्षा केंद्र. 2007. पलाश — शैक्षिक पत्रिका. वार्षिक अंक. राज्य शिक्षा केंद्र. भोपाल. मध्य प्रदेश.  
 ——. 2007. सामर्थ्य — शिक्षक स्रोत समूह सामग्री राज्य शिक्षा केंद्र. भोपाल. मध्य प्रदेश.  
 शर्मा, परमेश्वर. 2012. सामाजिक शोध व सांख्यिकी. पेसिफिक पब्लिकेशन, दिल्ली.

## बच्चों की रचनात्मकता को दिशा देती भित्ति पत्रिका

प्रमोद दीक्षित 'मलय'\*

बच्चे अपने संपर्क में आने वाली हर घटना, वस्तु, दृश्य, व्यक्ति, मौसम, जल, जीवन और माटी से स्वयं को सहजता से न केवल जोड़ लेते हैं, बल्कि सीखने की प्रक्रिया को गतिशील भी करते हैं। यह सीखना उनके अनुभवों को समृद्ध करते हुए ज्ञान का निर्माण करता है। हर बच्चा अपने अनुभव को प्रकट करना चाहता है और इस प्रकटीकरण के लिए 'दीवार पत्रिका' उन्हें बिल्कुल उचित माध्यम और मंच प्रदान करती है। 'दीवार पत्रिका' वास्तव में बच्चों का अपना मंच है जहाँ उनके भावों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है और परस्पर सीखने-सिखाने के अनंत अवसर भी। वहाँ वे बिना बाहरी हस्तक्षेप और दबाव के समान धरातल पर साझी समझ के साथ भाषाई कौशलों का विकास करते हैं। वह सामूहिकता, नेतृत्व, संवेदनशीलता, कल्पना, अवलोकन, सामग्री चयन, लोकतांत्रिकता आदि मानवीय मूल्यों के रोपण एवं पल्लवन की उर्वर आधार भूमि भी है। प्रस्तुत आलेख में 'दीवार पत्रिका' की रचना प्रक्रिया, सामग्री चयन के क्षेत्रों, बच्चों के भाषागत विकास में उसकी भूमिका, चुनौतियों और समाधान के रास्तों तथा लेखन की विविध विधा एवं शैलियों से बच्चों के परिचय एवं प्रयोग पर चर्चा की गई है।

ब्लॉक संसाधन केंद्र (बी.आर.सी.) में सह-समन्वयक होने के नाते प्रायः विद्यालयों में अनुश्रवण एवं अनुसमर्थन के लिए जाना होता ही है। शिक्षकों और बच्चों से न केवल मुलाकात होती है, बल्कि विभिन्न मुद्दों पर बातचीत भी होती है। कक्षा में बातचीत के दौरान यह महसूस हुआ कि बच्चे सक्रिय सहभागिता नहीं निभाते। समुचित उत्तर नहीं दे पाते। एक प्रकार के संकोच भाव में दबे सिर झुकाए अनमने-से बैठे बस सुनते रहते हैं। हालाँकि, उनका यह सुनना भी भाषायी कौशल की दृष्टि से 'सुनना' नहीं कहा जा

सकता। ऐसा क्यों होता है? कारणों की तह में जाएँ तो कुछ महत्वपूर्ण तथ्य उभरते हैं। यथा, बच्चों के साथ कभी खुलकर संवाद के मौके नहीं दिए गए। उनके मन की बातों, अर्जित अनुभवों को कक्षा में प्रकट होने के मौखिक और लिखित सहज अवसर नहीं खोजे-बनाए गए हैं।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 की अपेक्षा है कि, 'रचनात्मक संदर्भ में, सीखना ज्ञान के निर्माण की एक प्रक्रिया है। विद्यार्थी सक्रिय रूप से पूर्व प्रचलित विचारों से उपलब्ध सामग्री, गतिविधियों

\*सह-समन्वयक (हिंदी), ब्लॉक संसाधन केंद्र नरैनी, बाँदा उत्तर प्रदेश



के आधार पर अपने लिए ज्ञान की रचना करते हैं (अर्जित अनुभव)।’ हर बच्चा सीखना चाहता है और उसके सीखने के कई तरीके होते हैं। बच्चे अपने परिवार, पड़ोस और परिवेश में बहुत कुछ सीखते हैं और सोचते भी हैं। वह अपने अनुभव बाँटना भी चाहते हैं, लेकिन विद्यालय उनके लिए अवसर नहीं जुटाता। विद्यालय में तो शिक्षकों का पूरा ज़ोर पुस्तकें पढ़ाने और पाठ्यक्रम को समय से पूरा कराने में ही रहता है। फलतः शिक्षक ज्ञान के एकमात्र स्रोत के रूप में उभर आता है और कक्षा या विद्यालय में उसकी सत्ता स्थापित हो जाती है, जहाँ बच्चों के करने-कहने के लिए न तो जगह होती है और न ही स्वतंत्र सृजनात्मक माहौल। बच्चे परंपरागत तरीके से प्रश्नों के उत्तर रटते हैं और उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे परीक्षा में रटी हुई सामग्री को ज्यों का त्यों लिख दें। ज्ञान निर्माण में उनकी सक्रिय भूमिका नहीं होती। तो फिर प्रश्न उठता है कि बच्चों में रचनात्मकता आए तो आए कैसे? इस प्रश्न के उत्तर में कई शैक्षिक और सह-शैक्षिक गतिविधियों के नाम लिए जा सकते हैं; जैसे — बाल सभा, बाल शोध मेला, खेलकूद, गाँव भ्रमण, वन विहार कार्यक्रम, वार्षिकोत्सव एवं भित्ति पत्रिका का प्रकाशन।

बच्चों की रचनात्मकता के विकास के लिए ज़रूरी है कि विद्यालय उन्हें उनके अर्जित अनुभवों को प्रकट करने के सुगम अवसर उपलब्ध कराए। इस संबंध में भित्ति पत्रिका एक महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में उभरी है। भित्ति पत्रिका को उत्तराखंड में एक अभियान के रूप में गति दे रहे शैक्षिक दखल के संपादक शिक्षक महेश पुनेठा कहते हैं, “भित्ति

पत्रिका भाषायी दक्षता और रचनात्मकता के विकास का माध्यम ही नहीं है, बल्कि अपने आप में पूरी पाठ्यचर्या है।” अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए वे कहते हैं, “भित्ति पत्रिका निर्माण की प्रक्रिया से गुजरना ज्ञान सृजन और मूल्य निर्माण की प्रक्रिया से गुजरना है। इस प्रक्रिया से जुड़कर बच्चे एक साथ सभी विषयों की दक्षता और कौशलों को प्राप्त करते हैं। यह सतत एवं व्यापक मूल्यांकन का एक बेहतरीन टूल भी है। निश्चित रूप से भित्ति पत्रिका विद्यालय को एक ऐसा रचना स्थल बनाने में सहायक है जहाँ बच्चे भयमुक्त और बाल मैत्रीपूर्ण परिवेश में खुशी-खुशी जीवन का सबक सीख सकते हैं।”

### क्या है भित्ति पत्रिका

किसी चार्ट पर साहित्य की विविध विधाओं की बच्चों द्वारा रचित मौलिक रचनाओं, चित्रों एवं गतिविधियों को दीवार पर चिपका एवं सजा-सँवार कर प्रस्तुत करना ही भित्ति पत्रिका है। किसी भित्ति पर टँगी होने के कारण ही इसे भित्ति पत्रिका (दीवार पत्रिका) कहते हैं। इसे ‘वॉल मैगज़ीन’ और ‘वॉल अखबार’ के नाम से भी जाना जाता है। वास्तव में भित्ति पत्रिका किसी विद्यालय का एक ऐसा भौतिक संसाधन है जिसे रोचक, अर्थपूर्ण एवं गतिविधिपरक सामग्री से सज्जित कर प्रदर्शित किया जाता है जिसमें बच्चों की अभिव्यक्ति के लिए असीम संभावना और अवसर होते हैं। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में सुझाव दिए गए हैं कि विद्यालय रटत प्रणाली की बजाय बच्चों को मौलिक कल्पना एवं चिंतन-मनन करने के अवसर देते हुए स्कूली ज्ञान को बच्चों के स्थानीय परिवेश से उपजे ज्ञान से जोड़ें जहाँ बच्चे

सभी विषयों में परस्पर सह-संबंध स्थापित करते हुए सीखने-सिखाने के नये सुगम अवसर तलाश सकें। भित्ति पत्रिका इस कसौटी पर खरी उतरती है। विद्यालयों में बच्चों की भाषायी दक्षता और रचनात्मक कौशलों के विकास में भित्ति पत्रिका महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सामान्यतः कविता, कहानी, चुटकुले, कुछ चित्र और विद्यालय की कुछ गतिविधियों के समाचार जैसी बच्चों की रचनाओं को एकत्र कर किसी चार्ट पेपर या नए/पुराने कैलेण्डर में चिपका कर और थोड़ी-सी साज-सज्जा के साथ प्रकाशित करना ही भित्ति पत्रिका है। ऊपरी हिस्से में स्केच पेन से मोटे-बड़े अक्षरों में एक शीर्षक लिखकर सुतली आदि से बाँध कर किसी ऐसी भित्ति में उचित ऊँचाई पर टाँग दिया जाता है जहाँ बच्चे आसानी से उसे पढ़ सकें। चार्ट के किनारों को लेमिनेटेड करने और ऊपर-नीचे बाँस की खपच्ची या कोई पतली टहनी बाँध देने से पत्रिका को सुरक्षित रूप से टाँगना आसान हो जाता है। यह बच्चों की अभिव्यक्ति का सस्ता और सर्व सुलभ साधन है। एक बार समझ बन जाने पर इसे बेहतर बनाने के अन्य प्रयोग भी किए जा सकते हैं।

### भित्ति पत्रिका कैसे बनाएँ

भित्ति पत्रिका बहुत कम लागत पर तैयार की जा सकने वाली एक सरल और रुचिपूर्ण गतिविधि है जिसे बच्चे डेढ़-दो घंटे में बना सकते हैं। पत्रिका बनाने के लिए एक या दो चार्ट, रंगीन पेंसिलें, गोंद, कैंची, पटरी, सुतली, टेप आदि की जरूरत पड़ती है। चार्ट के अभाव में पुराने कैलेण्डर या अखबारों का भी इस्तेमाल कर सकते हैं। एक चार्ट लें और उसके

ऊपर की ओर दो इंच चौड़ा अन्य चार्ट से काटा गया टुकड़ा चिपका दें। सूखने पर उस हिस्से पर पत्रिका का नाम और अन्य जानकारियाँ जैसे वर्ष, पत्रिका के अंक की संख्या, प्रकाशन तिथि, विद्यालय का नाम आदि स्केच पेन या मार्कर से स्पष्ट और स्वच्छ तरीके से अंकित कर दें, इसे हेडर कहते हैं। बच्चों से स्वरचित रचनाएँ मँगाकर एकत्रित कर लें और उनमें से उपयोगी रचनाओं को चुनकर पूरे चार्ट पर हेडर के नीचे करीने से चिपका दी जाती हैं। रंगीन पेंसिल से कागजों के चारों ओर बॉर्डर बना दें। चार्ट के चारों ओर बॉर्डर बनाना भी ठीक रहेगा। नीचे की ओर संपादकीय टीम का नाम भी लिख लें। यदि रचनाएँ अधिक आ गई हैं तो एक दूसरा चार्ट लेकर पहले चार्ट के नीचे चिपका कर आकार बड़ा कर लें। अब चार्ट के ऊपरी हिस्से में दो छेद कर आईलेट लगा सुतली फँसा कर तैयार पत्रिका को किसी भित्ति में बच्चों की ऊँचाई अनुसार टाँग दें, जहाँ बच्चे उसे आसानी से पढ़ सकें। तैयार पत्रिका को प्रार्थना सत्र या बाल सभा के दौरान प्रदर्शित करने से बच्चों में उत्साह और कुछ नया रचने-करने का भाव जागृत होता है। गाँव के सार्वजनिक स्थान या किसी चौपाल पर भी भित्ति पत्रिका को कुछ समय के लिए लगाया जा सकता है, ताकि ग्रामवासी बच्चों की रचनाधर्मिता से परिचित हो सकें। यदि चार्ट मुड़ या हवा में उड़ रहा हो तो बाँस की एक-एक खपच्ची या दफ्ती का टुकड़ा चार्ट के ऊपर-नीचे पीछे की ओर धागे से टाँक दें। बच्चों में भित्ति पत्रिका की समझ विकसित करने के लिए उन्हें कोई बाल पत्रिका या अखबार पढ़ने को दें और उसके विविध स्तंभों पर बातचीत करें, इस प्रक्रिया से बच्चे

पत्रिका या अखबार के स्वरूप को समग्रता में समझ पाएँगे। शुरू में अखबारों की बालोपयोगी कतरनों को चरप्पा करना उचित रहेगा। एक-दो अंक निकालने के बाद बच्चों से उनकी पाठ्यपुस्तक, किसी पत्रिका, अखबार आदि से देखकर लिखी गई सामग्री मँगवाई जाए। इस तरह धीरे-धीरे बच्चों में स्वयं लिखने की भावना जागृत होगी और अपने अनुभवों को कागज़ पर उतारने को प्रेरित होंगे। विद्यालय की सुविधानुसार भित्तिपत्रिका का प्रकाशन साप्ताहिक, पाक्षिक या मासिक किया जा सकता है। निरंतरता बनी रहने से पत्रिका का स्वरूप बेहतर होता जाएगा। बच्चों की रुचि और संख्या के आधार पर किसी विद्यालय में एक से अधिक भित्ति पत्रिकाएँ प्रकाशित की जा सकती हैं।

### संपादक मंडल का चयन करना

सुगमकर्ता शिक्षक/शिक्षिका को चाहिए कि सबसे पहले सभी कक्षाओं से कुछ बच्चे जिनकी रुचि इस तरह की गतिविधियों में हो उनके साथ अलग बैठें और भित्ति पत्रिका के संबंध में विस्तृत बातचीत कर एक डमी भित्ति पत्रिका तैयार करें। प्रशिक्षण के समय समाचार पत्रों से बच्चों से संबंधित सामग्री की कटिंग्स का प्रयोग कर सकते हैं। इसके बाद उन्हीं बच्चों में से एक संपादक मंडल बनाएँ जिसमें संपादक, सह संपादक, कला संपादक, प्रबंध संपादक, समाचार संपादक आदि काम के लिए बच्चों को चुनकर दायित्व दे दें। सुगमकर्ता कोई निर्णय न सुनाए, बल्कि बच्चों को निर्णय लेने को प्रेरित करते हुए आज़ादी दें। बच्चों के निर्णय को स्वयं भी उदार मन से स्वीकार करें। संपादक मंडल अपनी पत्रिका का नाम स्वयं या

विद्यालय के बच्चों के साथ चर्चा करके चुनें, ऐसा करने से पत्रिका के प्रति बच्चे अपनापन महसूस करेंगे।

### पत्रिका में कैसी सामग्री हो

एक भित्ति पत्रिका में कविता, कहानी, गीत, पहेलियाँ, कार्टून, रोचक गतिविधियाँ, चित्र, स्कूल और गाँव के समाचार, लेख, साक्षात्कार, चुटकुले, संपादकीय, पाठकों के पत्र आदि विविध सामग्री होने से पत्रिका अधिक उपादेय होने के साथ ही एक सुवासित गुलदस्ते का एहसास कराएगी। पत्रिका में स्थानीय इतिहास, भूगोल, जंगल, पर्यावरण, संस्कृति, पर्यटन, पुरातात्विक स्थल एवं शिल्प मेले-उत्सव आदि पर भी सामग्री दी जा सकती है। समय-समय पर विशेषांक भी निकाले जा सकते हैं। जैसे हिंदी भाषा, गणित, सामाजिक विषय, कला, विज्ञान आदि विषयगत विशेषांक। वहीं जड़ी-बूटी, गैर-कृषि एवं स्थानीय उत्पाद, लोकगीत एवं लोकपर्व, बाल शोध मेला आदि सहित अन्य मुद्दों पर भी विशेषांक तैयार किए जा सकते हैं।

### भित्ति पत्रिका निर्माण में चुनौतियाँ एवं सावधानी

जब भी कोई नया काम प्रारंभ होता है तो लोग उसे संशय की दृष्टि से देखते हैं और प्रायः विरोध भी करते हैं। भित्ति पत्रिका वैसे बहुत सरल एवं कम लागत पर तैयार होने वाली एक सह-शैक्षिक गतिविधि है पर समझ के अभाव में अपेक्षित सफलता नहीं मिलती और उपहास का पात्र भी बनना पड़ता है। पत्रिका निर्माण में आने वाली कुछ सामान्य चुनौतियाँ इस प्रकार हैं। यथा, सुगमकर्ता शिक्षक को भित्ति पत्रिका की अवधारणा स्पष्ट न होने से वह बच्चों तक सम्यक

जानकारी नहीं पहुँचा पाएगा। इस कारण बच्चे काम में रुचि नहीं लेंगे और पत्रिका एक अनावश्यक थोपा हुआ काम या बोझ बन जाएगी। विद्यालय के अन्य शिक्षकों का सहयोग न करना और उपहास करना, बच्चों की मौलिक रचनाएँ न मिल पाना, धन एवं समय की बर्बादी समझना, इन चुनौतियों से पार पाने के लिए भित्ति पत्रिका पर काम कर रहे शिक्षक के लिए भित्ति पत्रिका की अवधारणा की समझ बिल्कुल स्पष्ट होनी चाहिए। बेहतर होगा कि बच्चों के बीच काम करने से पहले उसने विधिवत प्रशिक्षण ले लिया हो या भित्ति पत्रिका बनाने में कहीं सहभागिता की हो। अन्यथा अधिकचरी समझ से बनी भित्ति पत्रिका अपने उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर पाएगी और असमय काल कवलित हो जाएगी। ऐसी स्थिति में पुनः काम प्रारंभ करना कठिन हो जाता है। बच्चों से गलतियाँ होना स्वाभाविक है, ऐसी स्थिति में सुगमकर्ता को धैर्य, विवेक एवं शांति से काम लेना चाहिए। यह हमेशा ध्यान रहे कि भित्ति पत्रिका बनाना हिंदी भाषा की कक्षा नहीं है। हस्तलेख खराब होने, लिखावट को काटने, वर्तनी की अशुद्धियों के लिए बच्चों को डाँटें नहीं। काम करते हुए बच्चे स्वयं एक-दूसरे को उनकी कमियों की ओर संकेत करेंगे और उनका सीखना निर्बाध संभव हो सकेगा।

### **भित्ति पत्रिका बच्चों की प्रगति का संकेतक**

भित्ति पत्रिका बच्चों की रचनात्मकता को बढ़ाने के साथ ही उनकी प्रगति का संकेतक भी होती है। बच्चों को अपने कौशलों को निखारने का अवसर तो मिलता ही है साथ ही वे अपने कार्य की जाँच-परख भी कर लेते हैं। भित्ति पत्रिका का निर्माण करना सही मायनों

में लोकतांत्रिक परिवेश में ज्ञान निर्माण करना और उस अर्जित ज्ञान को आगे ले जाना है। इससे लोकतंत्र के प्रभावी स्तंभ 'मीडिया' की समझ भी विकसित होती है। बच्चे सभी काम मिलजुल कर करते हैं, यह बच्चे में सामाजिकता का विकास करता है। बच्चे रचनाओं के चयन में विचार-विमर्श करते हैं तो उनमें मुद्रित सामग्री को पढ़ने, समझने, अवलोकन करने की समझ विकसित होती है। बहुत सारी वस्तुओं में से उपयोगी वस्तुओं के चयन करने का हुनर पैदा होता है। चूँकि, पूरा काम समूह में होता है और परस्पर विचार विनिमय होने से उनमें अपना पक्ष रखने और दूसरों की बात सुनने का कौशल अर्जित होता है। एक टीम के रूप में काम करना आता है और किसी कार्य की सफलता में टीम की भूमिका एवं महत्त्व को समझ पाते हैं। ये सब बातें कक्षा में नहीं सिखायी जा सकतीं क्योंकि बच्चे बहुत सारी चीजें देख-सुन और स्वयं करके सीखते हैं। भित्ति पत्रिका का काम करने से बच्चों में चार भाषायी कौशलों, में से दो लिखना एवं पढ़ना, का जहाँ वय एवं कक्षानुसार वांछित स्तर का विकास हो जाता है वहीं अन्य दो कौशल सुनना एवं बोलना में भी पकड़ मज़बूत होती है। संपादन प्रक्रिया में नए शब्दों, वाक्यों, विधाओं, शैली और बनावट से परिचय होता है जो बच्चे की सीखने की गति को तीव्र करता है। नई-नई चीजें सीखने के लिए बच्चे न केवल पुस्तकालय जाना प्रारंभ करते हैं, बल्कि पुस्तकों एवं पत्रिकाओं से दोस्ती भी करते हैं। पुस्तकों से यह दोस्ती उनमें पढ़ने की एक संस्कृति विकसित करती है। यह बच्चे की भाषा को तो समृद्ध करता ही है साथ ही उसकी भावाभिव्यक्ति को भी प्रभावी

बनाता है। यह विद्यालयी ज्ञान का परिवेशीय ज्ञान से तारतम्य स्थापित करती है। यह अभिव्यक्ति की आज़ादी का बच्चों का अपना एक मंच है जहाँ सभी के लिए अपने मन की बात कहने के एकसमान अवसर हैं। लोकतांत्रिक व्यवस्था के प्रति आस्था, संवैधानिक मूल्यों यथा, समता, स्वतंत्रता, न्याय, मानवीय गरिमा, करुणा, धर्मनिरपेक्ष सामाजिक व्यवहार और प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व के साथ, जीने की कला भी भित्ति पत्रिका में काम करते हुए बच्चे अनायास सीख जाते हैं। जीवन कौशलों एवं मानवीय मूल्यों का विकास स्वतः होता जाता है।

### शिक्षकों के साथ काम

प्रयोग के तौर पर 2013 में मैंने अपने कार्यक्षेत्र के अंतर्गत लगभग 15 स्कूलों में भित्ति पत्रिका पर काम शुरू करवाया। उन विद्यालयों से एक-एक शिक्षक/शिक्षिका चुनकर एक दिन का प्रशिक्षण दिया। बड़े समूह में भित्ति पत्रिका पर संवाद हुआ, प्रश्नोत्तर हुए और एक साझी समझ का निर्माण किया। फिर पाँच-पाँच शिक्षकों के छोटे समूह बनाकर भित्ति पत्रिका बनवाई गई। कार्यशाला से बनी समझ का इस्तेमाल करते हुए उन लोगों ने अपने विद्यालयों में काम शुरू किया। उन सबके लिए यह एक नया काम था, लेकिन बच्चों में भाषायी विकास का सपना संजोये वे इसे करना चाहते थे। हालाँकि, कतिपय कारणों से लगभग आधे स्कूलों में दो-तीन अंक निकलने के बाद पत्रिका का प्रकाशन संभव नहीं हो सका, लेकिन आज 7 विद्यालयों में भित्ति पत्रिका कहीं पाक्षिक तो कहीं मासिक अंक के रूप में नियमित निकल रही है। एक स्कूल में तो दो भित्ति पत्रिकाएँ

निकल रही हैं। भित्ति पत्रिका में काम करने वाले बच्चों की रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में छप रही हैं। चकमक पुस्तक (मासिक पत्रिका, एकलव्य द्वारा प्रकाशित भोपाल), भित्ति पत्रिका और रचनात्मकता (लेखक महेश पुनेठा, लेखक मंच प्रकाशन, नयी दिल्ली) में बच्चों के अनुभव छपे हैं। उनमें भाषायी कौशलों का विकास हुआ। भित्ति पत्रिका बच्चों को एक बेहतर नागरिक के रूप में भी विकसित कर रही है जो अपने आसपास में हो रहे परिवर्तनों को गहराई से समझ रहे हैं।

मैं हमेशा से भित्ति पत्रिका को बच्चों में भाषायी दक्षता विकसित करने के एक सहज साधन के रूप में देखता-मानता रहा हूँ। भित्ति पत्रिका को मैंने इस पर काम करने वाले बच्चों में लेखन क्षमता, कल्पना और चिंतन शक्ति, कलात्मक अभिरुचि, सामूहिकता, सामग्री चयन करने के संपादकीय कौशल के विकास के साथ-साथ उनमें एक अच्छे नागरिक के रूप में बढ़ने के अवसर के रूप में देखा है। लेकिन इधर के तीन-चार वर्षों में, जब से मैंने भित्ति पत्रिका पर बच्चों के साथ गंभीरता से काम करना शुरू किया है, इसके एक नए रूप से मैं परिचित हुआ हूँ और वह है भित्ति पत्रिका से होने वाले बदलाव। ये बदलाव बच्चों और विद्यालय के शैक्षिक वातावरण में ही नहीं हैं, अपितु विद्यालय की बाहर की दुनिया में भी हैं।

अब भित्ति पत्रिका केवल कहानी, कविता, चुटकुले के संक्षिप्त कलेवर से बाहर निकल न केवल नई विधाओं की रचनास्थली बनकर उभरी है, बल्कि लोक जीवन के विविध पक्षों को अपने में समेटने-सहेजने को उत्कंठित और उत्साहित भी

दिखी है। चुप्पी की संस्कृति को तोड़ती एवं व्यवस्था में पिसते लोक का स्वर नव आयाम लेकर अब प्रकट होने लगा है। बच्चों के घर-परिवार और उनकी मन की बातें, विद्यालय और गाँव की गतिविधियों के समाचार एवं समस्याएँ, गाँव का अपना इतिहास-भूगोल, नजरी नक्शा, खेती का काम कर रहे किसान-श्रमिक, बुनकर, बाँस से डलिया और मिट्टी से बर्तन बनाने वाले, लुहारगिरी से जुड़े कला दक्ष लोगों के साक्षात्कार आदि के प्रयोग से भित्ति पत्रिका अन्य बच्चों, शिक्षकों और अभिभावकों का ध्यान अपनी ओर खींच रही है। इस नए रूप को देख-समझकर बच्चों में उत्साह हिलोरे लेने लगा है और उन्हें नए अंक की बेसब्री से प्रतीक्षा होने लगी है। हमारी भित्ति पत्रिका बच्चों के साथ हँसी-ठिठोली, संवाद करते एवं सवाल खड़े करती आगे बढ़ रही थी कि एक घटना ने हम सबको अंदर तक हिला दिया।

### बदलाव की आधार भूमि बनती भित्ति पत्रिका

एक दिन जब मैं स्कूल जा रहा था। गाँव के समीप ही रास्ते में एक रजबहे (छोटी नहर) की पुलिया पर बैठे आठ-दस लोगों के समूह में से दो-तीन लोगों ने एक साथ लगभग चिल्लाते हुए आवाज़ दी, “अरे मास्साब! रुकिए। आपसे कुछ जरूरी बात करनी है।” मैं कुछ भी समझ नहीं पा रहा था, क्योंकि इसके पहले गाँव वालों ने कभी भी मुझे इस तरह से रोका-टोका नहीं था। पल भर में ही तमाम अनजाने सवाल मेरे दिमाग में तैर गए। मेरे रुकते ही लगभग सभी लोग बोल पड़े कि आप स्कूल में बच्चों से यह सब क्या करवा रहे हैं? अभी भी मुझे कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था। मुझे चुपचाप खड़ा देख उनमें से एक वृद्ध

बोला, “वा जो आप बच्चों से सोहर, दादरा, गारी, फाग, चैती लिखवा रहे हऊ न, तो या कौन सी पढ़ाई आया। मास्साब! हमारे जमाना मा तौ अस पढ़ाई न होत रहै। हम लरिकन का नीक-भली चार बातें पढ़ें खातिर इस्कूल भेजित है सोहर, गारी सिखें का नाही।”

अब पूरा संदर्भ मेरी आँखों के सामने घूम गया और मैंने उनके साथ पूरा विवरण साझा किया। हुआ यह था कि एक विद्यालय में कक्षा तीन की हिंदी पुस्तक *कलरव* पढ़ाते हुए ‘लोकगीत’ शीर्षक नाम से एक पाठ मिला। उस पाठ में आठ-दस पंक्तियों में लोकगीत के बारे में चर्चा की गई थी और इस निर्देश और अपेक्षा के साथ पूरा पृष्ठ खाली छोड़ दिया गया था कि बच्चे अपने-अपने क्षेत्र के कोई एक-दो लोकगीत उसमें लिखें। बच्चों से बातचीत में यह बात भी निकली कि शिक्षकों ने न कभी इस पाठ को पढ़ाया और न ही इस पर कोई चर्चा की। उस दिन, दिन भर मैं विचार करता रहा कि यह पाठ क्यों रखा गया होगा। इसके क्या मायने हैं? क्या दूसरी कक्षाओं की हिंदी पुस्तकों में भी ऐसे पाठ होंगे? खोजने पर मैंने सभी कक्षाओं की पुस्तकों में भी इसी प्रकार के लोक संस्कृति को उभारने वाले पाठ पाए। मैं किसी निर्णय पर नहीं पहुँच पा रहा था। मैंने सभी पाठों को एकत्र कर शिक्षकों के स्वप्रेरित नवाचारी समूह ‘शैक्षिक संवाद मंच’ की एक बैठक में विचार-विमर्श के लिए रखा। विचार-विमर्श से निकली बातों का सार हमारे सामने था कि भौतिकता की चकाचौंध में लोग अपनी ग्राम्य संस्कृति को न केवल भूलते जा रहे हैं, बल्कि उसे दोयम दर्जे का भी मान रहे हैं। बढ़ते शहरीकरण ने गाँवों तक पैर पसार लिए हैं। बाज़ार ने



गाँव के हर घर की चौखट पर दस्तक देकर हर व्यक्ति के हाथ पर लोभ-लालच का 'लॉलीपॉप' थमा दिया है। फलतः लोक में व्याप्त जिन गीत और कथा-कहानियों में लोकजीवन साँस ले रहा था उसे समाज ने धीरे-धीरे बिसरा दिया है। फलतः फूहड़ और द्विअर्थी फ़िल्मी गीतों ने आहिस्ते-आहिस्ते घुसपैठ कर उसकी जगह ले ली और हमें पता भी नहीं चला। तो हो सकता है कि भावी पीढ़ी को लोक संस्कृति से परिचित कराने और अपनी विरासत बचाने के लिए इन पाठों को पुस्तकों में जोड़ा गया हो। और यदि ऐसा है तो हमें इस दिशा में काम करने की ज़रूरत है। साथियों ने सुझाव रखा कि क्यों न जूनियर विद्यालय की भित्ति पत्रिका का अगला अंक लोकगीतों पर ही केंद्रित किया जाए। सभी को यह पसंद आया।

मैं उस विद्यालय गया और बच्चों के साथ इस संबंध में खुलकर पूरी बात की, उनका नजरिया जाना। फिर आपसी निर्णय से भित्ति पत्रिका के उस अंक को 'लोकगीत विशेषांक' के रूप में निकालने की योजना बनी। मैंने यह प्रश्न भी रखा कि हम इन लोकगीतों को लेकर क्यों काम कर रहे हैं? इनकी हमारे जीवन में क्या उपयोगिता हो सकती है? बच्चों ने अपनी-अपनी समझ से विचार रखे। यह भी तय हुआ कि प्रतिदिन के अनुभवों को अपनी-अपनी डायरी में भी दर्ज किया जाएगा। गीतों को केवल लिखना भर नहीं है बल्कि उनके गाने की लय, अर्थ और प्रसंग को भी समझना है। अंक पंद्रह दिन बाद निकलने वाला था और इन पंद्रह दिनों में बच्चों ने उन गीतों को न केवल खोजने की कोशिश की, बल्कि उनके महत्त्व को भी गहराई से समझा। मैंने अनुभव किया कि बच्चे अपनी लोक

परंपरा से जुड़ रहे हैं। भित्ति पत्रिका का यह अंक उनके लिए चुनौतीपूर्ण और रोचक था। सभी बच्चों के अनुभव इस मायने में लगभग एक जैसे थे कि उनकी बड़ी बहनों, भाबियों और भाइयों को ऐसे लोकगीत नहीं आते। बच्चों ने उन गीतों को अपनी दादियों-नानियों से सुना-सीखा-लिखा। जब भित्ति पत्रिका को अंतिम रूप देने की बारी आयी तो हम सब साथ बैठे। मैंने उनके अनुभव जानने की कोशिश की। उनके अनुभवों में इन गीतों के संरक्षण की छटपटाहट थी और आँखों में लोकस्वर की पहचान का सपना भी। केशकली ने कहा कि 'मैंने ये गीत कभी नहीं सीखना चाहा क्योंकि मैं इन्हें पिछड़े लोगों के गीत मानती रही हूँ। लेकिन अब मुझे एहसास हो रहा है कि मैं नासमझ थी।' वहीं वंदना, सुमन, भारती एवं आरती का विचार है कि इन गीतों को सीखकर इस धारा को आगे बढ़ाएँगी। मनोज और पुष्पेन्द्र इस काम से उत्साहित होकर कहते हैं कि हमें तो खजाना ही मिल गया है। इन गीतों के प्रति हमारी सोच बदली है और एक नई समझ विकसित हुई है।

भित्ति पत्रिका के उस अंक के लोकार्पण में अभिभावकों को बुलाया गया, उनमें बड़ी संख्या में महिलाएँ भी थीं। बच्चों को ही कार्यक्रम का संयोजन-संचालन करना था। भित्ति पत्रिका के लोकार्पण के बाद बच्चों ने सिलसिलेवार पूरी बातें सामने रखीं, अपने अनुभव साझा किए। यह भी बताया कि यह विषय क्यों चुना गया और उनकी अब क्या समझ बनी है। वहाँ उपस्थित फाग गायक मातादीन ने कहा कि हमारे इन गीतों में माटी की सौँधी खुशबू है। ये केवल बोल भर नहीं हैं इनमें हमारा

अतीत विविध रूपों में सामने आता है। ये हमें समाज में जीना-रहना सिखाते हैं। हमने इनकी कद्र नहीं की और आज ये मर रहे हैं। वहीं मुन्नीलाल ने नयी पीढ़ी द्वारा इन गीतों को सीखने में रुचि न दिखाने पर पीड़ा व्यक्त करते हुए कहा कि हमारी पीढ़ी के बाद ये सब नष्ट हो जाएगा। तब उस पीढ़ी को एहसास होगा कि उन्होंने क्या खोया है। भूरी ने कहा कि 'हमारे घरों में विवाह के बाद बहू के साथ महिलाएँ मिल बैठ कर हँसती-गाती हैं। कई सालों से मैं गाँव में देख रही हूँ कि आने वाली बहुएँ ऐसे अवसरों पर फिल्मी गाने गाती हैं। यह हमें अच्छा लगता था कि हमारी बहुएँ नए चलन के गाने गा रही हैं और हमें गर्व महसूस होता था। लेकिन यह कभी न समझ पायी कि हम अपनी जड़ों से कटे जा रहे हैं। लड़कियाँ भी इन गीतों को नहीं सीखतीं। वे कहती हैं कि ये देहाती गाने हैं, इन्हें गाने में शर्म आती है। जब इन बच्चों ने लिखने के लिए हम लोगों से गीत सुनाने को कहा तो हमें एक बार तो गुस्सा आया। अब हम समझ गए कि हम कितने

खोखले हैं। आज सबके सामने मैं कहती हूँ कि अब यह मेरी ज़िम्मेदारी होगी कि मैं बच्चों को ये गीत सिखाने का माहौल बनाऊँगी। इन बच्चों ने जो यह रास्ता दिखाया है। अब हमें सचेत हो जाना चाहिए नहीं तो हम अपनी पहचान खो बैठेंगे।'

भित्ति पत्रिका का यह रूप मेरे लिए किसी आश्चर्य से कम नहीं था क्योंकि हमने कभी सोचा ही नहीं था कि यह बदलावों की आधार भूमि भी बन सकती है। तभी यह निर्णय भी लिया गया कि अब प्रत्येक अंक को गाँव के प्रमुख स्थानों पर कुछ समय के लिए लगाया जायेगा, ताकि गाँव के लोग भी पढ़ सकें। अब गाँव के प्रमुख स्थानों पर हम बच्चों की ज़िम्मेदारी पर भित्ति पत्रिका टाँगते हैं। लोग न केवल पढ़ते हैं बल्कि अपनी प्रतिक्रिया भी देते हैं। गाँव के लोग प्रतीक्षा करते हैं कि नया अंक कब आने वाला है और उसमें क्या क्या होगा। मुझे लगता है इसे भित्ति पत्रिका की एक बड़ी उपलब्धि के तौर पर हम देख सकते हैं।



## पाठ्यक्रम में भाषा भारतीय संदर्भ

अमरीन अली\*

किसी भी देश की भाषा वहाँ की संस्कृति की वाहिका होती है। भाषा का अध्ययन एक तरह से संस्कृति का अध्ययन भी होता है। इसी प्रकार भारतीय संदर्भ में भी भाषा शिक्षण एक विशेष महत्त्व रखता है। प्रथम भाषा के रूप में हो या द्वितीय भाषा के रूप में या फिर तृतीय भाषा के रूप में भारत में अधिकांश छात्र इस भाषा के अध्ययन से गुजरते हैं। अतः देश की उभरती युवा पीढ़ी की सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि उत्पन्न करने में हिंदी पाठ्यक्रमों तथा पाठ्यपुस्तकों का दायित्व काफ़ी बढ़ जाता है। भारत की सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाओं के प्रति इन शिक्षार्थियों की दृष्टि किस प्रकार की बनती है, यह इस बात पर भी निर्भर करता है कि हिंदी पाठ्यपुस्तकों में तथा हिंदी अध्ययन-अध्यापन में उनकी इन सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाओं के प्रति किस प्रकार की धारणा विकसित की जाती रही है।

प्रस्तुत शोध पत्र में आलोचनात्मक पद्धति का प्रयोग कर यह देखने की चेष्टा की गयी है कि हिंदी पाठ्यक्रमों तथा पाठ्यपुस्तकों में भिन्न-भिन्न सामाजिक तथा सांस्कृतिक पहलू, भारतीय शिक्षा प्रणाली आदि के प्रति किस तरह की दृष्टि अपनाई गयी है।

पाठ्यक्रम में जब भी भाषा संदर्भों की चर्चा की जाती है तब सबसे महत्वपूर्ण पहलू जिस पर बात की जाती है वह है अर्जन की प्रक्रिया को अधिक सक्षम और सरल बनाना। भारतीय संस्कृति की विविधता को शिक्षा अर्जन की प्रक्रिया के संदर्भ में देखे जाने की आवश्यकता है विशेषकर पाठ्यपुस्तकों के संदर्भ में। पाठ्यपुस्तकों के निर्माण में काफ़ी तत्वों का ध्यान रखने के बावजूद संस्कृति विशेष का वर्चस्व दिखता है। भारत के सरकारी स्कूलों की पाठ्यपुस्तकों को ही

अगर देखा जाए तो एक पहली बात जो ध्यान में आती है वह है — राष्ट्रीय स्तर पर पाठ्यपुस्तक का निर्धारण किया जाता है तथा बाद में उसका अनुवाद कर अन्य भाषिक प्रदेशों में भेजा जाता है। सांस्कृतिक स्तर पर देखा जाए तो यह भारतीय संस्कृति की विविधता को सही रूप में प्रस्तुत कर पाने में असफल सिद्ध होती है। भारतीय परिवेश में प्रत्येक राज्य स्तर पर भी अगर देखा जाए तो व्यापक विविधता देखने को मिलती है। पाठ्यपुस्तकों में सभी परिवेशीय विशेषताओं को

\*शोधार्थी, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नयी दिल्ली

प्रकट कर पाना असंभव हो जाता है इसलिए उन्हें मध्यम मार्ग अपनाना पड़ता है। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इस क्रम में हम अपनी सांस्कृतिक अस्मिता की कई विशिष्टताओं से वंचित रह जाते हैं। इन सांस्कृतिक अस्मिताओं से परिचय का सबसे सशक्त और प्रभावी उपकरण मातृभाषा है। मातृभाषा के माध्यम से हम अपनी भावी पीढ़ी को समृद्ध सांस्कृतिक विरासत से न सिर्फ अवगत करा सकते हैं बल्कि संतुलित, सहज और सहिष्णु वातावरण का निर्माण भी कर सकते हैं। आज सहिष्णुता के प्रश्नों से हमारा समाज जूझ रहा है, सांस्कृतिक अस्मिताओं के टकराव की स्थितियाँ उत्पन्न हो गयी हैं, धार्मिक विद्वेष की नयी परिस्थितियाँ भी हमारे समक्ष एक चुनौती की तरह आ खड़ी हो गयी हैं इन सभी प्रश्नों के जवाब को भी सांस्कृतिक अध्ययन के माध्यम से समझने का प्रयास किया जा सकता है। सह-अस्तित्व की अवधारणा को इस संदर्भ में देखा जा सकता है कि भारतीय संस्कृति ने अपने इतिहास में कई संस्कृतियों को अपनाकर एक ऐसी संस्कृति का उदाहरण पेश किया, जिसमें हर अस्मिता और समुदाय को स्थान मिला। शिक्षा के स्तर पर भी इन मूल्यों को सहेजने की आवश्यकता है।

भाषा और संस्कृति किसी समुदाय के निरंतर परिवर्तनशील तत्व होते हैं। जो समयानुसार अपने आप को आवश्यकतानुसार ढाल लेते हैं। किंतु शिक्षा में आज जिस तरह क्षेत्रीय विशेषताओं की अवहेलना की जा रही है, पाठ्यपुस्तकों में एक तरह की सामग्री को स्थान दिया जा रहा है। केवल और केवल कुछ केंद्रीय बिंदुओं के आधार पर क्या हम अपने सांस्कृतिक मूल्यों को सही अर्थों में प्रेषित कर पा रहे

हैं यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। भाषायी विविधता और सांस्कृतिक विविधता समान रूप से पाठ्यपुस्तकों के स्तर पर अवहेलनात्मक स्थिति में रहे हैं। आधुनिक शिक्षा में पहले-पहल सांस्कृतिक विविधता और भाषिक विविधता को अवरोध की तरह देखा गया। इस कारण एक भाषा, एक माध्यम जैसी सरलीकृत अवधारणाओं को अपनाया गया। बीसवीं सदी के अंत से इस अवधारणा में अब व्यापक अंतर आना शुरू हो चुका है। कई अध्ययन और शोध ये सिद्ध कर चुके हैं कि मातृभाषाओं में अधिगम अधिक सहज और स्थायी होता है — मातृभाषा के महत्त्व पर चर्चा करते हुए यूनेस्को द्वारा आयोजित संगोष्ठी में भाग लेने वाले विद्वान इस तथ्य पर एकमत थे कि मातृभाषा आज भी व्यक्ति के लिए समाज और संस्कृति के भीतर अपना स्थान ढूँढने और पाने का मुख्य साधन है और साथ ही वह उसके बौद्धिक व्यापार का आधार भी है। प्राथमिक स्तर पर शिक्षा को मातृभाषा में ही होना चाहिए। शोध यह भी सिद्ध कर चुके हैं कि अधिक भाषाओं के ज्ञान से बौद्धिक विकास और अधिक क्षमताशील होता है। अब शिक्षा में प्रयोग और व्यवहार को भी तवज्जो दी जा रही है। इस कारण व्यवहारीकृत शिक्षा को शिक्षा नीतियों में स्थान मिल रहा है। सांस्कृतिक अध्ययन भी इसी व्यवहारीकृत शिक्षा का ही उदाहरण है।

भारतीय संदर्भ में पाठ्यपुस्तकों के स्तर पर देखा जाए तो पहली बात जो ध्यान में आती है वह यह है कि मातृभाषाओं का शिक्षण केवल भाषिक ज्ञान तक सीमित है उसमें सांस्कृतिक और सामाजिक मूल्यों के लिए स्थान नहीं है। भारत के लंबे-चौड़े भौगोलिक स्वरूप में कई तरह के मौसम, स्थान, संस्कृति,

खान-पान, व्यवहार, रीति-रिवाज, धर्म, संप्रदायों एवं मान्यताओं का व्यापक महत्त्व है। इस विविधता को आज तक पाठ्यपुस्तकों में मात्र पढ़ाकर समेट दिया जाता है। किसी भी प्रदेश के पाठ्यपुस्तक के मातृभाषा संस्करण को भी अगर देखा जाए तो उसमें उस प्रदेश की विशेषता के दर्शन नहीं होते। क्या पुस्तकों का अनुवाद मात्र उन्हें शिक्षण में सहजता प्रदान करता है या उसमें स्थानीय संस्कृति का समावेश भी आवश्यक है। हिंदी भाषा-भाषी समुदाय को अगर देखा जाए तो उसमें कई संस्कृतियाँ अंतर्निहित हैं। बोलियाँ उनका प्रतिनिधित्व करती हैं। शिक्षा में हिंदी के माध्यम से वह शिक्षा प्राप्त करता है, यह प्रथम भाषा से मातृभाषा की यात्रा होती है — बच्चा प्रथम भाषा से मातृभाषा की ओर बढ़ता है। शिक्षा और साक्षरता के लिए कोई भी बोली-भाषी, हिंदी को अपनाता है। यह भी कहा जा सकता है कि हिंदी समुदाय के लिए बोलियाँ उनकी प्रथम भाषा है और हिंदी मातृभाषा के रूप में सिद्ध भाषा है। हिंदी के सहारे ही इस भाषा समाज के लोग अपनी सामाजिक अस्मिता को स्थापित करते हैं। यही तथ्य अन्य बोलियों के संदर्भ में भी सत्य है। इस तरह से हम पाते हैं कि पाठ्यपुस्तकें अपनी संस्कृति का सीमित प्रतिनिधित्व कर पाती हैं। भाषा को यदि व्यापक परिप्रेक्ष्य में पढ़ाया जाए, मात्र अनुवाद सरलता के लिए प्रयोग न करके, विषयवस्तु में भी आवश्यकतानुसार यदि परिवर्तन किया जाए तो इस समस्या का निवारण किया जा सकता है।

एन.सी.एफ. 2005 में भी इस बात पर बल दिया गया था कि यदि बच्चा मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण करता है तो व्यापक संदर्भ में अपनी समझ विकसित

करता है। व्यापक संदर्भ में वह इसलिए ग्रहणशील हो पाता है क्योंकि अन्य भाषा सीखने के अनावश्यक दबाव से मुक्त होकर वह ज्ञान अर्जित करता है।

“बहुभाषिकता, जो बच्चे की अस्मिता का निर्माण करती है और जो भारत के भाषा परिदृश्य का विशिष्ट लक्षण है, उसका संसाधन के रूप में उपयोग, कक्षा की कार्यनीति का हिस्सा बनाना तथा उसे लक्ष्य के रूप में रखना रचनात्मक भाषा शिक्षक का कार्य है। यह केवल उपलब्ध संसाधन का बेहतर इस्तेमाल नहीं है, बल्कि इससे यह भी सुनिश्चित हो सकता है कि हर बच्चा स्वीकार्य और संरक्षित महसूस करे और भाषिक पृष्ठभूमि के आधार पर किसी को पीछे न छोड़ा जाए।”

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005

प्रथम भाषा और मातृभाषा के रूप में वह भाषिक रूप से धीरे-धीरे सक्षम होना शुरू करता है। अगर उसी समय हम उस पर अन्य भाषा को माध्यम के रूप में सीखने पर जब विवश करते हैं तो उसकी ग्रहणशीलता को कम कर रहे होते हैं। इस प्रकार मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण करने से ग्रामीण और दूर-दराज के बच्चों को भी पर्याप्त अवसर मिल पाता है और वह आत्मविश्वासी बनते हैं। शिक्षा व्यक्ति में हीनता नहीं, बल्कि आत्मविश्वास का ही परिचायक होती है, किंतु वर्तमान परिस्थितियों में भारतीय संदर्भ में यह एक विचारणीय प्रश्न है। यहाँ माध्यम मात्र की भाषा को सीखने में बच्चे अपनी ऊर्जा खर्च करते रहते हैं। गांधी जी ने भी मातृभाषा के संबंध में कहा है — ‘मनुष्य के मानसिक विकास के लिए मातृभाषा

उतनी ही आवश्यक है जितना कि बच्चे के शारीरिक विकास के लिए माँ का दूध। बालक अपना पहला पाठ अपनी माता से ही पढ़ता है। इसलिए उसके मानसिक विकास के लिए मातृभाषा के अतिरिक्त कोई दूसरी भाषा लादना में मातृभूमि के खिलाफ समझता हूँ। स्पष्ट है, गांधी जी इस बात को रेखांकित कर रहे थे कि मातृभाषा में अर्जन करना बच्चे की नैसर्गिक प्रक्रिया है बाद में यदि मातृभाषा अध्ययन का माध्यम बनेगी तो स्वाभाविक तौर पर ज्ञान अर्जन की प्रक्रिया ज्यादा सक्षम एवं प्रभावी होगी। आज इस बात के महत्त्व को समझना होगा। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान भी अपनी भाषा के महत्त्व को उठाया गया। व्यक्ति स्व को अपने समाज से जुड़ा हुआ पाता है और अधिक प्रभावी रूप से अपनी अभिव्यक्ति कर पाता है। शिक्षा के संदर्भ में यह बात लागू होती है। अर्जन और अध्यापन की प्रक्रिया में हम इस बात को कैसे अस्वीकार कर सकते हैं। अपनी अस्मिता के प्रति जागरूक होना आज हमारी आवश्यकता भी है अन्यथा हम प्रचलित संस्कृति के आवरण में ढक जाएँगे और अपनी मौलिकता के नाम पर हम अपनी संपदा को सहेज नहीं पाएँगे।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के अनुसार द्विभाषिकता या बहुभाषिकता से निश्चित संज्ञानात्मक लाभ होते हैं। त्रिभाषा-फ़ॉर्मूला भारत की भाषा-स्थिति की चुनौतियों और अवसरों को संबोधित करने का एक प्रयास है। यह एक रणनीति है जिसे कई भाषाएँ सीखने के मार्ग को प्रशस्त करना चाहिए।

इसे कार्यरूप और भावरूप दोनों ही में अपनाने की आवश्यकता है। इसका प्राथमिक उद्देश्य भारत

में बहुभाषिकता और राष्ट्रीय सद्भाव का प्रसार है। निम्नलिखित दिशा-निर्देश इन लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक हो सकते हैं—

- भाषा शिक्षण बहुभाषिक होना चाहिए, केवल कई भाषाओं के शिक्षण के ही अर्थ में नहीं, बल्कि रणनीति तैयार करने के लिहाज से भी ताकि बहुभाषिक कक्षा को एक संसाधन के तौर पर प्रयोग में लाया जाए।
- बच्चों की घरेलू भाषा(एँ), जैसा कि 3.1 में पारिभाषित किया गया है, स्कूल में शिक्षण का माध्यम होनी चाहिए।
- अगर स्कूल में उच्चतर स्तर पर बच्चों की घरेलू भाषा(ओं) में शिक्षण की व्यवस्था न हो, तो प्राथमिक स्तर की स्कूली शिक्षा अवश्य घरेलू भाषा(ओं) के माध्यम से ही दी जाए। यह आवश्यक है कि हम बच्चे की घरेलू भाषाओं को सम्मान दें। हमारे संविधान की धारा 350-क के मुताबिक, ‘प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा।’
- बच्चे प्रारंभ से ही बहुभाषिक शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। त्रिभाषा फ़ॉर्मूला को उसके मूलभाव के साथ लागू किए जाने की ज़रूरत है, ताकि वह बहुभाषी देश में बहुभाषी संवाद के माहौल को बढ़ावा दे।
- गैर-हिंदी भाषी राज्यों में, बच्चे हिंदी सीखते हैं। हिंदी प्रदेशों के मामले में, बच्चे वह भाषा सीखें जो उस इलाके में नहीं बोली जाती है। इन भाषाओं के अलावा आधुनिक भारतीय भाषा

के रूप में संस्कृत का अध्ययन भी शुरू किया जा सकता है।

- बाद के स्तरों पर क्षेत्रीय और विदेशी भाषाओं से परिचय करवाया जा सकता है।

“साहित्य भी बच्चों की रचनाशीलता को बढ़ा सकता है। कोई कहानी, कविता या गीत सुनकर बच्चे भी स्वयं कुछ लिखने की दिशा में प्रवृत्त हो सकते हैं। उनको इसके लिए भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे अलग-अलग रचनात्मक अभिव्यक्ति के माध्यमों को आपस में मिलाएँ।”

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005

भारतीय संदर्भों में शिक्षण प्रक्रिया की बात करते समय इस बात को भी ध्यान रखना आवश्यक है कि शिक्षा माध्यम की भाषा बनने के बाद उस भाषा का भी विकास होता है। उससे जुड़े संस्कृति और समुदाय का भी विकास होता है। इस तरह भाषा के माध्यम से हम एक पूरे समाज में स्वावलंबन की प्रक्रिया को लागू करते हैं। इस तरह मातृभाषा शिक्षण के माध्यम से हम बच्चों को स्वावलंबन की प्रक्रिया शुरू करते हैं और अनुभव सिद्ध ज्ञान के संचरण का भी प्रयास करते हैं। इस तरह की शिक्षा में सबसे अधिक इस बात पर बल होता है — मातृभाषा शिक्षण का एक प्रमुख उद्देश्य, बच्चे की भाषा को या तो उस स्तर तक पहुँचाना या उन गुणों से संयुक्त करना है जो मान्य शैक्षिक भाषा का स्तर या गुण है या शैक्षिक भाषा को पहले उन बच्चों की भाषा के स्तर पर उतर कर यह सिद्ध करना है जिनको शिक्षा देना लक्ष्य है और फिर शिक्षा के दौरान उनमें भाषा के उन रूपों का विकास करते हुए

पढ़ाना है जो विषयवस्तु को समझने और उन्हें अनुभव सिद्ध कर अभिव्यक्त करने में सहायक हों। मातृभाषा शिक्षण वास्तव में स्वावलंबन की प्रक्रिया को सही रूप में लागू कर पाता है। अपने समाज और परिवेश के प्रति भी जागरूक करती है। नॉम चोम्स्की ने भी अपने अध्ययनों के माध्यम से इस बात पर बल दिया कि आधुनिक भाषा शिक्षण में मातृभाषाओं का व्यापक महत्त्व है। अर्जन की प्रक्रिया को सामर्थ्यपूर्ण रूप में लागू करने के लिए शिक्षा में मातृभाषाओं के महत्त्व स्वीकारना आवश्यक है।

शिक्षा के संदर्भ में भाषा के दो रूप होते हैं।

1. ज्ञानरूप — जिसमें स्वयं सिद्ध रूप और विषय माध्यम रूप शामिल होता है।
2. शक्ति रूप — भाषा की शक्ति के रूप में उसकी सांस्कृतिक संपदा निहित होती है। भाषा की यह शक्ति उसे ज्ञानार्जन की स्वाभाविकता की शक्ति से युक्त करती है।

बच्चे जब अपनी मातृभाषा से अलग भाषा को माध्यम रूप में अपनाते हैं तब वे लंबा समय उसे सीखने में लगाते हैं इस तरह वह लंबे समय तक भाषा के दूसरे रूप का लाभ उठा पाने में सफल नहीं हो पाते। भाषिक क्षमता के साथ परिवेशगत क्षमताएँ भी जुड़ी रहती हैं क्योंकि भाषा और समाज में कार्य-कारण संबंध होता है। समाज के संदर्भ में ही भाषा का अस्तित्व भी होता है। लैंग्वेज पावर का अध्ययन करते हुए विद्वानों ने यह भी पाया है कि आने वाली पीढ़ियाँ अपनी भाषिक महत्ता से वंचित होती जा रही हैं। भाषा की शक्ति में एक समाज की भी शक्ति अंतर्निहित रहती है — इस प्रकार से भाषा

एक ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संरचना है, जो ऐतिहासिक रूप से समाज और संस्कृति में होने वाले परिवर्तनों के साथ-साथ बदलती रहती है। अपनी भाषा से दूर होने की स्थिति में हम अपने परिवर्तनों और विकास को भी सही ढंग से समझ पाने में सक्षम नहीं हो पाएँगे क्योंकि अपनी भाषा के त्याग के साथ उसके साथ जुड़ा इतिहास और संस्कृति का भी हम त्याग कर देंगे।

### निष्कर्ष

भाषा से जुड़े नए अध्ययनों में यह सिद्ध हुआ है कि मातृभाषा में अर्जन प्रक्रिया बच्चों को अधिक क्षमताशील बनाती है, आधुनिक शिक्षा में मातृभाषा में शिक्षा देने की आवश्यकता पर बल दिया जा रहा है। अतः इस दृष्टिकोण के अनुसार मातृभाषा शिक्षण का प्रयोजन भाषा को कौशल रूप में पढ़ाना है। भाषा अगर कौशल रूप में पढ़ाई जाएगी तो भाषा के साथ जुड़ी कई और विशेषताओं से भी भावी पीढ़ी समृद्ध

होगी। वह अपने सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति भी अधिक सचेत होंगे तथा उनमें अपनी सांस्कृतिक विरासत के प्रति भी एक सहज स्वभाविक समझ विकसित होगी। मातृभाषा को पाठ्यक्रम में शामिल करने से व्यवहारीकृत शिक्षा को सही रूप में लागू किया जा सकता है क्योंकि अर्जन और व्यवहार की भाषा समान होगी। बच्चा जिस भाषा में संप्रेषण अथवा व्यवहार कर रहा होगा उसी भाषा में शिक्षा भी ग्रहण करेगा। प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा के प्रयोग के बाद माध्यमिक स्तर पर उन्हें अन्य भाषाएँ सिखाई जा सकती हैं। इससे वह बौद्धिक रूप से और अधिक समृद्ध होगा। आधार मजबूत होने के कारण उसकी आगे की शिक्षण क्रिया सहज रूप में विकसित होगी। निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि आज की शिक्षा पद्धति में मातृभाषा महत्वपूर्ण है। सशक्त और प्रभावी शिक्षण के लिए मातृभाषाओं को शिक्षण का माध्यम बनाना चाहिए।

### संदर्भ

- अग्निहोत्री, रमाकांत. 2008. *भाषा और भूमंडलीकरण*. संस्थान प्रकाशन, दिल्ली.  
 सिंह, दिलीप. 2010. *अन्य भाषा शिक्षण के बृहत संदर्भ*. वाणी प्रकाशन, दिल्ली.  
 सिंह, महिपाल. 2008. *विश्व बाज़ार में हिंदी*. वाणी प्रकाशन, दिल्ली.  
 श्रीवास्तव, रविन्द्रनाथ. 2005. *भाषा शिक्षण*. वाणी प्रकाशन, दिल्ली.

## भाषा विकास

कृष्ण चन्द्र चौधरी \*

प्रभात कुमार मिश्र \*\*

मानव जीवन में भाषा विकास का महत्वपूर्ण स्थान है और यह एक अर्जित गुण है। भाषा व्यक्ति को सार्थकता प्रदान करती है। अपने भावों-विचारों को दूसरों के समक्ष प्रस्तुत करना एवं दूसरे के भावों-विचारों को समझना भाषा का महत्वपूर्ण आयाम है। यद्यपि भाषायी विविधता भारत में हिन्दी, उर्दू, बांग्ला, पंजाबी, मराठी, तेलगू, तमिल, मलयाली इत्यादि कई तरह की भाषाएँ बोली जाती हैं। भारत में लगभग 1500 प्रकार की भाषाएँ बोलने वाले लोग हैं, इन भाषाओं को कुछ प्रमुख भाषाओं के साथ समूहबद्ध कर दिया जाता है। दूसरे शब्दों में कहें तो भाषा संप्रेषण का एक सशक्त माध्यम है और इसमें अभिव्यक्ति तथा समझना दोनों निहित हैं। अभिव्यक्ति संकेतों द्वारा (बिना बोले) या लिखकर की जा सकती है। बच्चे अभिव्यक्ति से पहले समझना सीखते हैं। भाषा विकास बौद्धिक विकास की सर्वाधिक उत्तम कसौटी मानी जाती है। बच्चे को भाषा का ज्ञान सर्वप्रथम परिवार से होता है। तत्पश्चात् समुदाय, समाज एवं विद्यालय के संपर्क में उसका भाषायी ज्ञान विकसित होता है।

भाषा सामाजिक आवश्यकता है और समाज में अपनी बात एक-दूसरे तक सफलतापूर्वक पहुँचाना ही भाषायी कौशल है। भाषा से ही मनुष्य चिंतन व मनन करता है, तर्क करता है, कल्पना करता है और अपनी पहचान स्थापित करता है, बच्चों को भाषा की आवश्यकता अपने विचारों व भावनाओं को व्यक्त कर अपने दूसरे साथी या किसी और व्यक्ति तक अपना संदेश पहुँचाने की लिए होती है। भाषा अन्य विषयों का ज्ञान प्राप्त करने का माध्यम है। भाषा का संबंध केवल लिखने और पढ़ने से नहीं है। बच्चे सामाजिक-सांस्कृतिक गतिविधियों के जरिये भाषा सीखते हैं। परिवार ही बच्चे का मूल सामाजिक वातावरण होता है। तत्पश्चात् वे शाला पूर्व शिक्षा केंद्रों एवं शालाओं के माध्यम से सामाजिक व्यवहार सीखते हैं। विभिन्न स्थानों व परिस्थितियों में भाषा का प्रयोग करने के मौके मिलना बच्चों के भाषायी विकास के लिए आवश्यक है। बच्चों के भाषायी विकास के लिये उन्हें अलग-अलग परिस्थितियों और स्थानों में भाषा का प्रयोग करने के अवसर उपलब्ध कराए जाने चाहिए।

भारतीय विचारकों ने भी बच्चों की गतिविधियों व टैगोर, श्री अरविन्द, गिजुभाई, ताराबाई मोडक आदि सीखने की क्रिया पर विचार प्रकट किए हैं। गांधी, कुछ भारतीय विचारक थे जिन्होंने बच्चों की शिक्षा

\*असिस्टेंट प्रोफेसर, मनोविज्ञान विभाग, एस. बी. कॉलेज, (वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय) मौलाबाग, आरा, जिला – भोजपुर (बिहार)

\*\* एसोसिएट प्रोफेसर, शैक्षिक मनोविज्ञान एवं शिक्षा आधार विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली



के लिए बाल-केंद्रित दृष्टिकोण की अवधारणा का निर्माण किया था। उनका यह मत था कि शिक्षा बच्चों को मातृभाषा में दी जानी चाहिए साथ ही, शिक्षा बच्चों के सामाजिक-सांस्कृतिक वातावरण से संबंधित होनी चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि समुदायों को भी बच्चों की शिक्षा में सीधी भागीदारी निभानी चाहिए क्योंकि भाषा अभिव्यक्ति का साधन है, मातृभाषा में बच्चे खुलकर स्वयं को अभिव्यक्त कर पाते हैं। यह मुख्य रूप से विभिन्न सूचनाओं मनोभावों चिंतनों और अनुभूतियों के आदान-प्रदान की पद्धति है, सुनना, समझना एवं अपने मन के भाव को व्यक्त करने की क्षमता भाषा के विकास से होती है। बच्चों को वार्तालाप, कहानी, गायन व कविता पाठकर एवं करवाकर धीरे-धीरे उनके आत्मविश्वास को जागृत करना होगा।

### भाषायी कौशल का विकास

जिस तरह से एक बच्चे का विकास आरंभिक दिनों में माँ के दुलार और प्यार के बिना अधूरा रह जाता है। उसी तरह के बच्चे के विकास में उस भाषा की भूमिका भी होती है जो उसकी माँ और परिजन बोलते हैं। यही भाषा बच्चे की मातृभाषा होती है। यद्यपि समाज में सफलतापूर्वक जीने के लिये हर व्यक्ति के लिए भाषायी कौशल आवश्यक है। भाषा का संबंध केवल लिखने और पढ़ने से नहीं है, बल्कि भाषा के उपयोग से ही मनुष्य चिंतन व मनन का कार्य करते हैं, तर्क करते हैं, कल्पना करते हैं और अपनी पहचान स्थापित करते हैं। बच्चों को भाषा की आवश्यकता इसलिए होती है, ताकि वे अपने विचारों को और भावनाओं को व्यक्त कर व अपने दूसरे साथी या

किसी और व्यक्ति की भाषा को समझ सकें। भाषा एक साधन के रूप में अन्य विषयों का ज्ञान प्राप्त करने में सहायक है।

भाषा कौशल में विशेष रूप से सुनना, बोलना, लिखना एवं पढ़ना शामिल होता है। भाषा कौशल को विकसित करने के लिये मुख्यतः दो आधारशिला महत्वपूर्ण होती हैं। एक भाषा ग्रहण करना, दूसरा भाषा अभिव्यक्त करना। दोनों ही स्थितियों में चिंतन, विचार का अपना विशेष महत्त्व है। भाषा का ग्रहण हम सुनकर एवं पढ़कर करते हैं उसी प्रकार से हम लिखकर एवं बोलकर भाषा की अभिव्यक्ति करते हैं। भाषायी विकास मौखिक रूप से अन्य लोगों के साथ संवाद करने की क्षमता प्राप्त करने को बताता है। जन्म के समय शिशु की मुख्य वाचिक क्षमता रोना होती है। समय के साथ जब वह बड़ा होता है तो एक-दो शब्द बोलना शुरू करता है जैसे पापा, मम्मी, दादा आदि। जब वह दो साल का होता है वह सरल वाक्य बोलने में सक्षम होता है। जैसे कि 'मुझे पानी दो' आदि और छह वर्ष की उम्र तक धाराप्रवाह बोलने में सक्षम होता है। शब्दावली, व्याकरण व संचार कौशल का विकास एक व्यक्ति की भाषा के विकास के अध्ययन का हिस्सा है।

भाषायी ज्ञान प्राप्त करने के लिए पहले कुछ वर्षों को महत्वपूर्ण माना जाता है। पहले वर्ष में भाषायी विकास के दौरान शिशु उम्र के लगभग 6 महीनों में बोलने का प्रयास और विभिन्न तरीकों से प्रतिक्रिया देना शुरू कर देता है जो इस बढ़ते बच्चे को भाषा का इनपुट प्रदान करता है। बच्चा जितनी समृद्ध भाषा सुनेगा वह उतना ही बोलने का प्रयास करेगा। अब



ऐसे बच्चों का उदाहरण लेते हैं जिन्हें सुनाई नहीं देता। ये बच्चे भी बड़बड़ाना शुरू कर देते हैं लेकिन वे भाषा और आसपास की आवाज़ सुन नहीं सकते हैं। बोलना सीखने के क्रम में आपको भाषा सुनने की आवश्यकता होती है। सुनने में अक्षम बच्चे को यदि शुरुआती अवस्था में सुनने के सहायक उपकरण लगा दिए जाएँ और बच्चा आसपास की भाषा और शब्द सुनने लगे तो संभावना है कि बच्चा सामान्य रूप से बोलना शुरू कर दे। मध्य बचपन या बाद में सुनने में सहायक उपकरण लगाना अधिक उपयोगी साबित नहीं होता क्योंकि बच्चे के लिए आवाज़ को भाषा में बदलने में मुश्किल होती है और बोलना सीखना मुश्किल हो जाता है। इससे यह साबित होता है कि बोलना सीखने के लिए पहले कुछ वर्ष महत्वपूर्ण माने जाते हैं। बच्चे ध्वनियों में भेद करना जानते हैं और इस तरह प्रारंभिक वर्षों में बोलना सीखते हैं। इन महत्वपूर्ण वर्षों के दौरान महत्वपूर्ण घटनाओं का सीखने से तालमेल होना चाहिए। महत्वपूर्ण अवधि समाप्त होने के बाद यदि महत्वपूर्ण घटनाएँ होती हैं तो बच्चे को यह क्षमता सीखने में मुश्किल होती है।

### भाषा विकास की विशेषताएँ

भाषा संकेतों की एक व्यवस्था है, जो बौद्धिक व सामाजिक गतिविधियों के क्रियान्वयन के लिए आवश्यक है। यह भाषा की मदद से ही है कि मनुष्य अपने पुराने अनुभवों व विचारों को व्यक्त करता है। यह अनुभवों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचने में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह बच्चों के मानसिक विकास के लिए भी अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि मनुष्य एक दूसरे से बात कर सकते हैं,

अनुभव बाँट सकते हैं, वे एक दूसरे से सीखते भी हैं और इसी तरह भाषा ज्ञान के वृहद संसार की प्रमुख इकाई साबित होती है।

बच्चे भाषा सीखने के शुरुआती चरणों में वस्तुओं को नाम से जोड़कर देखने का प्रयास करते हैं। अनुभव के साथ बच्चे वस्तुओं के साथ-साथ क्रियाओं का संबंध भी शब्दों के साथ स्थापित कर लेते हैं। धीरे-धीरे वे वस्तुओं पर सोचने से अमूर्त की तरफ बढ़ते हैं और क्रियाओं, बातचीत व चर्चा से सीखना शुरू करते हैं। भाषा सोचने की प्रक्रिया में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भाषा हमें स्वयं के अनुभवों को शब्द देकर उन्हें बेहतर समझने में सहायता करती है। भाषा में संकेतों के प्रयोग से यह भी मुमकिन हो पाता है कि हम उन अनुभवों को भी समझ पाते हैं जिन्हें हमने स्वयं अनुभव नहीं किया है। अतः भाषा व्यक्तियों को पूर्व अनुभवों को समझने में व भविष्य में होने वाले अनुभवों के बारे में सोच पाने को संभव बनाती है। भाषा व विचार एक-दूसरे पर आश्रित हैं। भाषा मानसिक क्षमताओं के कई और पक्षों के विकास को भी सुनिश्चित करती है जैसे — स्मृति, ध्यान केन्द्रण, काल्पनिक चिंतन इत्यादि। इसी के साथ भाषा लोगों के बीच संबंध स्थापित करने व उन्हें समझने के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण है।

भाषा को लिखित व मौखिक दो भागों में बाँटा जा सकता है। प्रारंभिक बाल्यावस्था में बच्चे दोनों पक्षों पर दक्षता प्राप्त के लिए तैयार होते हैं। बच्चे तीन वर्ष की आयु तक विद्यालय में आने से पूर्व ही अपनी मातृभाषा का प्रयोग करना जानते हैं। बच्चे शब्दों के साथ खेलना बहुत पसंद करते हैं। कई बार

वे एक शब्द को स्वयं के साथ ही बार-बार दोहराते हैं। ऐसा करना उन्हें नए शब्द बनाने व विशिष्ट ध्वनियों के उच्चारण में मदद करता है। वे भाषा संबंधित कई खेल खेलते हैं जैसे — शब्दों को अलग-अलग तरह से बोलना, गाने की कोशिश करना, कुछ वर्णों को हटा कर शब्दों में दूसरे वर्ण लगाकर बोलना इत्यादि। वे इन खेलों में आनंद लेते हैं और अधिकांशतः इनके अंत में हँसते भी हैं। ध्वनियों के प्रति जागरूकता, बच्चों को आगे चलकर भाषा पढ़ने व लिखने में बहुत मदद करती है। यह प्रक्रिया ज्यादातर पहले शब्दों से वर्ण तोड़कर बोलने से शुरू होती हुई और आगे तुकबन्दी वाले शब्दों की पहचान की ओर बढ़ती है। शब्दों के साथ-साथ बच्चे व्याकरण के बारे में भी बहुत कुछ स्वयं सीखते हैं। वे व्याकरण संबंधी कुछ चीजों को सीखने में थोड़ा समय लगाते हैं व कुछ को जल्दी सीख लेते हैं।

विकास के संदर्भ में यह वह उम्र है जब बच्चे पहली बार लिखित भाषा से परिचित होते हैं। ग्रामीण परिवेशों व कच्ची बस्तियों के संदर्भ में हो सकता है कि यह प्राकृतिक रूप से न हो, क्योंकि अभिभावक निरक्षर भी हो सकते हैं, पर फिर भी बच्चे अनेक वस्तुओं जैसे — मिठाइयों, खिलौनों इत्यादि के पैकेटों पर नाम लिखे हुए देखते हैं। ऐसे परिवार केंद्रों पर साक्षरता के अनुभव देने हेतु ज्यादा आश्रित होते हैं। ऐसा माना गया है कि कहानियों की किताबों से छोटी उम्र में परिचय, भविष्य में अच्छा पाठक बनने में सहायक होता है। क्योंकि कई बच्चों को घर पर ये किताबें उपलब्ध नहीं होती, सरकार की यह ज़िम्मेदारी बनती है कि वे बच्चों को किताबें मुहैया करवाए व उनका परिचय कराए।

## भाषा, विचार व शिक्षा

मनोवैज्ञानिकों, शिक्षाविदों और दार्शनिकों ने भाषा की भूमिका को अर्थ ग्रहण करने की प्रक्रिया में सबसे अहम माना है। उनके अनुसार, भाषा विचार की प्रक्रिया का मार्गदर्शन करती है और उससे निर्देशित भी होती है। विचार शब्दों में अभिव्यक्त किया जाता है व उसी से बनता भी है। छोटे बच्चे बातचीत की मदद से नई अवधारणाएँ सीखते हैं जो भाषा के ही प्रतिबिंब हैं। बच्चे अपने से अधिक अनुभवी व्यक्तियों व बच्चों के साथ संवाद तथा अंतःक्रिया करते हैं। इस प्रक्रिया में बच्चों को आरंभ में सहायता की आवश्यकता पड़ती है पर धीरे-धीरे वे इस प्रक्रिया में स्वयं निपुण हो जाते हैं। बच्चे भाषा को सबसे तेजी से तब सीखते हैं जब वे उस भाषा को अच्छी तरह बोलने वाले समुदाय का हिस्सा होते हैं।

## भाषा विकास की प्रारंभिक अवस्था

सबसे पहले चरण के रूप में बच्चा जन्म लेते ही रोने एवं चिल्लाने की चेष्टाएँ करता है। रोने, चिल्लाने की चेष्टाओं के साथ ही वह अन्य ध्वनि या आवाज़ें भी निकालने लगता है। ये ध्वनियाँ पूर्णतः स्वाभाविक, स्वचालित एवं नैसर्गिक होती हैं। उपरोक्त क्रियाओं के बाद बच्चे के बड़बड़ाने की क्रियाएँ तथा चेष्टाएँ शुरू हो जाती हैं। इस बड़बड़ाने के माध्यम से बच्चे स्वर तथा व्यंजन ध्वनियों के अभ्यास का अवसर पाते हैं। वे कुछ भी दूसरों से सुनते हैं तथा उसे समझते हैं। उसी रूप में वे उन्हीं ध्वनियों को किसी-न किसी रूप में दोहराते हैं। हाव-भाव तथा इशारों की भाषा बच्चों को धीरे-धीरे समझ में आने लगती है। इस अवस्था में वे प्रायः एक-दो स्वर-व्यंजन ध्वनियाँ निकाल कर

उसकी पूर्ति अपने हाव-भाव तथा चेष्टाओं से करते दिखाई देते हैं।

सभी बच्चे चाहते हैं कि उनकी ओर लोग ध्यान दें इसलिए वे अभिभावकों से प्रश्न पूछकर, कोई समस्या प्रस्तुत करके तथा विभिन्न तरीकों का प्रयोग कर उनका ध्यान अपनी ओर खींचते हैं। अर्थात् बच्चे ध्यान खींचने के लिए भाषा का प्रयोग भी करते हैं।

भाषा के माध्यम से ही कोई व्यक्ति समाज के साथ आपसी ताल-मेल विकसित कर पाता है। भाषा के जरिए अपने विचारों को अभिव्यक्त कर समाज में अपनी भूमिका निर्धारित करता है। अन्तर्मुखी बच्चा समाज से कम अन्तःक्रिया करते हैं, इसलिए उनका पर्याप्त सामाजिक विकास नहीं होता। अर्थात् बच्चे सामाजिक संबंध स्थापित करने के लिए भी भाषा का प्रयोग करते हैं।

बच्चे सामाजिक व सांस्कृतिक अंतःक्रिया के जरिये भाषा सीखते हैं। शुरुआती दौर में परिवार ही उनका मूल सामाजिक वातावरण होता है। बाद में वे स्कूल व व्यापक समाज से सह-व्यवहार करते हैं। विभिन्न स्थानों व परिस्थितियों में भाषा का प्रयोग करने का मौका मिलना बच्चों के भाषायी विकास के लिए आवश्यक है। बच्चों के भाषायी विकास के लिए यह जरूरी है कि उन्हें अलग-अलग परिस्थितियों और स्थानों में भाषा का प्रयोग करने का मौका दिया जाये।

बच्चे की भाषा विकास के लिए आवश्यक है कि उन्हें समृद्ध भाषायी परिवेश उपलब्ध कराया जाए। भाषा से जुड़ी विभिन्न रोचक गतिविधियाँ भी उनके भाषा-विकास में सहायक हो सकती हैं।

छोटे बच्चे अपने परिवेश में निरंतर भाषा सीखते रहते हैं, किंतु आप उन्हें और अच्छी तरह से भाषा सिखा सकते हैं। पाठशाला जाने पर उन्हें पढ़ना-लिखना सिखाया जाता है, जो कि भाषा विकास के लिए एक मील का पत्थर साबित होता है। भाषा समझना और अच्छी तरह से बोलना आ जाना चाहिए और अपने विचारों और भावों को भी अपनी मातृभाषा में अभिव्यक्त करना आना चाहिए। बच्चे भाषा कई प्रकार से सीखते हैं जैसे सुनने से, अनुकरण से, दोहराने से, बातचीत करने से, अभ्यास से, दूसरों के प्रोत्साहन से आदि। इस प्रकार भाषा विकास के लिए बच्चों को कहानी (शेर, हाथी, खरगोश, बंदर आदि), दैनिक क्रियाकलाप, नैतिक शिक्षा, गीत, कविताएँ, लोरी (गंगा, कोयल, चंदामामा, विनती, फूल, झंडा, जानवरों आदि) सुनाते समय सुनियोजित व सुव्यवस्थित तरीके के साथ ही हाव-भाव के साथ प्रभावी तरीके से (मनमोहक) संप्रेषित करवाना चाहिए। बच्चों से मौखिक निबंध लिखावाना चाहिए और बच्चों को पालतू, जंगली व जल में रहने वाले जानवरों के संदर्भ में जानकारी देना एवं उससे रू-ब-रू करना चाहिए; जो कि चित्र के माध्यम से हो सकता है या आसपास के परिवेश में अथवा चिड़ियाघर (वन्य पशु एवं पक्षी प्राणी संग्रहालय) में जाकर। इससे भाषा विकास में गुणात्मक परिवर्तन होता है।

### **प्रारंभिक बाल्यावस्था के संबंध में भाषा विकास**

प्रारंभिक बाल्यावस्था में बच्चों की भाषा का विकास एक विविध एवं समग्र प्रक्रिया है जिसमें प्रभावशाली अनेक घटक शामिल होते हैं। इससे भी अधिक प्रभावशाली है उनके भाषा सीखने की प्रक्रिया का

यह गुण कि वह बहुत सारी चीज़ें सहज रूप से स्वयं ही सीख लेते हैं। बच्चे छोटी उम्र में बहुत तेज़ी से भाषा सीखते हैं। कई बार वे 3 से 4 नए शब्द एक दिन में सीख लेते हैं। 6 वर्ष की आयु में बच्चों का शब्द भण्डार करीब 8000 से 12000 शब्दों का होता है। वे लगभग 3 से 6 शब्द एक दिन में व 25 शब्द एक सप्ताह में सीखते हैं। इससे यह भी साबित होता है कि वे इन नए शब्दों के साथ कई नई अवधारणाएँ भी सीखते हैं। कई बार नए शब्द से केवल एक बार का परिचय, नई अवधारणा को सीखने के लिए पर्याप्त होता है और कई बार उस शब्द के अर्थ से संबंधित लंबी चर्चा की आवश्यकता होती है। छोटे बच्चे, नए शब्दों का प्रयोग; कई मिलती-जुलती वस्तुओं या घटनाओं के लिए करते हैं। इसके बाद वे एक जैसी वस्तुओं के वर्गीकरण कर पाने से आगे बढ़कर वस्तुओं के बीच समानताओं व भिन्नताओं को देख पाने के चरणों तक पहुँचते हैं।

शिक्षकों का यह समझना अत्यंत आवश्यक है कि आरंभिक बाल्यावस्था में बच्चे शब्दों को चित्रों के रूप में देखते हैं और इसी रूप से पढ़ने का नाटक करते हैं। इससे वे यह समझते हैं कि पढ़ने का मतलब लिखी हुई चीज़ों को देखने व उसे बोलने से है। पढ़ना कुछ दक्षताओं के विकसित होने के उपरांत ही संभव हो पाता है जैसे — वर्णों का ध्वनियों से संबंध स्थापित करना, लिखित शब्दों या वाक्यों का चित्रों से अंतर कर पाना इत्यादि। बच्चे कई संदर्भों में शब्दों को देखते हैं, जैसे जब वे अपने बनाए चित्रों पर नाम लिखते हैं और इससे उसकी पहचान आसानी से कर लेते हैं। धीरे-धीरे वे शब्द में निहित वर्णों की विशिष्ट

विशेषताएँ भी पहचानने लगते हैं। आड़ा-तिरछा लिखना, देख के लिखना, शब्दों को अलग-अलग कोणों से लिखना या अक्षरों के बीच बिना जगह छोड़े लिखना ये सब बच्चों के लिखने के शुरुआती स्तरों की आम बातें हैं। इन बातों का ध्यान रखते हुए, शिक्षक को भाषा के मौखिक पक्षों पर अधिक ध्यान देना चाहिए व साथ ही यह सुनिश्चित करना चाहिए कि साक्षरता पूर्व दक्षताओं पर उपयुक्त कार्य किया जा रहा है। यह ज़रूरी है कि साक्षरता पूर्व दक्षताओं को भी भाषा के वृहद संदर्भ जैसे — मौखिक भाषा विकास, शब्द भण्डार विकास, वाक्यों को समझने की दक्षताएँ इत्यादि से जोड़कर देखा जाए।

बच्चे अपने परिवारजनों तथा साथियों की भाषा का अनुकरण करके सीखते हैं। जैसी भाषा जिस समाज या परिवार में बोली जाती है बच्चे उसी भाषा को सीखते हैं। यदि बच्चे के समाज व परिवार में प्रयुक्त भाषा में कोई दोष हो, तो उस बच्चे की भाषा में भी दोष परिलक्षित होता है।

### **भाषा विकास (सुनना व बोलना)**

#### **3 से 4 आयु वर्ग में**

- 1.1 घर के बारे में चर्चा करना
- 1.2 बच्चे की मातृभाषा में कही जाने वाली छोटी-छोटी कविताओं या शब्दों को सुनना व सुनाना
- 1.3 कहानी सुनाना एवं उसमें भाग लेना
- 1.4 मौखिक निर्देशों के अनुसार कार्य कर पाना
- 1.5 स्वयं से जुड़े प्रश्नों के उत्तर दे पाना
- 1.6 सुनी हुई कहानियों पर सामान्य प्रश्न करना
- 1.7 कविताओं को सुनकर दोहराना (समूह में)

#### 4 से 5 वर्ष

- 2.1 घर व परिवार के बारे में चर्चा करना
- 2.2 मौखिक निर्देशों का पालन करना
- 2.3 मातृभाषा में कविताएँ, कहानी, संवाद सुनना व दोहराना
- 2.4 स्वयं से जुड़े प्रश्नों के उत्तर दे पाना और अपना अनुभव बताना
- 2.5 कहानी सुनना एवं उसमें भाग लेना चित्रों को देखकर अथवा कहानी सुनकर चित्र बनाने का प्रयास करना

#### 5 से 6 वर्ष

- 3.1 परिवार व परिवेश से संबंधित चर्चा में भाग लेना
- 3.2 मौखिक निर्देशों के अनुसार कार्य करना
- 3.3 परिचित शब्दावली में कविता, कहानी को हाव-भाव के साथ सुनाना
- 3.4 कहानी सुनाना एवं उसके पात्रों के अनुसार अभिनय करना
- 3.5 न्यूनतम दो चरण के निर्देशों को समझना

#### भाषा विकास (पढ़ने एवं लिखने की पूर्व तैयारी)

##### 3 से 4 आयु वर्ग में

- 1.1 चित्रों (पशु, पक्षी, फल, सब्जी आदि) को देखकर उनके नाम बताना
- 1.2 पशु-पक्षियों की बोली को पहचानना एवं दोहराना
- 1.3 उत्सव, त्यौहार, स्थानीय मेले की सामान्य जानकारी को बताना
- 1.4 चॉक, पेंसिल को पकड़ने का अभ्यास, ब्लैक बोर्ड पर आड़ी तिरछी रेखाओं को बनाना (लेखन पूर्व अभ्यास)

#### 4 से 5 वर्ष

- 2.1 उत्सव, त्यौहार, मेले के बारे में बताना, चित्रों को देखकर उन पर चर्चा करना।
- 2.2 चित्रों में रंग भरना
- 2.3 अंकों व अक्षरों के मध्य उंगली, पेंसिल चलाना
- 2.4 परिचित शब्दों में शुरू की ध्वनि को पहचानना जैसे — ट मा टर
- 2.5 लिखने पूर्व तैयारी में चरण का अभ्यास करना
- 2.6 सरल चित्र बनाना व रंग भरना

#### 5 से 6 वर्ष

- 3.1 चित्रों को देखकर उत्सव, त्यौहार, मेले, घटना का वर्णन करना
- 3.2 संकेत पठन (इशारों को समझना)
- 3.3 सरल चित्रों के साथ-साथ कल्पना आधारित चित्रों का निर्माण करना
- 3.4 चित्रों के माध्यम (दृश्य पठन) से कहानी सुनाना
- 3.5 शब्द की ध्वनि को पहचानना-तुकांत शब्द बोलना
- 3.6 परिचित शब्दों में शुरू, मध्य व अंत की ध्वनि को पहचानना जैसे-ट मा टर

बच्चों को शाला पूर्व शिक्षा में बोलना सिखाया जाता है। नामकरण खेल गतिविधि से बच्चों में एक दूसरे के नाम जानने का विकास होता है। शाला पूर्व शिक्षा की आवश्यकता के प्रमुख तथ्य इन वर्षों में बच्चा जल्दी से सीखता है। शाला पूर्व शिक्षा के मुख्य कारक बच्चों को विकास के लिये उचित परिवेश दे पाते हैं। उन्हें प्राथमिक शिक्षा के लिए तैयार कर पाते हैं। शालापूर्व अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम से भाषा का विकास किया जा सकता है जिसमें बौद्धिक

विकास, मनो-सामाजिक विकास, संज्ञानात्मक विकास शामिल है।

### भाषा विकास की प्रगति

बच्चों की आयु	बच्चों का शब्द भंडार	अध्ययनकर्ता
जन्म से 8 माह	0 शब्द	स्मिथ
9-12 माह	3-4 शब्द	शरमन
1½ वर्ष तक	10-12 शब्द	शरमन
2 वर्ष तक	272 शब्द	शरमन
2½ वर्ष तक	450 शब्द	शरमन
3 वर्ष तक	1000 शब्द	शरमन
3½ वर्ष तक	1250 शब्द	शरमन
4 वर्ष तक	1600 शब्द	शरमन
5 वर्ष तक	2100 शब्द	शरमन
11 वर्ष तक	50000 शब्द	शरमन
14 वर्ष तक	80000 शब्द	शरमन
16 वर्ष तक	1 लाख से अधिक शब्द	शरमन

### भाषा विकास की गतिविधियाँ

#### सुनना, समझना एवं बोलना

- आवाज़ के खेल
- छोटी-छोटी कविताएँ
- अभिनय गीत
- वार्तालाप (बातचीत)
- संदेशों का पालन करना
- चित्र वर्णन
- घटना का वर्णन

- सभी प्रकार के परिचय, प्राणी, पक्षी, वाहन, फल, फूल, आवाज़, दालें, कपड़े बर्तन गहने सिक्के, लीटर आदि
- कहानी — मौखिक, चित्र द्वारा मुखौटों द्वारा, कठपुतली द्वारा
- पहेलियाँ बूझना
- भाषा के खेल-शब्दों की श्रृंखला, अक्षरों के खेल आदि।

#### पढ़ने एवं लिखने की पूर्व तैयारी

- आकार समझना
- आकार बनाना, चित्र में रंग भरना
- आड़ी खड़ी लाइनें बनाना
- बिंदु मिलाना
- अंक अक्षरों पर उंगुली घुमाना
- अंक अक्षरों पर पेंसिल घुमाना

भाषात्मक गतिविधियाँ — मुक्त वार्तालाप, गीत, कविता, कहानियाँ, कहानी का नाटकीयकरण, पहेलियाँ, सुनने की क्षमता का विकास, भाषा के खेल, ध्वनि के प्रकार, आदेश, पढ़ने के लिए तैयारी, लिखने के लिए तैयारी।

सुनने के कौशल-निर्देश समझने वाली गतिविधियाँ — एक समय में दिये गये एक निर्देश को समझ सकें (3-4 साल)। एक समय में दिये गये दो या तीन निर्देश को समझ सकें और अनुसरण कर सकें (4-5 साल)। एक समय में दिये गये 2-3 पेचीदा निर्देशों का अनुसरण कर सकें (5-6 साल)।

शब्द भण्डार का विकास — वतावरण में पायी जाने वाली वस्तुओं की पहचान, पक्षियों और फल, सब्जियों के नाम बताना, चीजों के नाम तथा काम

बताना जैसे पक्षी व उसका घोंसला-वातावरण में पाई जाने वाली चीजों के नाम, काम व कार्य बताना जैसे — पौधे के विभिन्न भाग।

मौखिक अभिव्यक्ति का विकास — कविता या गीत सुनाना, किसी सरल कविता या तुकबंदी को उपर्युक्त मुद्रा एवं हावभाव के साथ सुनाना, किसी सरल कविता या तुकबंदी को उपर्युक्त मुद्रा एवं हाव-भाव के साथ सुनाना।

पढ़ने की तैयारी — चित्र पठन, वस्तुओं की पहचान और उनका नाम बताना, वस्तुओं और उनके कार्य के बारे में बताना चित्र का विषय बताना और कहानी की रचना करना।

लिखने की तैयारी — बिन्दुओं को जोड़ना, अधिक बिन्दुओं को जोड़ना, कागज स्लेट या बालू पर विभिन्न बिंदुओं को आकारों और चाक से जोड़ना, बिन्दुओं को जोड़कर विभिन्न प्रकार के आकार व नमूने बनाना।

बहुभाषावाद (बहुभाषिकता) की ओर — भाषा, संवाद, सूचना का आदान-प्रदान, पढ़ने के कौशल का विकास आदि किसी भी व्यक्ति कि समझ के साथ पढ़ने की दक्षता और बाद के वर्षों की शैक्षिक सफलता अर्जित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत जैसे बहुभाषी देश में भाषा का अधिग्रहण और भाषा सिखाना एक बहुपक्षीय मुद्दा है। भले ही छोटे बच्चों को औपचारिक रूप से भाषा नहीं सिखाई जाती है, फिर भी भाषा अधिग्रहण बच्चों के शारीरिक, सामाजिक और संज्ञानात्मक विकास का हिस्सा है।

बच्चों को सिखाने के लिए प्रारंभ में उसी भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए, जो उसकी मातृभाषा

है एवं जिस भाषा से वह परिचित है। प्रायः बच्चे उसी भाषा को समझते हैं, जिसे वह सुनते हैं। चूँकि, इस आयु समूह के बच्चों का अधिकतम समय अपने परिवार में ही व्यतीत होता है इसलिए बच्चे मातृभाषा में ही अपने आपको सहज महसूस करते हैं। इसलिए बच्चों से उनके लिए सहज भाषा का प्रयोग करते हुए फिर उस भाषा में बातचीत की जानी चाहिए जो आसपास के लोग बोलते हैं या बच्चे टी.वी. और रेडियो के माध्यम से सुनते हैं। जो बच्चे अपनी स्थानीय बोली या क्षेत्रीय भाषा बोलते हैं उन्हें उपर्युक्त सहायक सामग्री द्वारा धीरे-धीरे स्कूल में प्रयोग में लायी जाने वाली भाषा से जोड़ना चाहिए। धीरे-धीरे परिचित से अपरिचित या ज्ञात से अज्ञात की ओर जाने से बच्चों के अंदर सीखने की जिज्ञासा पैदा होती है तथा जिस चीज को सीखने की जिज्ञासा पैदा हो जाए उस चीज को सीखना आनंददायक हो जाता है।

शाला पूर्व शिक्षा केंद्रों में आने वाले बच्चे यदि अलग-अलग भाषा बोलने वाले परिवारों से आए हों तो केंद्र पर बच्चों को इस तरह के बच्चों को एक साथ बैठाना चाहिए, जिनके परिवारों की बोली आपस में मिलती जुलती हो। सभी भाषाओं में बोले जाने वाले कुछ शब्द ऐसे होते हैं जो दूसरी भाषाओं में भी बोले जाते हैं। अतः ऐसे शब्दों के माध्यम से बच्चों को भाषा सिखाई जानी चाहिए। जिन बच्चों को भाषा में कठिनाई आ रही हो उन्हें धीरे-धीरे उनकी भाषा में उपर्युक्त शब्दों के अर्थ के साथ अनुभव प्रदान कर विद्यालयी भाषा तक लाना आवश्यक है, इसमें परिवार का सहयोग भी लिया जा सकता है।



## संदर्भ

- एन.सी.ई.आर.टी. 2006 राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा 2005. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- . 2006. एन.सी.एफ़. 2005 नेशनल फोकस ग्रुप. पोजिशन पेपर ऑन अर्ली चाइल्डहुड केयर एंड एजुकेशन. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- एन.सी.एफ़.टी. 2009. नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क फॉर टीचर एजुकेशन—टुवर्ड्स प्रिपेरिंग प्रोफेशनल एंड ह्यूमन टीचर. एन.सी.ई.आर.टी. नयी दिल्ली.
- कौल, वी. 2010. अर्ली चाइल्डहुड एजुकेशन प्रोग्राम. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- प्रसन्न, के. 2005. 'राष्ट्रीय पाठ्यचर्चा की रूपरेखा 2005—एक विमर्श'. योजना, नयी दिल्ली.
- बर्क, ई. ल्यूरा, 2006. चाइल्ड डेवलपमेंट, सातवाँ संस्करण, पियरसन प्रिंटिस हॉल, दिल्ली.
- भटनागर, आर. 2005. लिटिल स्टेप्स. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- भारत सरकार. 2007. नेशनल नॉलिज कमीशन रिपोर्ट 2007. भारत सरकार, नयी दिल्ली.
- महिला एवं बाल विकास मंत्रालय. शालापूर्व शिक्षा पाठ्यक्रम रूपरेखा — 2012. महिला एवं बाल विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली. [http://dietaizaw1.weebly.com/uploads/3/1/0/2/31022827/ecce\\_curriculum\\_framework\\_draft.pdf](http://dietaizaw1.weebly.com/uploads/3/1/0/2/31022827/ecce_curriculum_framework_draft.pdf) पर ऑनलाइन देखा गया।
- रंगनाथन, एन. 2000. दी प्राइमरी स्कूल चाइल्ड — डेवलपमेंट एंड एजुकेशन, ओरियंट लाँगमैन, नयी दिल्ली.
- रुबेलो ब्रिटो, पी और एम.सी. लिमिलगन. 2012. स्कूल रेडीनेस एंड ट्रांजिशन, यूनीसेफ, न्यूयॉर्क, यूएसए.
- स्वामीनाथन, एम. और पी. डेनियल, 2004. प्ले एक्टिविटीज फॉर चाइल्ड डेवलपमेंट—ए गाइड टू प्रीस्कूल टीचर्स. नेशनल बुक ट्रस्ट, नयी दिल्ली.
- स्वामीनाथन, एम. 1987. बच्चों के लिए खेल-क्रियाएँ. यूनीसेफ, नयी दिल्ली.

## बच्चों में जानने और समझने संबंधी उपकरणों का विकास एक विवेचन

इन्दु दहिया\*

यह लेख 21वीं शताब्दी के लिए शिक्षा पर बने डैलर्स आयोग (1996) की विवेचना है। इस लेख में आयोग द्वारा प्रस्तावित शिक्षा के चार स्तंभों में से प्रथम स्तंभ की दार्शनिक तथा मनोवैज्ञानिक व्याख्या है। इस आयोग को *लर्निंग — दि ट्रेज़र विदिन (Learning: The Treasure Within)* की संज्ञा दी गई है। इस शोध पत्र का आशय एक प्राथमिक अध्यापक के लिए उन प्रायोगिक शैक्षणिक निहितार्थों को स्पष्ट करना है जिनके आधार पर वह बच्चों को स्वयं चिंतन करने में सहायता कर सकते हैं।

बच्चों की शिक्षा में अध्यापक का कार्य अथवा कर्तव्य उन्हें ज्ञान देना नहीं, अपितु उन्हें इस योग्य बनाना है कि वे स्वयं ज्ञान का सृजन कर सकें। इस बात के लिए कि बच्चे स्वयं चिंतन करना सीख जाएँ, उन्हें सर्वप्रथम स्वयं जानने तथा बोध के लिए अनिवार्य ज्ञानार्जन साधनों या उपकरणों का विकास करना होगा। डैलर्स आयोग (1996) के अनुसार ये उपकरण हैं — एकाग्रता की शक्ति तथा स्मृति और विचारण की शक्ति का विकास। इन शक्तियों के विकास में सक्षम होने के लिए अध्यापक को चाहिए कि वह बच्चों में उनकी विवेचनात्मक योग्यता की उत्प्रेरणा में सहायता करें, उनकी बौद्धिक जिज्ञासा जागृत करें और वैज्ञानिक अभिवृत्ति प्राप्त करने में उनकी सहायता

करें। इस बात के लिए कि बच्चे अपने अनुभवों के आधार पर चिंतन तथा तर्क का प्रयोग कर सकें, दैनिक जीवन के अनुभवों पर आधारित उपयुक्त प्रश्नों तथा स्थितियों का निर्माण किया गया है जो उन्हें उनका हल ढूँढ़ने के लिए प्रेरित कर सकते हैं।

डैलर्स आयोग (1996) का मानना है कि वर्तमान सभ्यता एक ज्ञान संचालित सभ्यता है, जहाँ निरंतर रूप से वर्तमान ज्ञान तथा कौशलों का विकास हो रहा है और जो भविष्य की कुशलताओं का आधार निर्मित करते हैं। शिक्षा की अपेक्षाओं के प्रति पारंपरिक तरीके अनिवार्यतः मात्रात्मक तथा सूचना आधारित रहे हैं, अतः वर्तमान स्थिति में वे उपयुक्त नहीं हैं अर्थात् एक बच्चे को शिक्षित करने का अर्थ यह नहीं है कि प्रत्येक

\*असिस्टेंट प्रोफेसर, भवन लीलावती मुंशी कॉलेज ऑफ़ एजुकेशन, कस्तूरबा गांधी मार्ग, नयी दिल्ली

बच्चे को ढेर सारा ज्ञान प्रदान करने की आवश्यकता होगी। अपितु आवश्यकता इस बात की है कि उसे ऐसे उपकरणों या साधनों से लैस किया जाए जिससे वह स्वयं सीखने, अपने कौशलों व अभिवृत्तियों को अधिक व्यापक बनाने, अपने परिवेश को समझने और उसके अनुरूप अपने आपको ढालने या रूपांतरित करने के अवसरों को समझ सके। आयोग की इस रिपोर्ट में शिक्षा की कल्पना एक ऐसी इमारत के रूप में की गई है जो चार स्तंभों पर खड़ी है। इस आयोग के अनुसार ये स्तंभ हैं — (1) जानना सीखना, (2) करना सीखना, (3) मिलजुल कर रहना सीखना, तथा (4) अपने अस्तित्व को बनाए रखना सीखना। एक रूप में ये चार प्रकार के अधिगम हैं जिनकी व्यक्ति को एक सार्थक जीवन जीने के लिए आवश्यकता पड़ती है।

यहाँ पर ‘जानना सीखना’ या अधिगम प्राप्त करना सीखना से तात्पर्य है समझ या विवेक के उपकरणों की योग्यता को अर्जित करना। ‘करना सीखना’ से अभिप्राय है अपने परिवेश को सृजनात्मक रूप से प्रभावित करने या बदलने की योग्यता प्राप्त करना है। ‘मिलजुल कर रहना सीखना’ से तात्पर्य है समस्त मानव क्रियाकलाप में दूसरे व्यक्तियों के साथ सहभागित्व व सहयोगपूर्वक रहना सीखना तथा ‘अस्तित्व की पहचान बनाए रखना सीखना’ स्वयं को एक विशिष्ट, पहचान, प्रकृति या भूमिका के रूप में प्रस्फुटित करना है। अधिगम अथवा ज्ञान के ये चार पग (मार्ग) एक संघटित समष्टि का निर्माण करते हैं जो शिक्षा का सार है। इस लेख में इन चारों में से प्रथम प्रकार के अधिगम की विस्तार से व्याख्या की गई है।

## जानना सीखने की योग्यताओं का विकास

डैलर्स (1996) के अनुसार अधिगम करना सीखना या ज्ञान का निर्माण करना सीखना अलग-अलग ज्ञान प्राप्त करने के विषय नहीं है, अपितु जानने, समझने या खोज करने के साधन हैं, जिससे व्यक्ति को वैयक्तिक शोध के सुख की अनुभूति होती है। जानना सीखने के लिए निम्नलिखित योग्यताओं का विकास अनिवार्य है —

### (क) बौद्धिक जिज्ञासा की उत्प्रेरणा

इस प्रकार के अधिगम में बच्चों को दीक्षित करने या प्रवर्तित करने के लिए सर्वप्रथम अध्यापक को उन तरीकों के विषय में विचार करना चाहिए जिनसे वे बच्चों की बौद्धिक जिज्ञासा को उत्प्रेरित कर सकें। ऐसा करने के लिए आप बच्चों से विभिन्न प्रकार के प्रश्न पूछ सकते हैं अथवा ऐसी अवस्थितियों का निर्माण कर सकते हैं जिनसे उनकी जिज्ञासा जागृत हो सके। बच्चे के बाल्यकाल का एक अति महत्वपूर्ण पक्ष है उसके शरीर में विद्यमान 5 ज्ञानेंद्रियों का बोधा बच्चे जैसे-जैसे अपने वातावरण का प्रेक्षण करते हैं, साथ ही साथ वे विभिन्न ध्वनियों, दृश्यों, गंधों, स्वादों तथा संवेदनाओं को पहचानना तथा उनमें भेद करना दोनों सीख जाते हैं। ऐसे अनुभवों के आधार पर वे स्वयं के तथा अपने वातावरण के प्रति जिज्ञासा का भाव विकसित कर लेते हैं जो स्वयं को समझने में उनकी सहायता करता है। स्मरण रहे कि जिज्ञासा को सफलता या निष्पत्ति का इंजिन भी कहा जा सकता है। बौद्धिक जिज्ञासा एक जन्मजात अभिप्रेरणा होती है जो उसे सीखने के लिए प्रेरित करती है (लार्वेस्टाईन, 1994)।

बच्चे को बौद्धिक जिज्ञासा की ओर अग्रसर करने के लिए यह आवश्यक है कि कक्षा-कक्ष भली-भाँति प्रकाशित हो, प्रमुदित करने वाला हो तथा आकर्षक हो। दूसरे, पाठ को पढ़ाते समय हम सुनिश्चित करें कि बच्चों की अधिकाधिक ज्ञानेंद्रियों को सम्मिलित किया गया है और सभी बच्चे पाठ के विकास में सहभागी हैं, न केवल वे बच्चे जो अपना हाथ उठाते हों। इससे भी महत्वपूर्ण है कि बच्चों को छानबीन करने, चिंतन करने तथा खोजने के लिए समय दिया जाए। किसी प्रश्न का तत्काल उत्तर नहीं माँगना चाहिए। बच्चों को सिखाया नहीं जाना चाहिए; उनमें तो (जैसा आइंस्टीन ने कहा था), जाँच पड़ताल करने की पवित्र जिज्ञासा जन्मजात ही होती है, जिसे जागृत किए रखना अध्यापक के लिए अनिवार्य है।

### **(ख) बच्चों की विवेचनात्मक मनीषा या योग्यता को उत्प्रेरित करना**

इसके लिए ऐसे उत्प्रेरकों/उद्दीपकों के विषय में सोचें जो आप उन्हें प्रदान कर सकते हैं। विवेचनात्मक योग्यता बच्चों के सर्वाधिक महत्वपूर्ण कौशलों में से एक है जो उनके भविष्य के लिए अनिवार्य है। विवेचनात्मक अभिवृत्ति के विकास में बच्चों की सहायता करने के लिए एक अध्यापक या अभिभावक के रूप में आपको चाहिए कि (i) उन्हें खेलने के लिए अधिकाधिक अवसर प्रदान करें, (ii) बच्चों से किसी भी प्रश्न का उत्तर जानने के लिए थोड़ा रुकें, प्रतीक्षा करें और उन्हें सोचने के लिए उपयुक्त समय दें। तत्काल हस्तक्षेप कभी न करें। बच्चों से जो प्रश्न पूछे जाएँ वे विवृतांत (open ended) प्रकार के हों न कि सूचनात्मक, इनसे भी महत्वपूर्ण कि यदि बच्चे

प्रश्न या समस्या के विषय में कोई परिकल्पना स्थापित करना चाहें तो उसमें उनकी सहायता करें, उन्हें उत्प्रेरित करें तथा प्रोत्साहित करें।

### **(ग) यथार्थता के भाव का निर्माण करना**

यथार्थता के विषय में जो भी बच्चों का बोध है उसे अभिव्यक्त करने के लिए अभिप्रेरित करें। इस प्रकार की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता उनमें अवस्थितियों का अर्थ निकालने या उनकी व्याख्या करने में सहायक होगी और वे स्वयं यथार्थता को अर्थ प्रदान करना सीख जाएँगे और उनमें स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता का विकास आरंभ हो जाएगा। डी नोरा, 2014 की दृष्टि में वास्तव में जो हमसे परे विद्यमान है वह तो अपने आप में ज्ञानातीत है तथा जो हम अभिव्यक्त करते हैं वह हमारी व्यक्तिगत व्याख्या है। स्मरण रहे कि वास्तविकता या कहें कि उसकी हमारी व्याख्या सदैव आभासी रूप से ही वास्तविक होती है, जो व्यक्ति द्वारा सरलीकृत रूप में या निपुणतापूर्वक निर्मित होती है। तथापि, “यथार्थता का भाव (या व्याख्या) जो व्यक्ति उसे प्रदान करता है, अपने परिणामों के आधार पर वास्तविक होता है।” (गोलिसंकी, 2013)

जब हम किसी अवस्थिति में स्वयं सोचकर स्वतंत्र निर्णय लेते हैं तो समझिए कि हम यथार्थता की व्याख्या कर रहे हैं। प्रत्येक अनुभव व्यक्तिपरक होता है क्योंकि वह उस व्यक्ति की ज्ञानेंद्रियों के माध्यम से आता है। किसी घटना या वस्तु को देखकर जो अनुभूति मुझे होगी उसी वस्तु या घटना को देखकर किसी अन्य व्यक्ति की अनुभूति अथवा व्याख्या, मेरी अनुभूति अथवा व्याख्या से किसी न किसी रूप में अलग होगी। अतः यथार्थताएँ जो बाहर मौजूद हैं

उनकी व्याख्या होती है। जैन दर्शन में इसे स्यादवाद की संज्ञा दी गई है और यही है सापेक्षता का सिद्धांत।

अध्यापक के रूप में हम ऐसी अवस्थितियों (चाहे वास्तविक हों अथवा काल्पनिक) को प्रस्तुत कर सकते हैं और बच्चों से उन अवस्थितियों की व्याख्या करवा सकते हैं, जो उनके स्वयं के निर्णयों पर आधारित होंगी। जब भी बच्चे किसी भी चीज के विषय में स्वतंत्र रूप से सोच कर निर्णय लेते हैं तो समझिए कि वे वास्तविकता की व्याख्या कर रहे हैं। बच्चों द्वारा की गई यथार्थता की व्याख्या वयस्कों की व्याख्या से भिन्न हो सकती है परंतु इसका अर्थ यह कदापि नहीं सोचना चाहिए कि बच्चे गलत हैं। संभव है कि वे बच्चे वयस्कों से अधिक सृजनात्मक हों।

#### **(घ) वैज्ञानिक विधि के ज्ञान को अर्जित करने**

##### **अथवा समझने में बच्चों की सहायता करना**

यदि आप एक अध्यापक के रूप में वैज्ञानिक विधि का सफलतापूर्वक प्रयोग कर सकते हैं तो बच्चे जीवनपर्यन्त विज्ञान के मित्र और ज्ञान के सर्जक बन जाएंगे। ऐसा करने के लिए अध्यापक को स्वयं चिंतन करना होगा, ताकि वे बच्चों को स्वयं चिंतन करना सिखाने में सक्षम हो सकें, क्योंकि जो अध्यापक स्वयं चिंतन नहीं करता वह बच्चों में चिंतन की योग्यता का विकास नहीं कर सकता।

उपर्युक्त चार योग्यताओं का विकास करने के लिए किस-किस प्रकार के प्रश्न बच्चों के सामने प्रस्तुत किए जा सकते हैं या किस प्रकार की अवस्थितियों का निर्माण किया जा सकता है यह अध्यापक को पहले ही सोच कर कक्षा में आना होगा। ऐसी अभिवृत्ति का विकास होने के साथ बच्चा

धीरे-धीरे स्वयं सोचना आरंभ कर देगा। यह स्मरण रहे कि प्रत्येक बच्चा उपर्युक्त सभी क्षमताओं से जन्म से ही संपन्न होता है। हमें ध्यान देना होगा कि बच्चों को प्रत्येक चीज को कंठस्थ करने के लिए प्रोत्साहित या प्रेरित न करें। यह बात पूर्णतः निरर्थक है कि प्रत्येक चीज को कंठस्थ किया जाए। यदि बच्चे जानने की विधि को सीख जाएं तो वे ज्ञान का निर्माण स्वतंत्र रूप से स्वयं ही कर लेंगे और जब बच्चा वैज्ञानिक विधि का अनुप्रयोग करके अपने प्रयासों से सीखता है, तो बच्चे में एक समग्र अधिगम अभिवृत्ति का विकास हो जाता है। यही है शोध का आनंद जो अनन्य रूप से आत्मसंतोषी होता है। दूसरे, इस बात से भी निराश न हों कि शोध तो मात्र वयस्कों के चिंतन का क्षेत्र है या उनका विशेषाधिकार है; वस्तुतः यह तो एक जन्मजात लक्षण या गुण है। बच्चे को एक लघु वैज्ञानिक समझा जाता है। समस्त खेल-क्रियाकलाप वस्तुतः अधिगम क्रियाकलाप होते हैं। उदाहरणार्थ एक, दो या तीन साल का बच्चा जब बार-बार अपने खिलौने को फर्श पर फेंकता है तो वह उन सभी विभिन्न प्रकार की ध्वनियों या गतिविधि को सीखता है जो खिलौने द्वारा फर्श के कठोर या नरम तल से टकराने से उत्पादित होती हैं। इन दोनों अवस्थाओं से टकराने से उत्पादित ध्वनियों अथवा गतिविधि के अंतर को बच्चा समझ लेता है, यद्यपि उसे अभी तक भाषिक अभिव्यक्ति करनी नहीं आती। ऐसी स्थिति में एक अध्यापक या अभिभावक से यह अपेक्षित है कि वह बच्चों की गतिविधि का विवेचित रूप से प्रेक्षण करें और उसे आगे सीखने के लिए अन्य प्रकार की अवस्थितियों का निर्माण करें।

हमें यह नहीं समझना चाहिए कि वैज्ञानिक विधि जाँच या खोज की एक उन्नत विधि है जिसका प्रयोग मात्र वयस्क ही कर सकते हैं। वस्तुतः यह बात प्रत्येक बच्चा समझता है कि यदि कुछ घटित हुआ है, तो कोई चीज़ तो है जिसके कारण ऐसा हुआ है। अध्यापक को चाहिए कि वे ऐसे अवसरों की ताक में रहें और बच्चों के समक्ष उन्हें उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करें, जिससे बच्चों में कारण-प्रभाव संबंधों का निदर्शन हो। इस प्रकार वे बच्चों की जिज्ञासा और विवेचनात्मक समझ को उद्दीप्त कर सकते हैं। अर्थात् यदि कोई कारण है तो उसका कोई प्रभाव भी होगा और यदि प्रभाव अनुभव हो रहा हो तो वह किसी कारण से ही होगा। अंततः यह भी समझ में आ जाएगा कि अकारण कुछ भी नहीं होता है। प्राचीन भारतीय दर्शन (बौद्ध दर्शन) में इस विचार धारा को प्रतीत्य संपुत्पाद की संज्ञा दी थी।

यहाँ यह स्मरण रहे कि बच्चा कोई एक मात्र सर्वोत्तम या सर्वमान्य उत्तर देने का या कारण बताने का प्रयास नहीं करेगा; इसके विपरीत कई सारे संभावित उत्तर दे सकता है। यदि ऐसा होता है तो जानिए कि यह चिंतन करने या वैज्ञानिक रूप से व्यवहार करने की अवस्था है। दूसरे शब्दों में यह परिकल्पना निर्माण या सृजनात्मक चिंतन की अवस्था है। इस अवस्था को महान जर्मन विचारक काँट ने 'कारण-प्रभाव का बोध' (एक वैचारिक रूप) की संज्ञा दी।

उदाहरण के रूप में, कारण-प्रभाव के संबंध में आप कोई प्रभाव दिखाकर बच्चों से उसका कारण ज्ञात करवा सकते हैं और इस प्रकार कोई कारण देकर उसके प्रभावों को जानने में उन्हें प्रवर्तित कर सकते हैं। जैसे —

- यदि आप किसी गेंद को लंबवत् दिशा में ऊपर की ओर फेंकते हैं तो क्या हो सकता है? करके देखिए।
- यदि आपके भी पंख होते तो आप क्या-क्या कर सकते थे?
- यदि आप किसी पानी से भरी बाल्टी की तली में एक लकड़ी का टुकड़ा रखें तो क्या होगा?

(टिप्पणी: जहाँ संभव हो करके देखिए)

आप इस प्रकार की बहुत सारी अवस्थितियों पर विचार कर सकते हैं। ऐसी अवस्थितियों को प्रस्तुत कर आप बच्चों को कारण-प्रभाव नियम को समझने के लिए प्रवर्तित कर सकते हैं। यदि आप सफलतापूर्वक ऐसा करते हों तो निश्चय ही आप उन्हें सही रूप में चिंतनोन्मुख बनाने की दिशा में चल रहे हैं। ऐसा करने से आप उनमें समझ या विवेक के उपकरणों को विकसित करने में सहायता कर रहे होंगे। हमारे विचार में यही है अध्यापन और अधिगम शिक्षा का सारा।

### ज्ञानार्जन उपकरणों का विकास

डैलर्स (1996 पृ.87) के अनुसार, जानना सीखने से तात्पर्य है यह मालूम करना कि सीखा कैसे जाता है। सीखने के लिए एकाग्रता, स्मृति तथा चिंतन की शक्ति अपेक्षित होती है। यही हैं ज्ञानार्जन के उपकरण। अध्यापक के रूप में हमारा लक्ष्य बच्चों के ध्यान को वस्तुओं, प्रक्रियाओं और घटनाओं पर केंद्रित करने में सहायता करना है। परंतु दुःख की बात है कि आजकल बच्चे चैनल सर्फिंग करते रहने की आदत बना रहे हैं अथवा तेज़ी से एक के बाद एक सूचनाओं को मस्तिष्क पटल पर दौड़ाते रहते

हैं, जो खोज प्रक्रिया विकसित करने के लिए अत्यंत हानिकर होती है।

### 1. एकाग्रता का विकास

एकाग्रता विकसित करना कई प्रकार से हो सकता है और इसमें कई प्रकार की अवस्थितियों का प्रयोग किया जा सकता है। अध्यापक के रूप में हमें ऐसी चुनौतीपूर्ण अवस्थितियों का निर्माण करना चाहिए जो बच्चों के लिए रुचिकर हों तथा उनका ध्यानाकर्षण कर सकती हों। तथापि हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि सभी बच्चों को एक ही प्रकार की अवस्थितियाँ अथवा क्रियाकलाप रोचक नहीं लगेंगे। अतः हमें विभिन्न प्रकार की अवस्थितियों या क्रियाकलाप के विषय में सोचना होगा। जिनमें से वे अपनी रुचि अनुसार किसी अवस्थिति विशेष का चयन कर सकें।

### 2. स्मृति का विकास

स्मृति का विकास स्मृति के उपयोग के माध्यम से होता है। स्मृति का अर्थ है अतीत में घटित बातों का स्मरण करना। परंतु प्रश्न यह है कि हम बच्चों की सहायता कैसे कर सकते हैं जिससे वे अपनी स्मृति के उपयोग में वृद्धि कर सकें। संभवतः बच्चे अपनी स्मृति के उपयोग को बेहतर रूप से बढ़ा सकते हैं यदि उन्हें खेल-खेल में उनके अनुभवों के विषय में पूछा जाए। हम जानते हैं कि स्मृति दो प्रकार की होती है — दीर्घावधि (दीर्घकालिक) तथा अल्पावधि (अल्पकालिक)।

#### दीर्घकालिक स्मृति का विकास

दीर्घकालिक स्मृति के उपयोग में वृद्धि कराने के लिए एक अध्यापक बच्चों को अतीत के अनुभवों या घटनाओं का विवरण देने के लिए कह सकते

हैं, ऐसे अनुभव जिन्होंने बच्चों को सकारात्मक या नकारात्मक रूप से प्रभावित किया हो या किसी न किसी रूप में वे रोचक रहे हों। उदाहरणार्थ, बच्चों को कह सकते हैं कि वे अपने बचपन की किन्हीं दो घटनाओं का वर्णन करें जो उनको बहुत अच्छी लगी हों अथवा अप्रिय या डरावनी।

#### अल्पकालिक स्मृति का विकास

अल्पकालिक स्मृति में वृद्धि हेतु हमें बच्चों को कुछ विशेष प्रकार की क्रियाएँ करने को प्रेरित करना चाहिए। उदाहरण के लिए, आप विद्यार्थियों को किसी रोचक स्थान के भ्रमण पर ले जा सकते हैं। अगले दिन जब बच्चे कक्षा में आएँ तो आप उनसे भ्रमण का विस्तृत वृत्तांत लिखने अथवा बताने के लिए कह सकते हैं। इस प्रयोग को खेल की भावना से करें और बच्चों को किसी प्रकार का दंड न दें, केवल प्रोत्साहित करें।

ऐसे अनुभवों के वर्णन से न केवल बच्चों की दीर्घकालिक स्मृति को बढ़ाने में सहायता मिलेगी, अपितु बच्चों को मनोवैज्ञानिक रूप से समझने में भी सहायता मिलेगी जिसका ज्ञान एक अध्यापक के लिए अत्यंत आवश्यक है।

परंतु इस अवसर पर एक सावधानी बरतने की आवश्यकता भी है जिसकी ओर संकेत करना आवश्यक है। वह है कि हमें 'स्मृति का उपयोग' को 'रटना' नहीं समझ लेना चाहिए। 'रटन' शब्द से तात्पर्य है बिना अर्थग्रहण किए किसी चीज़ को कंठस्थ कर लेना। अत्यधिक तथ्यात्मक सूचनाओं को याद कर लेना बौद्धिक विकास का संकेतक नहीं मान लेना चाहिए। जैसे आपने टेलीविज़न पर कुछ



बच्चों के उदाहरण देखे होंगे जिन्हें दुनिया की असंख्य सूचनाएँ कंठस्थ हैं और वे फटाफट किसी भी ऐसे प्रश्न का उत्तर दे देते हैं। ऐसे बच्चों की स्मरणशक्ति तो विलक्षण है परंतु स्वस्थ बौद्धिक विकास के लिए यह बिल्कुल आवश्यक नहीं है क्योंकि ऐसा करने में चिंतन, कल्पना, शक्ति या बुद्धि का कोई उपयोग या विकास निहित नहीं है। ‘स्मृति का उपयोग’ हमारे चिंतन, कल्पनाशक्ति या बुद्धि का अंग है जो अव्यक्त स्तर पर होता है। कुछ चीजों अथवा घटनाओं का भूलना उतना ही आवश्यक है जितना कि चीजों को याद रखना। बल्कि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह कहा जाता है कि विस्मरण स्मरण के लिए अनिवार्य साधन होता है। यद्यपि, अधिगम के एक साधन या उपकरण के रूप में कंठस्थीकरण की अनुशंसा बच्चों की शिक्षा में कम से कम की जाती है, तथापि बच्चे के विकास के किसी स्तर पर या कुछ संदर्भों या मामलों में इसका वर्णात्मक उपयोग पूर्ण रूप से अनावश्यक या निरर्थक नहीं होता है, अपितु उपयोगी और आवश्यक होता है। उदाहरणार्थ, गिनती सीखना, पहाड़े याद करना, कुछ सूत्रों (फार्मूलों) आदि को स्मरण रखना इत्यादि।

इसके अतिरिक्त स्मृति क्षमता के उपयोग को सहचर्य के गुण का उपयोग कर बढ़ाया जा सकता है। उदाहरणार्थ, किसी व्यक्ति की चाल देख कर उस व्यक्ति का स्मरण हो जाता है। स्मृति वस्तुओं, अवस्थितियों अथवा व्यक्तियों में पाए जाने वाले लक्षणों या तत्वों की समानता अथवा विषमता के आधार पर कार्य करती है। अतः बच्चों में स्मृति का उपयोग विकसित करने अथवा उसे बढ़ाने के लिए हम ऐसी अवस्थितियों का सृजन कर सकते हैं।

### निष्कर्ष

उपर्युक्त विश्लेषण के निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि बच्चों की शिक्षा में अध्यापक का कार्य अथवा कर्तव्य उन्हें ज्ञान देना नहीं, अपितु उन्हें इस योग्य बनाना है कि वे स्वयं ज्ञान का सृजन कर सकें। ऐसा करने के लिए अध्यापक को चाहिए कि वे बच्चों की बौद्धिक जिज्ञासा को प्रेरित करें, उनके विवेचनात्मक योग्यता का विकास करें तथा बच्चों में वैज्ञानिक अभिवृत्ति का भाव उत्पन्न करें। यह तभी संभव हो सकता है जब बच्चे में ज्ञान के लिए अपेक्षित उपकरणों जैसे एकाग्र चिंतन, स्मृति और विचारण शक्ति को विकसित करने का प्रयास करें।

### संदर्भ

- अर्ली चाइल्डहुड लर्निंग – 5 वे टू डेवलप यूअर चाइल्ड्स क्यूरीओसिटी. [www.etlearning.com/resources/early-childhood-learning-5-ways-to-develop-your-childs-curiosity/](http://www.etlearning.com/resources/early-childhood-learning-5-ways-to-develop-your-childs-curiosity/)
- गोलिंसकी, एलन. 2013. *माइंड इन दि मेकिंग — सेवेन इसैन्श्यल स्किल्स एवरी चाइल्ड नीड्स*. हार्पर स्टूडियो, यू.एस.ए.
- जॉनसन, बैन. 2010. *हाऊ टू इम्प्लैट इंटेलेक्चुअल क्यूरीओसिटी इन स्टूडेंट्स*. जॉर्ज ल्यूकास एजुकेशनल फाउंडेशंस. यूनाइटेड किंगडम

डैलर्स, जैकक्यू. 1996. लर्निंग — द ट्रीज़र विदिन — रिपोर्ट टू दि यूनेस्को ऑफ द इंटरनेशनल कमीशन ऑन एजुकेशन फ़ॉर दि 21st सेंचुरी. यूनेस्को, पेरिस.

डी नोरा, टीया. 2014. मेकिंग सेंस ऑफ़ रिएलिटी — कल्चर एंड परसेप्शन इन एवरी डे लाइफ़. सेज पब्लिकेशन्स. यूनाइटेड किंगडम.

लोर्वेस्टाईन, जी. 1994. 'दि साइकोलॉजी ऑफ़ क्यूरीओसिटी'. साइकोलॉजिकल बुलेटिन, 1994 इश्यू, वॉल्यूम 116.

American Psychological Association. United States पर ऑनलाइन देखा गया।

स्कैचटर, जे. (संपा.). 2013. द इनसाइक्लोपीडिया ऑफ़ माइंड. सेज पब्लिकेशन्स. यूनाइटेड किंगडम

[HTTPS://www.asu.edu](https://www.asu.edu)

[HTTPS://www.lanecc.edu](https://www.lanecc.edu)

## ऐसे कम हो सकता है बस्ते का बोझ

संदीप जोशी\*

कंधे पर भारी-भरकम बस्ते का बोझ, एक हाथ में पानी की बोतल और दूसरे हाथ में लंच बाक्स लिए धीमी गति से थके-थके से चलते पाँव। मासूम चेहरों को ऐसी स्थिति में देखकर पीड़ा होती है। सोचने वाली बात है कि हम उसे सभ्य, सुसंस्कृत, सुयोग्य नागरिक बनने की शिक्षा दे रहे हैं या केवल कुशल भारवाहक बनने का प्रशिक्षण। बचपन की मस्तिष्क, शैतानियाँ, नादानियाँ, किलकारियाँ, निश्छल हँसी, उन्मुक्तता, जिज्ञासा आदि अनेक बाल-सुलभ क्रियाओं को बस्ते के बोझ ने अपने वजन तले दबा दिया है।

एक तरफ तो हम सभी भारत को पुनः जगदगुरु बनाने का सपना सँजोए हैं, वहीं बचपन को बस्ते के बोझ तले कुंठित होने और किशोरों को टी.वी. चैनलों के भरोसे समझदार होने के लिए छोड़ दिया है। सूचना विज्ञान, सूचना की आवश्यकता, सूचना तंत्र और सूचना अधिकार जैसे विशेषणों में आकार ले रहे सूचना केंद्रित समाज में हमें पता ही नहीं चला कि कब शिक्षा अपने मूल उद्देश्यों से परे हो गयी। शिक्षा का कार्य व्यक्तित्व का निर्माण (Formation) करना है सूचनाएँ (Information) इकट्ठा करना नहीं। बालक की जानकारीयों की संग्रहण क्षमता एवं रटन क्षमता के स्तर को विद्यालय और अभिभावक दोनों ने अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया है।

वास्तव में शिक्षा बच्चे के सर्वांगीण विकास का आधार है। 'सा विद्या या विमुक्तये हो, विद्या

ददातिविनयं हो', मन-बुद्धि और आत्मा के विकास की बात हो अथवा बच्चे की अन्तर्निहित शक्तियों के प्रकटीकरण की बात, शिक्षा जीवन का आधार है। किंतु वर्तमान शिक्षा परीक्षा प्रणाली बच्चे को केवल रटना सिखा रही है, अधिकाधिक अंकों की दौड़ में प्रतिस्पर्धी मात्र बना रही है। सर्वांगीण विकास की बात अधूरी रह जाती है। भारी-भरकम बस्ते के बोझ तले पिसता बचपन अभिभावकों व स्कूल की उच्च अपेक्षाओं की बलि चढ़ रहा है। बाल सुलभ जीवन चर्या के विपरीत उसका जीवन तनावपूर्ण हो रहा है। यह मनोवैज्ञानिकों, समाजशास्त्रियों व शिक्षाविदों के लिए भी चिंता का कारण बना है।

एक शिक्षक होने के नाते पिछले कई वर्षों से मेरा मन इस समस्या के इर्द-गिर्द चक्कर लगा रहा था। वर्ष 2007 में मैंने इस समस्या का संभावित सरल,

\*व्याख्याता, राज्य उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, रेवत, जालोर, राजस्थान

सहज समाधान निकाला और शिक्षक, अभिभावक व शिक्षाविदों ने इसे सकारात्मक उपाय बतलाया है। राजस्थान में शिक्षा निदेशक से लेकर शिक्षा मंत्री तक सभी ने इसे कारगर समाधान बताया। देशभर में यह समाधान चर्चा और चिंतन का विषय बना है। मैं चाहता हूँ कि बुद्धिजीवियों के बीच भी इन उपायों पर चर्चा हो और सरकार पर इस समाधान को लागू करने का आग्रह बनाया जाए।

### समाधान की दिशा में पहला सुझाव — ज्ञानकोष (मासिक पाठ्यपुस्तक)

यह संकल्पना पाठ्यपुस्तकों के माह आधारित स्वरूप की है। जिसके द्वारा राज्यों के शिक्षा विभाग, प्रारंभिक शिक्षा परिषद् के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण योजना में परिवर्तन किए बिना भी पाठ्यपुस्तकों के बोझ में 86–90 प्रतिशत तक कमी की जा सकती है। साथ ही पुस्तक की गुणवत्ता भी बढ़ाई जा सकती है।

- अभी पुस्तकें विषय-आधारित होती हैं। सरकारी स्कूल में पुस्तकों की संख्या 5 से 9 तक है। निजी स्कूल में इनकी संख्या 12 से 15 तक हो जाती है।
- जुलाई में पढ़े हुए पाठ को फ़रवरी-मार्च तक स्कूल क्यों ले जाना और जो पाठ जनवरी-फ़रवरी में पढ़ने हैं उन्हें साल भर क्यों ढोना।
- इन पाठ्यपुस्तकों को माह आधारित किया जाए। एक ही किताब में हिंदी, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, अंग्रेज़ी इत्यादि सभी विषयों के दो-तीन पाठों का समावेश हो। इस तरह सभी विषय मिलाकर एक माह की एक ही किताब हो।

- माह आधारित इन पुस्तकों का नाम ज्ञानकोष दिया। ज्ञानकोष जुलाई, ज्ञानकोष अगस्त ...।
- यह कठिन नहीं है। वर्तमान में भी पहली कक्षा के बच्चे हिंदी, गणित, पर्यावरण एक साथ पढ़ते ही हैं।
- केवल किताबों की बाइंडिंग बदलकर ही यह किया जा सकता है। इससे अनेक फ़ायदे हैं। सबसे बड़ा लाभ बस्ते का बोझ कम। दस-बारह किताबों की जगह एक ही किताब। हर पीरियड में किताब अंदर-बाहर करने के झंझट से मुक्ति। किताब अधिक समय तक चलेगी इससे आर्थिक लाभ होगा। सब शिक्षकों को समय पर पाठ्यक्रम पूरा करना होगा।

इस संकल्पना को और अधिक स्पष्ट करने के लिए एक उदाहरण लेते हैं। इसे आधार मान कर कक्षा छठी की पाठ्यपुस्तकों को नए स्वरूप में व्यवस्थित करके मॉडल पुस्तकें बनाई गईं, जिसे ज्ञानकोष नाम दिया गया। इसका आधार विचार Child friendly Textbook है।

सत्र भर में नौ अध्यापन माह बनाए गए। वर्तमान व्यवस्था में राजस्थान में नया सत्र अप्रैल के अंत में ही शुरू होता है। 1. अप्रैल-मई 2. जुलाई 3. अगस्त 4. सितंबर 5. अक्टूबर 6. नवंबर 7. दिसंबर 8. जनवरी 9. फ़रवरी। राजस्थान प्रारंभिक शिक्षा के निर्देशानुसार वर्तमान में मासिक पाठ्यक्रम विभाजन दी गयी सारणी के अनुसार है। सारणी में क्षेत्रीय (आडी) पंक्तियों में विषय की मासिक पाठ योजना दी गयी है, जिसके अनुसार अध्यापन करवाना निर्धारित है।

सारणी – 1

विषय	अप्रैल-मई	जुलाई	अगस्त	सितंबर	अक्टूबर	नवंबर	दिसंबर	जनवरी	फरवरी
हिंदी	1,2,3	4,5,6	7,8,9, 10	11, 12,13	14,15,16	17,18,19,20	21, 22	23,24,25,26	27,28,29
सा. ज्ञान	1,9	5,15	2,10	6,16	3,7,11	17,12	जिले की जानकारी	4,13,18	8,14,19
विज्ञान	1,2,3,4	5,6,7	8,9,10	11,12,13	14,15	16,17	18	19,20,21	22,23,24
अंग्रेजी	1,2	3,4,5	6,7,8	9,10,11	12,13	14,15,16	17,18	19,20,21	22,23,24
संस्कृत	1,2	3,4	5,6	7,8,9	10,11	12,13	14,15	16,17,18,19	20,21,22,23
गणित	इकाई 1 9-1-9-4	इकाई 2 11-1-11-2	इकाई 3 9-5, 9-6	इकाई 4 9-7-9-9	इकाई 5 11-3-11-8	6-1-6-4, 11-9- 11-10, 12-1- 12-3	13-1-13- 5, 14-1- 14-2	6-5-6-6, 7-1-7- 8, 15-1-15-3	8-1-8-4, 10- 1-10-4, 16-1- 16-4
स्वा. शिक्षा	1	2	3	4	5	6, 7	8	9, 10	11, 12
*कला शिक्षा	1, 2	3, 4, 5	6, 7,8,9	10,11,12	13,14,15	16,17,18	19,20	21,22,23	24,25
*कार्यानुभव	1,2	3,4	6	7,8,9	10	11,12	13,14	15,16	17
ज्ञानकोष अप्रैल-मई	ज्ञानकोष जुलाई	ज्ञानकोष अगस्त	ज्ञानकोष सितंबर	ज्ञानकोष अक्टूबर	ज्ञानकोष नवंबर	ज्ञानकोष दिसंबर	ज्ञानकोष जनवरी	ज्ञानकोष फरवरी	

\*रा.प्रा.शिक्षा परिषद् द्वारा इन विषयों का मासिक पाठ्यक्रम विभाजन प्रकाशित नहीं किया गया है।

सारणी – 1 के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि हिंदी विषय में कुल 29 अध्याय हैं जिनमें से पाठ 1-2-3 का अध्ययन ही अप्रैल-मई माह में करना है। तब पीछे के 26 अध्यायों को उस माह में विद्यालय लेकर आने का कोई अर्थ नहीं है तथा पाठ 1-2-3 को अप्रैल-मई के बाद वर्ष भर लाने का कोई अर्थ नहीं है।

इस सारणी की ऊर्ध्वाधर पंक्तियाँ (खड़ी पंक्तियाँ) ज्ञानकोष के प्रस्तावित स्वरूप को स्पष्ट करती हैं। सभी विषयों के सारे अध्यायों, जो अप्रैल-मई माह में अध्यापन करवाए जाने अपेक्षित हैं, को मिलाकर ज्ञानकोष माह-अप्रैल मई को निर्माण किया गया है। इस प्रकार हिंदी के 3 पाठ, सामाजिक ज्ञान के 2 पाठ, विज्ञान 4 पाठ, अंग्रेजी के 2 पाठ, संस्कृत के 2 पाठ, गणित की 1 प्रश्नावली, स्वास्थ्य शिक्षा का 1, कला शिक्षा के 2 पाठ एवं कार्यानुभव के 2 अध्याय। कुल 18 अध्यायों की एक पुस्तक विद्यार्थी विद्यालय लेकर आए मस्ती के साथ, कमर सीधी करके, बाकी महीनों की पुस्तकें कक्षा कक्ष की अलमारी या घर पर सुरक्षित रखी जाएंगी।

आवश्यकता अनुसार बच्चे उनका उपयोग कर सकेंगे। इसी आधार पर कुल 9 पुस्तकें बनायी हैं। ज्ञानकोष की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए तथा निजी विद्यालयों की पुस्तकों की संख्या कम करने के लिए इसमें 4 पृष्ठ अतिरिक्त जोड़े गए हैं।

जिनमें प्रतिमाह सामान्य ज्ञान के 10 प्रश्न, नैतिक शिक्षा एवं व्यक्ति विकास के बिंदु, प्रतिमाह एक संस्कार गीत व पूरे माह की गृहकार्य दैनंदिनी सम्मिलित की गई है। इसी प्रकार कक्षा 6 के मासिक ज्ञानकोष में गुणवत्ता वृद्धि के जोड़े गए अतिरिक्त अध्याय। प्रत्येक माह की पुस्तक के प्रारंभ में पूर्व ज्ञान का स्मरण करवाने के लिए संबंधित स्मरणीय तथ्यों का समावेश 1-2 पृष्ठ में किया जाना अधिक उपयोगी है।

प्राथमिक कक्षाओं की पुस्तकों की रचना निम्न अनुसार की जा सकती है।

ज्ञानकोष प्रथम — प्रथम परख तक (जुलाई-अगस्त माह)

ज्ञानकोष द्वितीय — द्वितीय परख तक (सितंबर-अक्टूबर माह)

ज्ञानकोष तृतीय — अर्द्धवार्षिक परीक्षा तक (नवंबर-दिसंबर माह)

ज्ञानकोष चतुर्थ — वार्षिक परीक्षा तक (जनवरी-फरवरी-मार्च माह)

### **पाठ्यपुस्तकों की ज्ञानकोष मॉडल के अनुसार पुनर्रचना करने से होने वाले लाभ**

#### **1. बस्ते के बोझ में कमी**

इस विचार का आधार बस्ते का भारी बोझ है तथा ज्ञानकोष मॉडल के आधार पर पुस्तकें निर्माण करने पर बस्ते की पाठ्यपुस्तकों का वजन 75-90 प्रतिशत तक कम हो सकता है। इसे हमने कक्षा अनुसार विभिन्न सारणियों के द्वारा विस्तार से पूर्व में समझा है। सभी पुस्तकों में कक्षावार पृष्ठों की संख्या कक्षा तीन में पढ़ने वाला विद्यार्थी कुल 521 पृष्ठों की चार पुस्तकें नियमित रूप से विद्यालय लेकर आता है। नवीन योजना के अनुसार प्राथमिक स्तर तक पुस्तकें मासिक या द्वैमासिक हो सकती हैं। मासिक पुस्तक रचना करने पर प्रत्येक पुस्तक में पृष्ठ संख्या 58 ( $521/9=58$ ) ही रह जाएगी। द्वैमासिक पुस्तक बनाने पर प्रत्येक पुस्तक में पृष्ठों की संख्या 130 लगभग हो जायेगी ( $521/4=131$ )। रोजाना कुल 521 पृष्ठों की चार

पुस्तकें ले जाने की अपेक्षा 58 या 130 पृष्ठों की एक पुस्तक ले जाना सरल व सहज है। इसी प्रकार, हमने कक्षा 3 से 8 तक पाठ्यपुस्तकों के वजन में होने वाली प्रतिशत कमी का भी सारणियों के द्वारा अध्ययन किया है।

क्षेत्र में पहली कक्षा के लिए भी 6-7 तक पुस्तकें हैं, उनकी कोई आवश्यकता नहीं है।

दूसरी कक्षा के विद्यार्थी तीन पुस्तकें रोज़ाना लाते हैं — आनंद पोथी प्रथम (पृष्ठ 84) आनंद पोथी द्वितीय (पृष्ठ 140) और अंग्रेज़ी (पृष्ठ 82)। इन

## सारणी – 2

विषय/ कक्षा	3	4	5	6	7	8
हिंदी	132 पृष्ठ	157 पृष्ठ	172 पृष्ठ	128 पृष्ठ	159 पृष्ठ	212 पृष्ठ
गणित	160 पृष्ठ	188 पृष्ठ	194 पृष्ठ	247 पृष्ठ	260 पृष्ठ	312 पृष्ठ
सा. ज्ञान	133 पृष्ठ	126 पृष्ठ	132 पृष्ठ	155 पृष्ठ	182 पृष्ठ	256 पृष्ठ
विज्ञान	--	103 पृष्ठ	132 पृष्ठ	167 पृष्ठ	180 पृष्ठ	241 पृष्ठ
अंग्रेज़ी	96 पृष्ठ	114 पृष्ठ	108 पृष्ठ	154 पृष्ठ	198 पृष्ठ	171 पृष्ठ
संस्कृत	---	--	--	91 पृष्ठ	127 पृष्ठ	144 पृष्ठ
स्वा. शिक्षा	--	--	--	91 पृष्ठ	102 पृष्ठ	104 पृष्ठ
कार्यानुभव	--	--	--	125 पृष्ठ	135 पृष्ठ	98 पृष्ठ
कला शिक्षा	--	--	--	84 पृष्ठ	85 पृष्ठ	118 पृष्ठ
कुल पृष्ठ	521 पृष्ठ	688 पृष्ठ	738 पृष्ठ	1242 पृष्ठ	1428 पृष्ठ	1572 पृष्ठ

इस अध्ययन से स्पष्ट है कि शिक्षा विभाग द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम का अनुसरण करते हुए भी बस्ते के बोझ में 89 प्रतिशत तक की भारी कमी प्रस्तावित स्वरूप में पुस्तक संयोजन करके की जा सकती है।

आठवीं कक्षा के विद्यार्थी के लिए 9 पुस्तकें 1572 पृष्ठों की प्रतिदिन लाने की अपेक्षा 225 पृष्ठों की एक किताब लेकर आना सहज, सरल व सुखद रहेगा।

पहली और दूसरी कक्षाओं की पाठ्यपुस्तकों को भी इसी आधार पर पुनः संयोजित कर सकते हैं। वर्तमान में सरकार द्वारा पहली कक्षा के लिए आनंद पोथी नाम से दो पुस्तकें निर्धारित हैं। दोनों में हिंदी, गणित एवं अंग्रेज़ी तीनों विषयों का समावेश है। निजी

306 पृष्ठों की पुस्तकों को 102-102 पृष्ठ की तीन पुस्तकों में व्यवस्थित किया जा सकता है। निजी क्षेत्र में पूर्व प्राथमिक एवं कक्षा प्रथम, द्वितीय की पुस्तकों की संख्या पर प्रभावी नियंत्रण की आवश्यकता है।

### 2. पाठ्यपुस्तकों की गुणवत्ता में वृद्धि

इसके लिए सामान्य ज्ञान, नैतिक शिक्षा, संस्कार गीत का समावेश करने पर भी प्रति पुस्तक में 2 पृष्ठों की ही वृद्धि होगी जिसे उठाना कठिन नहीं है। साथ ही इसी एक पुस्तक में 2-3 खाली नकशे, हिंदी एवं अंग्रेज़ी व्याकरण की कक्षा के स्तर-अनुसार जानकारीयों समाविष्ट करने पर पुस्तक बहुपयोगी बनेगी एवं 6-7 अतिरिक्त पुस्तकों की आवश्यकता को कम किया जा सकता है। कक्षा छठी के लिए बनाए गए ज्ञानकोष में



प्रतिमाह गृहकार्य डायरी के लिए भी प्रारूप सम्मिलित किया गया है इससे निजी विद्यालयों में प्रयुक्त गृहकार्य डायरी के भार को कम किया जा सकता है।

### 3. पुस्तक की आयु में वृद्धि

तीसरा महत्वपूर्ण लाभ पुस्तक की आयु में वृद्धि होने का है। छोटी कक्षाओं के विद्यार्थियों के साथ एक समस्या यह भी है कि वार्षिक परीक्षा तक तो उनकी सारी किताबों के आगे-पीछे के 2-3 पृष्ठ फट जाते हैं। नई संकल्पना के अनुसार पुस्तकें संयोजित होने पर यह समस्या नियंत्रित हो जाएगी। क्योंकि प्रत्येक माह नई पुस्तक लानी है। महीना पूरा होने पर पुस्तक को घर पर या विद्यालय के कक्षा-कक्ष में सुरक्षित रखा जा सकता है।

### 4. सरकारी खर्चों में बचत

सरकार की एक बहुत अच्छी योजना है निःशुल्क पाठ्यपुस्तक वितरण करने की। नई योजना से पुस्तक की आयु बढ़ जायेगी, अतः सत्र समाप्ति पर उन्हें जमा करके अगले सत्र में पुनः वितरित किया जा सकता है। पुस्तकों के एक ही सेट को दो-तीन सत्रों तक काम में ले सकते हैं। इससे सरकारी व्यय में काफ़ी बचत होगी।

### 5. अभिभावक के लिए बचत

अच्छी गुणवत्ता एवं अधिक जानकारी दे देने के लिए निजी विद्यालय 6-7 अतिरिक्त पुस्तकें पाठ्यक्रम में सम्मिलित करते हैं। इससे अभिभावक पर अर्थभार बढ़ता है। पाठ्यपुस्तकों के प्रस्तावित मॉडल में सामान्य ज्ञान, व्यक्ति विकास, संस्कार गीत, महापुरुषों का जीवन परिचय, बोध कथा, भूगोल वर्कबुक, अंग्रेज़ी व्याकरण/हिंदी व्याकरण एवं गृहकार्य दैनंदिनी

का समावेश होने से इस प्रकार की अतिरिक्त पुस्तकों की आवश्यकता नहीं रहेगी। इससे उन 6-7 पुस्तकों का खर्चा भी बच जाएगा और सरकारी स्कूलों के विद्यार्थियों को भी अतिरिक्त लाभ हो जाएगा।

### 6. लिखित कार्य के प्रति गंभीरता में वृद्धि (परीक्षा प्रणाली)

नई रचना में पुस्तकों को प्रकाशित करने से बच्चों की परीक्षा की तैयारी पर कोई कुप्रभाव नहीं पड़ेगा। अर्द्धवार्षिक व वार्षिक परीक्षा के समय विषय का समग्र अध्ययन करने के लिए वह अपनी नोट बुक की सहायता लेगा। क्योंकि उसकी नोट बुक (कॉपी) में संबंधित विषय के सारे अध्यायों का कार्य किया हुआ है। विद्यार्थी को अपनी कॉपी की सहायता से परीक्षा की तैयारी करनी है तो वह अपने अक्षर भी सुधारेगा। शिक्षक एवं अभिभावक भी उसके लेखन कार्य की कुशलता की तरफ अधिक ध्यान देंगे।

### समाधान की दिशा में दूसरा सुझाव — शनिवार को बस्ते की छुट्टी

बस्ता शिक्षा का आधार नहीं है, न ज्ञानार्जन की प्रक्रिया भारी भरकम बस्ते पर अवलंबित है। विद्यालय से छुट्टी के बाद बच्चा घर जाकर जिस तरह से बस्ते को पटकता है उससे बालमन पर बस्ते और स्कूल के तनाव को सहजता से समझा जा सकता है। आइये, कोशिश करें बच्चे को तनाव मुक्त, आनंददायी, सृजनात्मक/प्रयोगात्मक शिक्षा देने की। वर्तमान में चल रही शिक्षा प्रणाली में बिना ज्यादा बदलाव किए, वर्तमान दायरे में रह कर भी शिक्षा को सहज, बोधगम्य, तनाव रहित, व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों का विकास करने वाला बनाया जा सकता है। ऐसी

अनेक बातें हैं, विषय हैं जो क्रिया आधारित हैं जिनके लिए किताब या बस्ता ज़रूरी नहीं है।

मेरा सुझाव है कि सप्ताह में एक दिन बस्ते की छुट्टी कर दी जाए। शनिवार को विद्यालय की छुट्टी भले न करें पर बस्ते की छुट्टी अवश्य कर देनी चाहिए अर्थात् बच्चे एवं स्टाफ़ विद्यालय तो आएँ, किंतु बस्ते के बोझ से मुक्त होकर व होमवर्क के दबाव के बिना।

सहज प्रश्न खड़ा होता है कि यदि बच्चे बस्ता नहीं लाएँगे तो विद्यालय में करेंगे क्या? समाधान है सप्ताह में एक दिन बच्चे शरीर, मन, आत्मा का विकास करने वाली शिक्षा ग्रहण करेंगे। अपनी प्रतिभा का विकास करेंगे। शिक्षा शब्द को सार्थकता देंगे।

### **शनिवार की अध्यापन एवं कालांश की योजना**

शनिवार को भी नियमानुसार कालांश तो लगेंगे पर उनका प्रकार कुछ बदला-सा होगा। सुझाव स्वरूप यह कालांश योजना प्रस्तुत है जिनके आधार पर दिनभर की गतिविधियाँ संपन्न होंगी।

#### **प्रथम कालांश — योग, आसन, प्राणायाम**

प्रार्थना सत्र के पश्चात् पहला कालांश योग, आसन, प्राणायाम, व्यायाम का रहे। बच्चों का शरीर स्वस्थ रहेगा, मजबूत बनेगा तो निश्चित रूप से अधिगम भी प्रभावी होगा। जीवनपर्यंत प्राणायाम-व्यायाम के संस्कार काम आएँगे। विश्व योग दिवस का जो प्रोटोकॉल है, वह भी लगभग 40 मिनट का है, उसका अभ्यास हो सकता है।

**दूसरा कालांश — श्रमदान/स्वच्छता/पर्यावरण संरक्षण**  
इस कालांश में विद्यालय परिसर की स्वच्छता का कार्य, श्रमदान एवं पर्यावरण संबंधित कार्यों का

निष्पादन होगा। विद्यालय में वृक्षारोपण, उनकी सार सँभाल, सुरक्षा, पानी पिलाना, आवश्यकता होने पर कटाई-छँटाई, कचरा निष्पादन आदि कार्य।

#### **तीसरा कालांश — संगीत अभ्यास**

इस कालांश में गीत अभ्यास, राष्ट्रगीत, राष्ट्रगान, प्रतिज्ञा, प्रार्थना का अभ्यास हो। उपलब्ध हो तो वाद्ययंत्र का अभ्यास और डांस क्लास (नृत्य अभ्यास) भी इस कालांश में करवाया जा सकता है।

#### **चतुर्थ कालांश — खेलकूद**

कुछ खेल इनडोर हो सकते हैं कुछ आउटडोर हो सकते हैं। अत्यधिक धूप की स्थिति में कक्षा कक्ष में ही बौद्धिक खेल, छोटे समूह के खेल इत्यादि हो सकते हैं।

#### **पंचम कालांश — अभिव्यक्ति कालांश**

कविता, नाटक, वाद-विवाद समूह चर्चा (ग्रुप डिस्कशन) अंत्याक्षरी (हिंदी-अंग्रेज़ी), चित्रकला इत्यादि। बस्ता नहीं लाना है तो चित्रकला की कॉपी भी नहीं लानी है। श्यामपट्ट पर, कक्षा कक्ष अथवा बरामदे में फ़र्श पर चॉक से, मैदान में पेड़ों की छाँव तले मिट्टी पर पानी छिड़क कर छोटी लकड़ी से भी चित्र बनाए जा सकते हैं। मैदान के कंकरो की सहायता से रंगोली भी बनायी जा सकती है।

#### **षष्ठम कालांश — पुस्तकालय एवं वाचनालय**

इस कालांश में सभी कक्षाओं में छात्र संख्या के अनुरूप पुस्तकें वितरित की जाएँ। पुस्तकालय प्रभारी संबंधित कक्षाओं के शिक्षकों को पुस्तकें देंगे। इस कालांश में पढ़कर पुनः शिक्षक के माध्यम से पुस्तकालय प्रभारी को जमा करना है।

**सप्तम कालांश — मौखिक गणित एवं भूगोल**  
पहाड़ा अभ्यास, सामान्य गणितीय क्रियाओं का मौखिक अभ्यास, जोड़, घटा, गुणा, भाग, प्रतिशत बढ़ा आदि। साथ ही इस कालांश में सामान्य ज्ञान, मानचित्र परिचय, विश्व, भारत, राजस्थान के राजनीतिक, प्राकृतिक मानचित्र का अवलोकन, उसमें शहर, नदी, पर्वत खोजना इत्यादि उपलब्ध हो तो कंप्यूटर शिक्षण भी हो सकता है।

**अष्टम कालांश — अभिप्रेरणा**

बालसभा, बोधकक्षा, नैतिक शिक्षा, करियर गाईडेंस इत्यादि। सप्ताह भर में आने वाले सभी उत्सव एवं महापुरुषों की जयंतियों का आयोजन भी इस कालांश में हो सकता है।

**नोट**— पहला एवं अंतिम कालांश सामूहिक रहे। शेष कालांशों के विषय सुझाव स्वरूप उल्लेखित

किए हैं। इनका क्रम विद्यालय स्तर पर सुविधानुसार निर्धारित किया जा सकता है या कक्षानुसार बदला जा सकता है।

इस प्रकार इन उपायों से बस्ते के बोझ को कम करके शिक्षा को बहुआयामी बनाया जा सकता है। पाँच दिन बिना भारी भरकम बस्ते के जमकर पढाई और छठे दिन शनिवार को व्यक्तित्व विकास, सजृनात्मकता, अभिव्यक्ति। मौजूदा शिक्षा प्रणाली में बिना बदलाव किए बिना किसी वित्तीय भार के शिक्षा को इन दो उपायों से आनंददायी और विद्यालय परिसर को जीवन निर्माण केंद्र बनाया जा सकता है। आनेवाली चुनौतियों (सामाजिक स्वास्थ्य एवं नैतिक मूल्यों) से सामना करने वाली पीढ़ी के निर्माण में इस विचार की क्रियान्वित महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर सकती है।

## निर्माण स्थलों पर घुमंतू पूर्व प्राथमिक शिक्षा केंद्र एक पहल

सुरभि चावला\*

भारत सरकार द्वारा निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के अधिकार अधिनियम लागू करने के बावजूद नगरीकरण और औद्योगिकीकरण के कारण निर्माण स्थलों पर कार्यरत मजदूरों के बच्चे शिक्षा से कोसों दूर हैं। रोजगार की तलाश में ये मजदूर एक स्थान से दूसरे स्थान घूमते रहते हैं जिस कारण वे अपने बच्चों को पर्याप्त शिक्षा दिला पाने में असमर्थ हैं। प्रस्तुत लेख में इन बच्चों के लिए शिक्षा के अवसरों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

नगरीकरण और औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया ने जिस महानगरीय संस्कृति को जन्म दिया है, उसकी कल्पना करते ही हमारे सम्मुख एक वैभवशाली सुख-सुविधाओं से संपन्न शहर का चित्र उभरता जहाँ गगनचुंबी चमकदार इमारतें चमचमाती सड़कें, हरे-भरे सुनियोजित पार्क, तरह-तरह से बने बाज़ार-हाट, विद्यालयों से लेकर महाविद्यालयों की सहज उपलब्धता आदि हैं। इन सबके साथ एक वीभत्स दृश्य भी साकार होता है महानगर संस्कृति का — वह है सुविधाओं से वंचित मलिन आवासीय बस्तियाँ और सतत रूप से होने वाला निर्माण कार्य। यद्यपि एक ओर सतत रूप से चलने वाला निर्माण कार्य आर्थिक विकास का संकेतक है, तो दूसरी ओर निर्माण स्थलों पर रह रहे लोगों के संदर्भ में सामाजिक

विकास के संकेतक शून्य के स्तर पर हैं। सामाजिक विकास के मुख्य संकेतक हैं —

- शिक्षा (पूर्व प्राथमिक स्तर से लेकर आगे तक)
- स्वास्थ्य सुविधाएँ (स्वच्छ पेयजल, शौचालय आदि की उपलब्धता से लेकर प्राथमिक चिकित्सा सेवाओं एवं अन्य स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता तक)
- स्वस्थ मनोरंजन सुविधाओं की उपलब्धता एवं उनका उपयोग
- सुरक्षित आवासीय सुविधाओं की उपलब्धता उपर्युक्त चारों मूल संकेतक किसी भी निर्माण स्थल के पास या निर्माण स्थल पर रह रहे लोगों के जीवन में किसी भी रूप में दिखाई नहीं देते हैं। साधारणतया, छोटे से छोटे व बड़े से बड़े निर्माण स्थल पर कम से कम सात-आठ परिवारों का जमावड़ा

\*शोधार्थी, अंबेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली

अस्थायी निवास बनाकर अपना जीवनयापन करते हुए दिख जाता है। प्रत्येक परिवार में दो से लेकर पाँच की संख्या में बच्चे मिल जाते हैं। बच्चों की आयु शून्य से लेकर 14-15 वर्ष होती है।

जिस समय माता-पिता आजीविका उपार्जन हेतु कार्य में संलग्न होते हैं, उस समय उनके बच्चे धूल मिट्टी आदि में खेलकर 'असुरक्षित एवं अतिशय रूप से अस्वच्छ' परिवेश में अपना पूरा दिन बिता देते हैं।

इन स्थलों पर क्रैश, पूर्व प्राथमिक अथवा प्राथमिक विद्यालय जैसी कोई सुविधा नहीं होती और आस-पास यदि ऐसी कोई सुविधा होती भी है तो यह मजदूर वर्ग अपने काम की अनिश्चित अवधि के कारण अपने बच्चों को विद्यालय भेजता भी नहीं है। उनमें से यदि कोई मजदूर परिवार औपचारिक विद्यालयी व्यवस्था का लाभ भी उठाना चाहे तो नहीं उठा सकता क्योंकि निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के अधिकार अधिनियम के बावजूद भी विद्यालयों की प्रवेश प्रक्रिया बहुत जटिल है। घर का स्थायी पता न देने की स्थिति में इन्हें प्रवेश नहीं दिया जाता है। इस कारण निर्माण स्थलों पर रह रहे लोगों के बच्चे 'शिक्षा' एवं 'पोषण' जैसी सुविधा और सामाजिक विकास के मुख्य संकेतक से वंचित रह जाते हैं।

दिल्ली महानगर के जिला दक्षिण-पश्चिमी में द्वारका नामक उपनगरी है जहाँ हर आधे किलोमीटर से भी कम की दूरी पर निर्माण कार्य होता हुआ मिलेगा और परिणामस्वरूप हर निर्माण स्थल पर रहते हुए मजदूर व उनके परिवार भी मिल जाते हैं। इस उपनगरी के सेक्टर तीन आज़ाद हिंद फौज मार्ग पर एक निर्माण

स्थल के साये तले रह रहे मजदूरों के बच्चों को अनौपचारिक रूप से पूर्व प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध करवाने का छोटा-सा प्रयास किया गया जिसे इस लेख के माध्यम से साझा करना चाहती हूँ क्योंकि यह अन्य स्थलों के लिए भी एक अच्छा उदाहरण हो सकता है।

### विचार उत्पत्ति

दिनांक 6.1.2016 की सुबह सेक्टर 3/13 एम.आर. वी. बस स्टॉप, द्वारका, नयी दिल्ली पर अचानक दो-तीन वाहन भीषण आवाज़ के साथ एक दूसरे से टकराते हैं। टकराने का कारण एक तीन वर्षीय बच्चा जो समीपस्थ निर्माण स्थल से खेलता-खेलता सड़क पर आ गया है और उसे बचाने के लिए द्रुत गति से चली आ रही कार अचानक घर्षण के साथ रुकती है। स्वाभाविक है कि उस कार के पीछे चले आ रहे वाहन अचानक रुक न पाने के कारण टकराएँगे ही। संयोग एवं सौभाग्यवश इस दुर्घटना में जान की क्षति नहीं होती यद्यपि आर्थिक रूप से क्षति अवश्य हुई पर यह दुर्घटना एक रचनात्मक विचार को जन्म देती है। इस रचनात्मक विचार के परिणामस्वरूप उस निर्माण स्थल (सेक्टर-3/13 आवासीय परिसर) के मजदूर परिवारों के 3 वर्ष की आयु से लेकर 6 वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए सामुदायिक सहभागिता से एक अनौपचारिक पूर्व प्राथमिक शिक्षा केंद्र उसी निर्माण स्थल पर खोला जाता है और एक वर्ष, 8 माह 19 दिन तक अर्थात् 18.09.17 तक यानी कि मजदूरों द्वारा निर्माण स्थल को छोड़ने तक अस्तित्व में रहता है और बच्चों की पूर्व प्राथमिक शिक्षा एवं पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करता है।

## कैसे आरंभ हुआ?

सैक्टर-3/13 द्वारका, एमआरवी बस स्टॉप के पीछे निर्माण कार्य चल रहा है और यह वह स्थल है जहाँ से प्रतिदिन सुबह मैं अपने महाविद्यालय के लिए गुजरती थी और सायं काल भी इसी स्थल को पार करती हुई अपने घर पहुँचती थी। आते-जाते मेरी नज़र यहाँ के बच्चों पर पड़ती थी। कोई धूल में लेटा हुआ होता, कोई पत्थर पर रोटी रखकर उसे चाव से खा रहा होता, कुछ बच्चे मिल जुल कर खेल रहे होते तो कुछ माँ-पिता से अभद्र शब्द सुनकर हाथ पैर पटकते हुए रो रहे होते। सुबह शाम लगभग यही दृश्य मेरी दृष्टि से गुजरता। अनेक बार मेरे मानस में विचार कौंधता कि ये बच्चे कैसे जीवित हैं? चारों ओर रेत-सीमेंट की गर्द, औज़ारों एवं मशीनों की आवाज़ें, न कोई दीवार या ओट, न बिछौना न गोद, ये किस तरह से जीवन जी रहे हैं? यह भी विचार कौंधता कि आज जब निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की दुंदुभी चारों तरफ बज रही है तो ये बच्चे उसका लाभ क्यों नहीं उठा रहे? क्यों ये बच्चे पूरा दिन इसी प्रकार बिता देते हैं?

बस इसी तरह के विचार मन में आते और धुएँ के बादल की तरह उड़ भी जाते।

कभी भी ठहर कर यह चिंतन नहीं किया कि इन बच्चों के लिए मेरे जैसी युवा नागरिक की ओर से भी कोई सकारात्मक एवं रचनात्मक पहल की जा सकती है।

दिनांक 6.1.2016 को भी मैं सामान्य दिनों की तरह उस स्थान से गुजर रही थी और मेरे सामने ही दिल दहला देने वाली घटना होते-होते टल गई। कार चालक यदि अकस्मात् अपना वाहन नहीं रोक पाता तो

खेलते-खेलते सड़क तक आ पहुँचे बच्चे की अकाल मृत्यु निश्चित थी। इस भयावह दृश्य की कल्पना करके मैं सिहर उठी और महाविद्यालय पहुँचने तक अनेक प्रकार के विचार मेरे मन-मानस में कुलबुलाते रहे। चूँकि मैं 'पूर्व बाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा' जैसे विषय में परास्नातक का दो वर्षीय पाठ्यक्रम कर रही हूँ तो मुझे लगा कि इस विषय में पाठ्यक्रम करने की सार्थकता तभी है जब मैं उक्त निर्माण स्थल के मज़दूरों के बच्चों हेतु अपने ही स्तर पर एक पूर्व प्राथमिक शिक्षा केंद्र का आयोजन कर सकूँ।

## विचार से व्यवहार तक

किसी भी विचार या कल्पना या सपने का साकार होना क्या बहुत आसान है? भारत जैसे देश में जहाँ समाज के समूचे ताने-बाने में संशय, लाभ-हानि, जाति-पाति, धर्म, वर्ग आदि की जटिलता नज़र आती है और जहाँ प्रशासनिक विसंगतियाँ भी मज़बूती के साथ खड़ी हो वहाँ क्या कोई युवा लड़की अपरिचित परिवेश में 'सामुदायिक संगठन' की पहल से जुड़ा कार्य कर सकती है? निश्चित रूप से एक असंभव-सा कार्य था कि मैं मात्र एक विचार के साथ इस निर्माण स्थल पर कोई पूर्व प्राथमिक शिक्षा केंद्र शुरू कर सकूँ। मेरे सामने कई प्रश्न थे, जैसे —

- मज़दूर परिवारों के साथ किस समय बात की जाए?
- वे मेरी बात क्यों सुनेंगे?
- वे कैसे विश्वास करेंगे कि मैं निस्वार्थ भाव से उनके बच्चों के हित के लिए कार्य करना चाहती हूँ?
- यदि उन्हें अब तक अपने बच्चों की शिक्षा, देखरेख, पोषण आदि की ज़रूरत महसूस नहीं हुई

तो क्या अचानक मेरे कह देने से वे इस ज़रूरत को समझ पाएंगे?

- यदि उनकी सहमति बन भी जाती है तो केंद्र का स्थान क्या होगा?
- बैठने के लिए दरी, पेय जल, खिलौने, पुस्तकें आदि का प्रबंध कैसे व कहाँ से किया जाएगा?

बहुत से सवाल उठे जिन्हें सिलसिलेवार मैंने अपनी डायरी में लिखा। युवा मन यह कहता था कि मैं अकेले ही इनका समाधान ढूँढ लूँगी और अब केंद्र आरंभ होगा तो सभी को चौंका दूँगी। पर अपने युवा मन की कुलौंचों को थोड़ा बाँधना पड़ा क्योंकि कल्पना को साकार करना इतना सरल कार्य नहीं था। अतः अपने परिवार जन के समक्ष मैंने अपना विचार प्रस्तुत किया। चूँकि विचार बहुत नेक था, अतः सराहना एवं प्रशंसा के भावों सहित, मेरे इस विचार का स्वागत किया गया। साथ ही तरह-तरह के संसाधन जैसे दरी, खिलौने पठन-लेखन सामग्री, बिस्कुट इत्यादि उपलब्ध करवाने का पूरा एवं पक्का आश्वासन भी दिया गया। परिवारजन के अनुसार मज़दूरों से मुझे स्वयं बात करनी थी या ऐसे कहिए कि वास्तविक धरातल मुझे स्वतः ही तैयार करना था। यद्यपि मुझे सामुदायिक संगठन और सामुदायिक विकास की प्रक्रिया के बहुत अनुभव नहीं थे फिर भी अपने ही विचारों का मंथन करती हुई अवकाश के दिन सायंकाल उस निर्माण स्थल पर पहुँची। दृश्य कुछ इस प्रकार का था.... ईंटों के चूल्हों से धुआँ उठ रहा था, कुछ महिलाएँ उन पर रोटी आदि बनाने में व्यस्त थीं, दो-तीन महिलाएँ इधर-उधर सिकुड़ी-सी बैठी थीं। पुरुष वर्ग में कुछ लेते तो कुछ टहलते से

नज़र आए। बच्चे हमेशा की भाँति इधर-उधर लुढ़कते डोलते-लड़ते पीटते खेलते नज़र आए।

मेरा परिधान, मेरा रंग-रूप मुझे उनसे अलग कर रहा था जो उन सभी को एक स्थान पर लाने में सहायक सिद्ध हुआ। बिना किसी प्रयास के इधर-उधर डोलते पुरुष महिलाएँ, बच्चे और यहाँ तक कि रोटी पकाती महिलाएँ भी मेरे पास आ गईं, जो नहीं आईं वे भी मेरी ओर अपना ध्यान केंद्रित करने की मुद्रा में थीं। औपचारिक नमस्ते आदि के बाद मैंने उनका ध्यान 6.1.17 वाली घटना की ओर दिलाया। उनसे यह भी पूछा कि विद्यालय जाने वाली उम्र के बच्चे हैं आपके, क्यों नहीं भेजते आप इन्हें विद्यालय?

एक नौजवान से मज़दूर ने लगभग कुछ घूरे हुए पूछा — “कौन ‘जैन जी ओ’ वाली तो नहीं हो?” मुझे यह स्पष्ट नहीं हो पाया। दो तीन बार पुनः यही सवाल उन्होंने किया तो मैंने ‘जैन जी ओ’ से उनका तात्पर्य पूछा। उस नौजवान मज़दूर ने ‘जैन जी ओ’ का जो लंबा-सा स्पष्टीकरण दिया उससे स्पष्ट हुआ कि वह मुझसे पूछ रहा है कि ‘क्या मैं किसी एन.जी.ओ. से संबंधित हूँ’

मैंने बहुत ही संयत भाव से पुनः एक-एक शब्द चबाते हुए अपना उद्देश्य स्पष्ट किया —

- आप सभी वयस्क मज़दूरों जैसे घोर परिश्रम के काम में व्यस्त रहते हैं,
- जिस समय आप अपने-अपने काम में व्यस्त हैं, उस समय आपके बच्चे अनावश्यक तरीके से अस्वस्थकर हालातों में खेल-कूद रहे होते हैं...

मेरी बात को काटकर एक स्त्री बोली — “जद अपने संग लेले कर तो डोल नहीं सकती है, एक बेरी



लटलन को बुखार ठाणि रहा तो संग लिवा कर गारा बनावन लागी, तेही मेटवा आकर ऐसिन डॉट लगायी कि आगे हिम्मत ही न परि।”

इस प्रकार और स्त्रियों ने भी अपने बच्चों को लेकर अपनी व्यथा सुनाई।

सबका मंतव्य यह था कि वे अपने बच्चों की सुरक्षा और शिक्षा एवं स्वास्थ्य तीनों को लेकर बहुत चिंतित हैं पर सबसे पहले आजीविका का भीमकाय प्रश्न है। उन्होंने यह भी प्रश्न किया कि सरकार को जब पता है कि हम जैसे हजारों मजदूर तीन-चार महीने से अधिक किसी कंस्ट्रक्शन साइट पर टिक नहीं सकते और निर्माण कार्य पूरा होते ही हमें वहाँ से दूसरे ठिकाने जाना ही पड़ता है तो सरकार हमारे लिए ‘घुमंतू पाठशाला’ क्यों नहीं खोल देती। एक महिला ने तो यहाँ तक कह दिया कि ‘ये ही अगर अमीरों के बच्चे होते तो सरकार थोड़ी-थोड़ी दूर पर छुट्टन-मुट्टन पाठशाला जरूर खुलवा देती।’

उपर्युक्त वार्तालाप से आप समझ ही गए होंगे कि निर्माण स्थल पर मजदूरों के बच्चों के लिए पूर्व प्राथमिक पाठशाला खोलने का प्रस्ताव बहुत आसानी से मजदूर परिवारों द्वारा पारित कर दिया गया।

- सनद रहे कि यह समग्र वार्तालाप एवं संवाद मात्र एक दिन का नहीं है। उनका विश्वास जीतने, अपनी बात उन तक रख पाने, उनकी जरूरतों को समझने इस समूची प्रक्रिया में पूरे आठ दिन लगे।
- सनद यह भी रहे कि पहले दिन से लेकर लगभग आखिर तक कुछेक लोग यह प्रश्न पूछना नहीं भूले कि इस सबसे मुझे क्या लाभ होने वाला है।

उस स्थान विशेष में बच्चों को रचनात्मक रूप से संलग्न करने की आवश्यकता स्थापित होने के बाद आगे का कार्य बहुत ही आसान था।

निर्माण स्थल पर कुछ कक्ष ऐसे तैयार हो चुके थे जो पूरी तरह से तो तैयार नहीं थे पर ‘सुरक्षा’ की दृष्टि से, धूप-वर्षा, सर्दी के बचाव की दृष्टि से बच्चों को एक साथ बैठाकर कक्षा संचालन की दृष्टि से उपयुक्त थे। उस निर्माण स्थल के ठेकेदार से मजदूर परिवारों ने बात करके एक कमरे में जो कि हालनुमा था, शिक्षा केंद्र खोलने की अनुमति ले ली।

मुझे लेश मात्र भी आभास नहीं था कि यह कार्य इतनी आसानी से होने वाला है। क्योंकि मैंने तो यही सुना था कि समुदाय में विकास और विशेषकर शिक्षा की बात करना सबसे कठिन चुनौती भरा काम है।

जैसा कि मैं पहले ही संकेत कर चुकी हूँ कि दरी, चल श्यामपट्ट, खिलौने, बाल साहित्य से जुड़ी रंगीन चित्रात्मक पुस्तकें, रंग, कलम इत्यादि मिलने का आश्वासन मिल चुका था, सो, कक्ष की सुविधा और केंद्र खोलने की सहमति के साथ ही यह सभी सामान प्रचुर मात्रा में उपलब्ध करवा दिया गया। इसके लिए मैं अपने परिवार जन और उनके मित्रों के प्रति सदैव आभारी हूँ कि सामाजिक उत्तरदायित्व निभाने में उन्होंने मेरी न केवल सहायता ही की वरन् समय-समय मार्गदर्शन कर मनोबल भी बढ़ाते रहे।

### केंद्र का शुरुआती सप्ताह

जैसा कि मैंने अपने पाठ्यक्रम के दौरान सीखा-समझा था, बच्चों को खेल गीतों से जोड़ा गया, जैसे —

राजा राजा, हाँ मेरी बाजा  
तेरी नगरी में बंपु आया

बच्चे हमारे पास आने को लालायित रहे इसके लिए मैंने लोक कहानियों का सहारा लिया।

मैंने देखा कि प्रतिदिन एक न एक मजदूर झाँक कर ज़रूर जाता कि मैं करवा क्या रही हूँ। पहला सप्ताह बीतते न बीतते मुझे कहा गया कि 'ये खेल किस्से कहानियाँ ही करवानी हैं तो बच्चे यूँ ही भले थे। भला ये भी कोई पढ़ाई हुई? आपने तो पढ़ाने-लिखाने की बात कही थी। आप तो सिर्फ़ गाना गवाती हो, खेल खिलाती हो, तो भी हम अनपढ़ों वाला। कुछ अंगरेजी हो और साथ-साथ पढ़ाई-लिखाई हो कॉपी-किताबों में।'

मैं समझ रही थी कि हमारे देश में पढ़ाई-लिखाई का मतलब 'अ-अनार, क-कबूतर' बोलने लिखने तक ही सीमित है। खेल-कूद, कहानी-किस्से, सर्किल टाइम यह सब 'पढ़ाई' में नहीं आता। मैंने निर्णय लिया कि अगर मुझे यहाँ टिकना है तो अपनी समझ की शिक्षणशास्त्रीय अवधारणाओं को थोड़ा पीछे रखना होगा और माता-पिता की समझ के अनुसार भी चलना होगा। इसलिए एक घंटा क-कबूतर की शैली में वर्णमाला लिखवाई जातीं, आधा घंटा 1, 2, 3, 4 गिनती बुलवाई जातीं और अभिभावकों को अहसास करवाने के बाद कि बच्चे पढ़ रहे हैं, मैं अपनी युक्तियाँ शुरू कर देती। कहना न होगा कि मेरी खेल संबंधी युक्तियों से बच्चे बहुत खुश रहते और चीख-चीखकर गिनती व वर्णमाला बोलने से अभिभावक बहुत खुश रहते।

इसका कारण यह था कि मजदूर वर्ग अभिभावकों को इस बात का इल्म नहीं था कि दरअसल 'पढ़ाई-लिखाई' असल मायने में होती क्या है? उनकी समझ यही कहती है कि —

- जब तक क्रम से वर्णमाला नहीं होती तो पढ़ाई नहीं हुई।
- जब तक ज़ोर-ज़ोर से बोलकर गिनती नहीं बोली गई, तब तक गणित की पढ़ाई नहीं हुई एवं
- जब तक कॉपी में वर्णमाला, गिनती आदि बार-बार नहीं लिखवाई गई, तब तक 'लिखाई' नहीं हुई।

पहले मेरा मन यह हुआ कि मैं इन सभी माता-पिता को, विशेषकर माताओं को एक साथ बैठाकर संबोधित करूँ और उन्हें शिक्षा यानी पढ़ाई-लिखाई के असली मायने बताऊँ और उनसे अनुरोध करूँ कि मैं बच्चों के साथ जैसा करना चाहती हूँ, वैसा मुझे करने दें क्योंकि पूर्व प्राथमिक स्तर के लिए वही होना चाहिए। पर मैंने अपने इस विचार को क्रियान्वित नहीं किया क्योंकि यह काम इतना आसान और जल्दी से होने वाला नहीं था। मैंने विचार किया कि मुझे अपनी ऊर्जा एवं समय बच्चों को रचनात्मक रूप से संलग्न करने में लगानी चाहिए। जैसे-जैसे बच्चों का विश्वास मेरे प्रति पनपने लगेगा और अभिभावकों को भी मेरी सेवाओं का परिणाम नज़र आने लगेगा तभी उन्हें नीतिगत सैद्धांतिक तथ्यों से अवगत करवाऊँगी। अभी ऐसा करने से डर था कि कहीं अभिभावक ये न कह दें कि अगर हमारी तरह से नहीं करना तो यहाँ आने की कोई आवश्यकता नहीं। बस यही कारण था कि मैं लगभग एक घंटे गिनती एवं वर्णमाला बुलवाने का काम करती जिससे अभिभावक खुश हो जाएँ और फिर वही क्रियाएँ करवाती जो पूर्व प्राथमिक शिक्षा केंद्र पर होना चाहिए।

मेरे द्वारा शुरू किए गए घुमंतू पूर्व प्राथमिक शिक्षा केंद्र की छोटी-सी झलक —

- स्थल — सैक्टर — 3/13 द्वारका, एमआरवी बस स्टाप के पीछे निर्माणाधीन इमारत
- समय — पहली पाली 9.30 से 12.30 एवं दूसरी पाली 5.30 से 6.30 सायंकाल
- बच्चों की कुल संख्या — 42
- बच्चों का आयु वर्ग — 3 वर्ष से लेकर 6 वर्ष तक के बच्चे
- उपलब्ध संसाधन — दरी, पुराने कैलेण्डर, तरह-तरह के खिलौने (जैसे — बस, इंजन, फल, लकड़ी के बर्तन, गुड्डा-गुड़िया, साँप-सीढ़ी, लूडो, कूदने वाली रस्सी, ढोलक, लकड़ी के ब्लॉक, वाटर कलर एवं 5-6 ब्रुश, रंग-बिरंगी पुरानी चुन्नियाँ, कपड़ों की कतरने, पुराने अखबार, मुलतानी मिट्टी, सूखे रंग, छोटी-बड़ी कूचियाँ, औपचारिक विद्यालय जा रहे बच्चों की पुरानी कापियाँ।  
(नोट — उपर्युक्त संसाधन मित्रों, संबंधियों आदि से प्राप्त किए गए।)
- संसाधन व्यक्ति — स्वयं। उसके पश्चात् मेरे कक्षा मित्र सलोनी और श्रेयस जो अंबेडकर विश्वविद्यालय से प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा एवं देखभाल, कार्यक्रम के विद्यार्थी हैं।
- पाठ्यचर्यक बिंदु —
  - खेल गीत गायन
  - बाल कविताएँ
  - ध्वन्यात्मक कविता खेल
  - रंगों के नाम और पहचान
  - रंग भरना

- ऑरिगेमी (नाव, घर, तारे, कमीज, चूहा, फूल)
- ठप्पे — अंगूठे, अंगुली, कील का मुंहसिरा, पत्तियाँ, रोएंदार कपड़ा
- एक्शन शब्द — ताली बजाना  
(अभिनय के साथ शब्द बोलना)  
कूदना  
फुदकना  
दौड़ना  
हँसना  
खाना खाना  
बैठना  
नहाना
- कहानी सुनाना और कहना
- भिन्न-भिन्न परिचित स्थितियों पर संवाद बुलवाना
- घेरा समय (Circle time) — अभिनय के साथ कविताएँ गाना जैसे —  
हम बाज़ार जाएँगे,  
हम जलेबी लाएँगे  
कितनी जलेबी लाएँगे  
हम... जलेबी लाएँगे।
- मिट्टी का कार्य — मिट्टी से तरह-तरह के खिलौने, बर्तन, वस्तुएँ आदि बनाना
- स्वतंत्र अभिव्यक्ति — आस-पास की बेकार पड़ी वस्तुओं का संग्रह कर उनको चिपका मनपसंद आकृतियाँ बनाना।
- रंगों, चॉक आदि से चित्रकारी करना
- छोटा-बड़ा
- दूर-पास की अवधारणा

- अंदर-बाहर
- काँपी में गिनती 1 से 25 एवं वर्णमात्रा श्यामपट्ट से उतरवाना (अभिभावकों की संतुष्टि के लिए) इस घुमंतू पूर्व प्राथमिक शिक्षा केंद्र में उपर्युक्त सभी गतिविधियाँ करवाई गईं।

इस निर्माण स्थल पर निर्माण कार्य पूरा होने के साथ-साथ सभी मजदूर किसी दूसरी जगह चले गए हैं। उन्होंने जाते-जाते यही इच्छा प्रकट की कि आजीविका की मजबूरी के रहते उन्हें जाना पड़ रहा है अन्यथा वे बिल्कुल भी नहीं जाना चाहते, क्योंकि यहाँ उनके बच्चों की बहुत पढ़ाई-लिखाई

हो रही है। इस सफल कथानक के लिखने तक इस मजदूर वर्ग में से 8 परिवार अपने दूर के कार्यस्थल से लौटकर आए हैं और अपने दूसरे कार्यस्थल पर भी पूर्व प्राथमिक शिक्षा केंद्र को जारी रखने की माँग उठाई है।

अपनी उम्र के सभी साथियों और नीति-निर्धारकों से मेरा विनम्र निवेदन है कि मेरे द्वारा शुरू की गई पहल के लाभ और पूर्व विद्यालयी शिक्षा का महत्त्व देखते हुए प्रत्येक निर्माण स्थल पर श्रमिकों के बच्चों के लिए पूर्व विद्यालयी शिक्षा केंद्र खोलने का अत्यावश्यक कदम उठाएँ।

## प्रारंभिक बाल शिक्षा तथा देखभाल की संरचना

पद्मा यादव\*

प्रारंभिक बाल शिक्षा शालाएँ बच्चों को प्रेरणादायक खेल वातावरण प्रदान करती हैं। जिसमें बच्चों का बौद्धिक, भाषागत, सामाजिक, संवेगात्मक तथा शारीरिक विकास होता है। साथ ही पूर्व प्राथमिक शिक्षा बच्चों को औपचारिक शिक्षा के लिए तैयार करती है। पूर्वप्राथमिक शिक्षा का उद्देश्य बच्चों का सर्वांगीण विकास करना है। प्रारंभिक बाल शिक्षा में स्वास्थ्य, पोषण तथा पूर्व प्राथमिक शिक्षा अथवा शैशवकालीन उद्दीपन के तत्व शामिल होते हैं। प्रारंभिक बाल शिक्षा निश्चित रूप से खेल विधि से दी जाने वाली शिक्षा है। यह खेल और क्रिया पर आधारित शिक्षा है क्योंकि खेल विधि में व्यक्तिगत आवश्यकताओं, रुचियों तथा क्षमताओं का ध्यान रखा जाता है। खेल विधि द्वारा बच्चों को सीखने में आनंद की अनुभूति होती है। इस स्तर पर औपचारिक शिक्षण विधियों के प्रयोग तथा पढ़ने-लिखने और गणित शिक्षण के विरुद्ध चेतावनी भी दी गयी है। प्रस्तुत लेख में प्रारंभिक बाल शिक्षा तथा देखभाल की संरचना कैसी हो इस पर बल दिया गया है।

प्रारंभिक बाल्यावस्था (जन्म से आठ साल तक का समय) बहुत ही संवेदनशील और निर्णायक होती है। इस अवस्था को जीवन भर के विकास के आधार और समस्त संभावनाओं के द्वारा के रूप में जाना जाता है। इस अवस्था में मस्तिष्क का विकास बहुत तीव्र गति से होता है। मूल्यों की नींव भी इसी चरण में पड़ती है।

अतः यह बहुत आवश्यक है कि इस अवस्था के बच्चों की उचित देखभाल हो, उनके सर्वांगीण विकास के लिए पर्याप्त अवसर और अनुभव उपलब्ध कराए जाएँ।

सर्वांगीण विकास में शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, भावात्मक विकास एवं विद्यालय के लिए तैयारी शामिल है। बच्चों की स्वास्थ्य एवं पोषण की ज़रूरतें भी उनके मनोवैज्ञानिक-सामाजिक और शैक्षणिक विकास से जुड़ी हुई हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) एवं राष्ट्रीय ई.सी.सी.ई. नीति (2013) में इस बात पर बल दिया गया है कि बच्चों के सर्वांगीण विकास को ध्यान में रखकर बालकेंद्रित पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधि

अपनाने से पूर्व प्राथमिक शिक्षा (3-6 साल के बच्चों के लिए) प्रभावी होती है।

बच्चों में सीखने और अपने आसपास की दुनिया को समझने की इच्छा होती है। इसलिए शुरुआत में सीखने-सिखाने के प्रक्रिया बच्चों की रुचि और जरूरत के हिसाब से होनी चाहिए। इस अवस्था में औपचारिक शिक्षण (Reading, Writing and Arithmetic) बिल्कुल नहीं होना चाहिए। इससे बच्चों के विकास पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता (नुकसानदेह) है।

बच्चों को औपचारिक रूप से पढ़ने-लिखने तथा गणित की शिक्षा दी जाती है। इस तरह बच्चों पर अनावश्यक बोझ व दबाव पड़ता है। इसके अलावा, कुछ नर्सरी स्कूल बच्चों को ऐसी शिक्षा देने का प्रयास करते हैं, जो बच्चों को उनके परिवेश व पृष्ठभूमि से नहीं जोड़ पाती।

अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि 3-6 आयुवर्ग के बच्चों की क्षमता, आवश्यकता तथा ग्रहणशीलता के स्तर को देखते हुए पूर्व प्राथमिक शिक्षा का ऐसा कार्यक्रम तैयार किया जाए, जो बच्चे

### राष्ट्रीय प्रारंभिक बाल्यावस्था देखरेख और शिक्षा (ई.सी.सी.ई.) नीति — 2013

प्रारंभिक बाल्यावस्था देखरेख और शिक्षा (ई.सी.सी.ई.) संरक्षित और अनुकूल वातावरण में देखरेख, स्वास्थ्य, पोषण, खेलकूद और प्रारंभिक शिक्षा जैसे अभिन्न तत्वों को सम्मिलित करती है। यह पूरे जीवन के विकास और शिक्षण के लिए एक अपरिहार्य आधार है जिसका प्रारंभिक बाल्यावस्था विकास पर स्थायी प्रभाव पड़ता है। ई.सी.सी.ई. को वरीयता दिया जाना और इसमें निवेश करना आवश्यक है, क्योंकि यह पीढ़ी दर पीढ़ी चले आए सुविधाहीनता के चक्र को तोड़ने और असमानता को दूर करने के लिए सबसे अधिक कारगर उपाय है जो दीर्घकालिक सामाजिक और आर्थिक लाभ देता है।

राष्ट्रीय प्रारंभिक बाल्यावस्था देखरेख और शिक्षा (ई.सी.सी.ई.) नीति सभी बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए प्रसवपूर्व अवधि से छह वर्ष की आयु तक सतत रूप से समेकित सेवाएँ प्रदान करने की भारत सरकार की वचनबद्धता की अभिपुष्टि करती है। यह नीति प्रत्येक बच्चे की देखरेख और प्रारंभिक अधिगम पर ध्यान केंद्रित करते हुए बच्चों की उत्तरजीविता, वृद्धि और विकास के लिए ठोस आधार सुनिश्चित करने के लिए एक व्यापक मार्ग प्रशस्त करती है। यह नीति बच्चे के स्वास्थ्य, पोषण, मनो-सामाजिक और भावात्मक आवश्यकताओं के बीच सहक्रियात्मक और परस्पर निर्भरता को स्वीकार करती है।

नर्सरी स्कूलों में से अधिकतर केवल प्राथमिक स्कूलों का लघु रूप बनकर रह गए हैं, जहाँ छोटे

के परिवेश व परिस्थितियों के अनुकूल हो। साथ ही वह उनके विकास को गति प्रदान करें।

पूर्व प्राथमिक शिक्षा पर बल देने तथा इसके स्तर को ऊँचा उठाने में सुनियोजित कार्यक्रम का बहुत महत्वपूर्ण योगदान है, क्योंकि इसके द्वारा बच्चे पढ़ने-लिखने की तैयारी के लिए ज़रूरी कौशलों से युक्त हो जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप वे आगे की शिक्षा को सरलता से ग्रहण कर पाते हैं।

जिन मूल्यों, मनोवृत्तियों, वांछित संस्कारों एवं आदतों का बीजारोपण हम बच्चे में करते हैं, बड़े होने पर उसके व्यक्तित्व में हम उन्हीं का विकसित रूप पाते हैं।

अतः प्रारंभिक बाल शिक्षा में निम्नलिखित के लिए क्रियाकलाप तथा अनुभव सम्मिलित होने चाहिए—

- शारीरिक विकास एवं मांसपेशियों का विकास
- संज्ञानात्मक विकास
- भाषा विकास
- सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास
- सृजनात्मक अभिव्यक्ति एवं सौंदर्यबोध विकास

## प्रारंभिक बाल शिक्षा (पूर्व प्राथमिक शिक्षा)

### (i) शिक्षण विधि

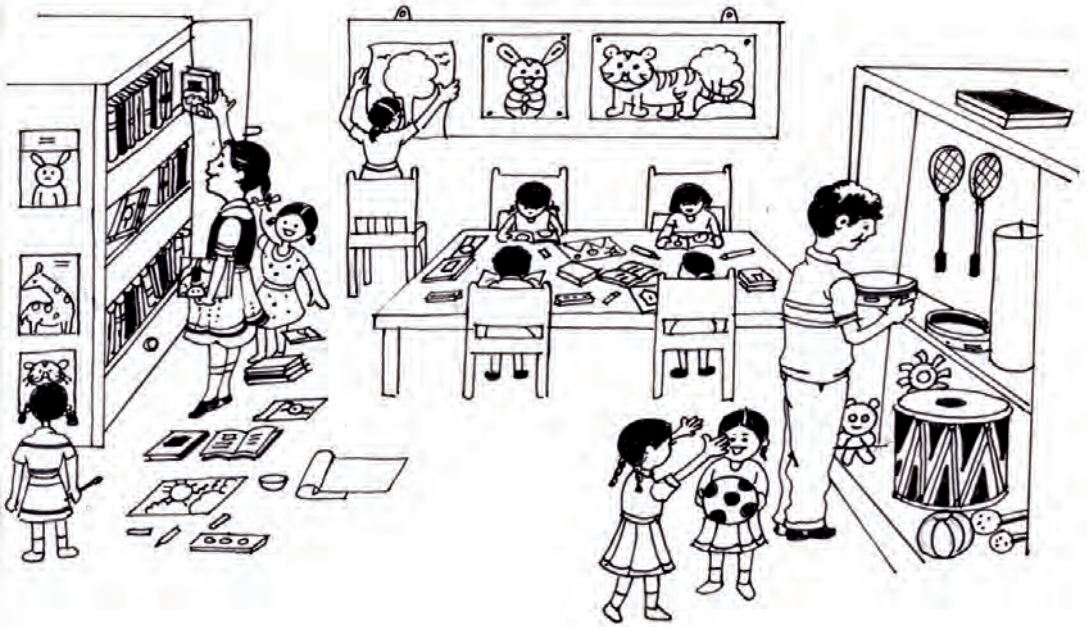
पूर्व प्राथमिक स्तर पर शिक्षण विधि बच्चों की रुचि और प्राथमिकताओं के अनुकूल, उनके अनुभवों पर आधारित, आस-पास की दुनिया से जुड़ी हुई, खेल-खेल में और क्रिया पर आधारित होनी चाहिए। इसमें कविता (2 से 4 लाइन) बाल-गीत, कहानी, नाटक, समूह में खेले जाने वाले खेल इत्यादि शामिल होने चाहिए।

### (ii) कक्षा व्यवस्था, खेल सामग्री एवं प्रबंधन

कक्षा बड़ी होनी चाहिए, खिड़की बड़ी और नीची होनी चाहिए जिससे बच्चों को बाहर का नज़ारा दिख सके साथ ही कक्षा में भरपूर रोशनी एवं हवा आए। फ़र्श पर दरी बिछी हुई होनी चाहिए तथा उस पर हल्की छोटी-छोटी कुर्सियाँ और टेबल होनी चाहिए। फ़र्नीचर ऐसा होना चाहिए कि उसे आसानी से हटाया व लगाया जा सके, ताकि खेल-विधि का प्रयोग आसानी से हो सके। शिक्षक जब चाहे वह टेबल-कुर्सी लगाकर या ज़मीन पर (दरी के ऊपर) बच्चों को छोटे-बड़े समूहों में गोल दायरे में बैठाकर क्रिया करवा सके। बच्चों द्वारा बनाए हुए सामान को दीवार पर या बीच में रस्सी लगाकर उस पर क्लिप की सहायता से टाँग सके। बच्चे और उनके अभिभावक बच्चों द्वारा किया गया काम देखकर बहुत खुश होते हैं। दीवार पर या डिस्पले बोर्ड पर लगा सामान इतनी ऊँचाई पर न हो कि बच्चे उसे देख न सके या उनकी गर्दन में पीड़ा होने लगे।

कक्षा में बच्चों को खेलने के लिए पर्याप्त मात्रा में खेल-खिलौने होने चाहिए। बच्चे पंसद के अनुसार खिलौने चुन और खेल सकें। कई बार बच्चों में एक ही सामान के लिए झगड़ा भी हो जाता है। ऐसे में शिक्षक को चाहिए कि बच्चों को उनकी बारी का इंतज़ार करना सिखाएँ। कक्षा में खिलौनों को नीचे बच्चों की ऊँचाई के अनुसार से रखना चाहिए, ताकि बच्चे आसानी से उठा और रख सकें। कुछ शिक्षक खिलौने अलमारी में बंद करके रख देते हैं यह गलत है।





कक्षा में अनेक तरह के गतिवधि कोने भी बनाए जा सकते हैं जैसे एक किनारे गुड़ियों के खेलने का सामान हो सकता है उसमें तरह-तरह की गुड़िया, गुड़ियों को सजाने का सामान, किचन सेट, डाक्टर सेट आदि हो सकता है। दूसरे किनारे सचित्र पुस्तकें, चार्ट पेपर, क्रेयॉन आदि रखे जा सकते हैं जो बच्चों में पढ़ने-लिखने की रुचि को अग्रसर कर सकें, यहाँ बच्चों को बैठने के लिए छोटा गद्दा और कुशन लगा सकते हैं, छोटी टेबल और उसके चारों ओर कुर्सी भी लगा सकते हैं आदि।

कुल मिलकर कक्षा में हर-तरह की गतिविधि के लिए पर्याप्त जगह होनी चाहिए। शिक्षक को समान रखने के लिए स्थान चाहिए, बच्चों को भी अपना सामान जैसे छोटा बैग (जिसमें केवल टिफिन,

रूमाल और छोटी डायरी आ जाए) और पानी की बोतल रखने की जगह चाहिए। बच्चे चप्पल कक्ष के बाहर उतार सकते हैं क्योंकि कक्षा में दूरी बिछी होती है, तो चप्पलों को ठीक से रखने के लिए शूज रैक होना चाहिए।

पूर्व प्राथमिक स्तर पर जितनी आवश्यक कक्षा के अंदर की जगह और खेल सामग्री है उतनी ही आवश्यक है कक्षा के बाहर की जगह जहाँ बच्चों को खेलने के लिए झूलों की आवश्यकता होती है।

कक्षा के बाहर बच्चों को झूले, चढ़ने-उतरने, दौड़ने-भागने, लटकने, संतुलन बनाए रखने आदि के अवसर प्रदान करने वाली सामग्री चाहिए होती है। बड़ी-छोटी गेंद के खेल, टायर दौड़ाना, छोटी (तीन पहिए वाली) साइकिल चलाना भी बच्चों को बहुत

अच्छा लगता है। इन सब खेलों के अवसर देने से बच्चों को शारीरिक विकास बहुत अच्छा होता है तथा खेल-खेल में दूसरों बच्चों से सामंजस्य बनाना भी सीख जाते हैं।

कक्षा के बाहर बच्चों को बालू-मिट्टी के खेल, पानी के खेल आदि के अवसर भी देने चाहिए। ये खेल बच्चों में सामाजिक विकास के साथ-साथ भावात्मक विकास के अवसर भी प्रदान करते हैं।

### **(iii) पूर्व-प्राथमिक स्तर का आकलन**

पूर्व प्राथमिक स्तर पर कभी किसी भी प्रकार की बच्चों की परीक्षा नहीं ली जानी चाहिए। न ही इस स्तर के बच्चों को कोई गृहकार्य देना चाहिए। इस स्तर पर कक्षा-कक्षा की गतिविधियों में भिन्नता होनी चाहिए। बच्चों पर उबाऊ और नीरस दिनचर्या नहीं थोपनी चाहिए। औपचारिक या ज्यादा व्यवस्थित शिक्षा वो भी अंग्रेजी भाषा में जैसा कि आजकल काफ़ी पूर्व-प्राथमिक शालाओं में देखा जा रहा है नुकसानदेह है। इससे बच्चों में तनाव उत्पन्न हो जाता है; कभी-कभी तो बच्चे पेट दर्द की शिकायत करने लगते हैं, उन्हें बुखार आ जाता है या फिर वे बिस्तर गीला करने लगते हैं।

अतः इस स्तर पर सीखने का आकलन अनौपचारिक और सतत होना चाहिए। बच्चे दिनचर्या में किस प्रकार की प्रतिभागिता कर रहे हैं; उनमें अच्छी आदतों का निर्माण हो रहा है या नहीं; उनका विकास सभी आयामों में (शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संज्ञानात्मक) ठीक प्रकार से हो रहा है या नहीं आदि का आकलन खेल-खेल में क्रिया के माध्यम से होना चाहिए।

पूर्व प्राथमिक शाला में जो कुछ भी सिखाया जाता है उसके सबलीकरण के लिए भी माता-पिता का सहयोग चाहिए। बच्चे की देखभाल, स्वास्थ्य और पोषण की ज़िम्मेदारी अभिभावकों पर होती है। शिक्षिका भी विद्यालय में कार्यशाला का आयोजन करके अभिभावकों को उनकी ज़िम्मेदारी सकुशल निभाने में मदद कर सकती है। अभिभावकों को खेलों का महत्व भी समझा सकती है तथा उन्हें बाल-विकास की मामूली जानकारी दे सकती हैं। अभिभावक जब विद्यालय आते हैं तो उनका स्वागत होना चाहिए, बच्चे के विषय में बातचीत होनी चाहिए और उनमें सहयोग की अपेक्षा करना चाहिए।

### **(iv) माता-पिता का सहयोग**

अभिभावकों की अत्यधिक आकांक्षाओं तथा स्कूल पूर्व शिक्षा के बढ़ते व्यवसायीकरण का परिणाम है कि बच्चों में आजकल इतना तनाव देखने को मिल रहा है। बच्चों का बचपन जैसे खोता सा जा रहा है। बच्चों को माँ-पिता खेलने से रोकते रहते हैं और पढ़ने के लिए ज्यादा कहते हैं।

साथ ही माँ-पिता बच्चों की शिकायत भी करते दिखते हैं कि बच्चा हमेशा मोबाइल से खेलता रहता है, टी.वी. बहुत देखता है, घर का खाना नहीं खाता, चाकलेट, चिप्स बहुत खाता है आदि।

पूर्व प्राथमिक स्तर की शिक्षा का असर बच्चों के विकास पर बहुत अधिक पड़ता है। माता-पिता एवं अभिभावक साथ मिलकर बच्चों में अच्छी आदतों का निर्माण कर सकते हैं। इसके लिए माता-पिता को बच्चों की शिक्षा में बहुत रुचि लेनी चाहिए साथ ही

शिक्षकों से समय-समय पर मिलते रहना चाहिए। इससे माता-पिता को बच्चों के विकास की जानकारी मिलती है और शिक्षिका यदि विकास में कोई कमी महसूस करती है तो समय पर अभिभावकों को सूचित किया जा सकता है तथा उसे दूर करने में मदद हो सकती है।

शिक्षकों को भी इसका काफ़ी फ़ायदा हो सकता है। शिक्षकों को यह जानकारी हो जाती है कि कौन अभिभावक कविता, कहानी सुनाने में, खेल-सामग्री बनाने में या बच्चों को पिकनिक आदि ले जाने में उनकी मदद कर सकते हैं।

### संदर्भ

- एन.सी.ई.आर.टी. 2000. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000*. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- . 2006. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- कौल, विनीता. 1996. *प्रारंभिक बाल शिक्षा कार्यक्रम*. पूर्व प्राथमिक एवं प्रारंभिक शिक्षा विभाग. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.
- महिला एवं बाल विकास मंत्रालय. 2013. *राष्ट्रीय प्रारंभिक बाल्यावस्था देखरेख और शिक्षा (ई.सी.सी.ई.) नीति 2013*, नयी दिल्ली.
- मानव संसाधन विकास मंत्रालय. 1986. *राष्ट्रीय शिक्षा नीति — 1986*. मानव संसाधन विकास मंत्रालय. नयी दिल्ली.
- . 2011. *निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम — 2009*. मानव संसाधन विकास मंत्रालय. नयी दिल्ली.
- यादव, पद्मा. 2015. *एगजेम्पलर गाइडलाइंस फॉर इंप्लिमेंटेशन ऑफ़ अलर्ली चाइल्डहुड केयर एंड एजुकेशन (ई.सी.सी.ई.) करीकुलम*. एन.सी.ई.आर.टी. नयी दिल्ली.
- सोनी, रोमिला. राजेन्द्र कपूर एवं कृष्णाकांत वशिष्ठ. 2003. *पूर्व प्राथमिक शिक्षा — एक परिचय*. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.

## पूर्व प्राथमिक शिक्षा में शिक्षण-अधिगम विधियाँ

रीना रानी\*

शिक्षण एक जटिल सामाजिक प्रक्रिया के साथ-साथ निरंतर चलने वाली उद्देश्यपूर्ण विकास प्रक्रिया भी है। शिक्षण के लिए औपचारिक वातावरण चाहिए, लेकिन यह अनौपचारिक वातावरण में भी संभव है। मनोविज्ञान ने विभिन्न शिक्षण-विधियों की व्याख्या की है। इन शिक्षण विधियों से शिक्षिका को परिचित होना आवश्यक होता है। विभिन्न उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए भिन्न-भिन्न शिक्षण-अधिगम विधियों का प्रयोग करना पड़ता है। शिक्षा के उद्देश्य निर्धारित करने व पाठ्यक्रम बनाने के बाद शिक्षा के उद्देश्यों को सार्थक, उद्देश्यपूर्ण रोचक व उपयोगी बनाने के लिए शिक्षिका को किसी न किसी शिक्षण विधि का प्रयोग अवश्य करना पड़ता है। शिक्षिका को शिक्षण विधि का चयन करते समय विषयवस्तु, बालकों/विद्यार्थियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं एवं संसाधनों की उपलब्धता को ध्यान में रखना चाहिए। ऐसा न करने से शिक्षण कार्य सुचारू रूप से नहीं चल सकता। शिक्षण को महत्वपूर्ण और प्रभावी बनाने में शिक्षण-अधिगम विधियों का प्रयोग किया जाता है। प्रस्तुत लेख में पूर्व प्राथमिक शिक्षा में शिक्षण-अधिगम विधियों के संदर्भ में विस्तृत चर्चा की गयी है।

पूर्व प्राथमिक शिक्षा में शिक्षण को प्रभावी और असरदार बनाने में उसे शिक्षण-अधिगम प्रक्रियाओं को कराने का तरीका अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जो भी शिक्षण-अधिगम कराया जाता है उसे व्यावहारिक रूप देना आवश्यक होता है। शिक्षण-अधिगम को सही विधियों द्वारा लागू करने से शिक्षण प्रभावशाली बन जाता है और अधिक समय तक बच्चों के मस्तिष्क में उसकी छाप बनी रहती है। शिक्षण को महत्वपूर्ण और अर्थपूर्ण बनाने में शिक्षण-अधिगम विधियों का प्रयोग किया जाता है। यह विधियाँ दो प्रकार की होती हैं — मौखिक और दृश्यात्मक।

### मौखिक शिक्षण विधि

इसमें हम इस शिक्षण प्रक्रिया में बोलकर बच्चों से विषय पर चर्चा कर सकते हैं। इसके अंतर्गत निम्न क्रियाएँ आती हैं —

- वार्तालाप
- वर्णन
- प्रश्नोत्तर

### वार्तालाप

जब हम इस क्रिया का प्रयोग करते हैं तो हम बच्चों की भाषा का विकास कर रहे होते हैं। इसके द्वारा बच्चों में बोलने का अभ्यास कराना है कि वह अपने विचारों को प्रकट कर सके। वार्तालाप

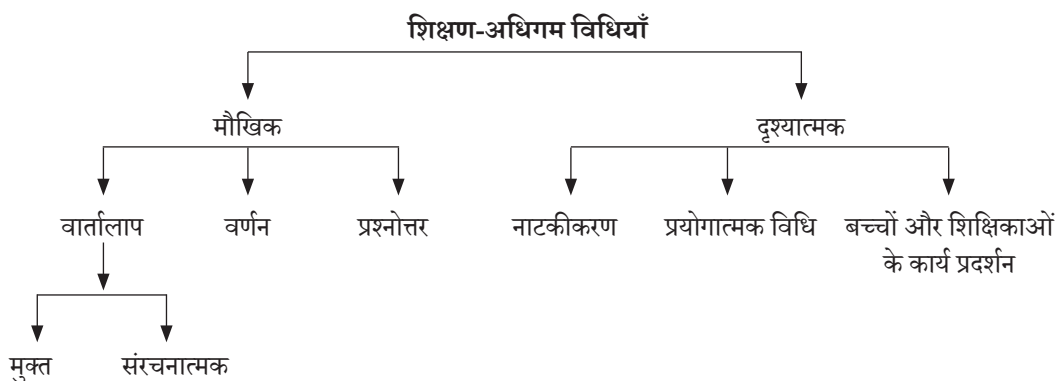
भी दो प्रकार की होती है। (क) मुक्त वार्तालाप  
(ख) संरचनात्मक वार्तालाप

#### (क) मुक्त वार्तालाप

इस क्रिया में बच्चों को स्वतंत्र रूप से कहने के लिए अवसर प्रदान किया जाता है। उन्हें जो कुछ भी कहना है, बोलना है या बताना चाहते हैं, कुछ भी विचार व्यक्त करना चाहते हैं तो उसे मुक्त वार्तालाप कहते हैं। इससे उनमें आत्मविश्वास और बोलने की क्षमता के साथ-साथ शब्द ज्ञान भी बढ़ता है तथा वह दूसरों की बात सुनते भी हैं तो श्रवण कौशल का विकास भी होता है। इस क्रिया में बच्चे मुक्त खेल में आपस में बातचीत करते हैं तो मौखिक कौशल का विकास होता है। जैसे बच्चे से पूछ लेना कि ‘सुबह आते समय आपने क्या देखा?’ इस पर बच्चे स्वतंत्र रूप से बोलने का प्रयास करते हैं। इसी प्रकार देखो और

#### (ख) संरचनात्मक वार्तालाप

जब बच्चे की भाषा विकास के साथ-साथ आत्मविश्वास, आत्माभिव्यक्ति कराई जाती है तो इसके लिए एक विषय दे दिया जाता है जैसे — होली। इस पर शिक्षिका प्रश्न पूछ कर या विषय की शुरुआत में होली को अपना मनपसंद त्योहार बताकर भी इस वार्तालाप की शुरुआत कर सकती है। बच्चों से पूछना कि इसमें क्या करते हैं? यह त्योहार कैसे मनाते हैं? आदि बच्चों के विचारों को विषय तक लाना होता है। चाहे फिर वह किसी अन्य विषय की बात पर क्यों न आ जाएँ। बच्चों को फिर पूर्व में दिए गए विषय पर लाने के लिए शिक्षिका पुनः उसी विषय की बात शुरू करें लेकिन बच्चे बात को सुनकर उसे विषय से जोड़कर रखना, ताकि वह सामाजिक व्यवहार करना भी सीख सकें।



बताओ जैसी क्रिया में भी इसका प्रयोग किया जा सकता है कि कोई चित्र दिखाकर उस पर बताने के लिए कहना, कोई वाक्य बनाने के लिए कहना इससे बच्चों में अवलोकन शक्ति बढ़ती है।

#### वर्णन

किसी क्रिया, घटना, कहानी का वर्णन करना। यह भी शिक्षण की महत्वपूर्ण विधि है। इसमें किसी भी विषय (कहानी) का वर्णन करके बच्चों में सुनने की क्षमता

को बढ़ावा दिया जा सकता है। बच्चों की 'ध्यान केंद्रित' करने की क्षमता में वृद्धि करना। इसके लिए रुचिकर तरीके से कहानी, बालगीत, कठपुतली, प्लेश कार्ड आदि की मदद से वर्णन किया जा सकता है। बच्चों का मनोरंजन करना उसकी सोचने की क्षमता को बढ़ाना, शिक्षिका के हावभाव से अनुकरण द्वारा बच्चे विषय को ध्यानपूर्वक समझते हैं क्योंकि वह भी उसे घर पर उसी प्रकार के हावभाव के साथ सुनाएगा।

### प्रश्नोत्तर

इस विधि में कहानी सुनाते समय भी प्रश्न पूछ सकते हैं जिससे हमें बच्चों से तुरंत प्रतिक्रिया मिल जाती है। जैसे चिड़ियाघर का नाम बताकर उन्हें सब कुछ पता होता है और फिर ज्यादा बताने की आवश्यकता नहीं होती है। बीच-बीच में प्रश्न पूछने से हमें यह भी पता चल जाता है कि बच्चों ने कितना समझा? इससे भी बच्चे की सुनने व बोलने की क्षमता में वृद्धि होती है। प्रस्तुतीकरण, प्रस्तावना आदि में प्रश्न पूछ सकते हैं। ऐसी खेल क्रियाएँ जिससे बच्चे के दिमाग में प्रश्न उठते हैं समस्या-समाधान तकनीक होती है जिसमें वह स्वयं ही हल ढूँढ़ता है। एक बना हुआ चित्र दे देना और उसी चित्र के टुकड़े देना जिसे बच्चा देखकर टुकड़े जोड़कर चित्र पूरा करता है। इस प्रकार बच्चे से प्रश्न पूछने से उनमें सोचने व बोलने की क्षमता बढ़ती है। प्रश्नोत्तर के उद्देश्य प्रत्येक आयु वर्ग के लिए भिन्न होते हैं जैसे 3-4 वर्ष में बच्चा एक शब्द में जवाब देकर उत्तर देता है। वह निर्णय लेता है लेकिन वह आत्मनिर्भर नहीं होता। वहीं 5-6 वर्ष का बच्चा बिना किसी की मदद से पज़लस, ब्लॉक्स, पहेली सुलझा पाता है।

कारण और प्रभाव संबंध — किसी क्रिया को करने से उसमें क्या परिवर्तन हुआ है? यह सहसंबंध भी, प्रश्नोत्तर विधि में ही सम्मिलित है जिसमें हम बच्चों को ताला-चाबी, बैट-बॉल जैसे सहसंबंध बता सकते हैं। हमें बच्चों के समक्ष ऐसे प्रश्नों को रखना चाहिए जो उनकी समझ और सोच को विकसित करें। जैसे — पत्थर को पानी में डालेंगे तो क्या होगा? डूबेगा या तैरेगा। बस छूट गई है तो क्या करोगे? इत्यादि प्रश्नों द्वारा हम बच्चों को भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में समाधान ढूँढ़ने के लिए तैयार करा सकते हैं कि वह आगे भविष्य में भी इन्हें कैसे सुलझा सकते हैं। बच्चों द्वारा उत्तर सुनकर सही उत्तर सभी को बताना। इस प्रकार उनमें सोचने, कल्पना करने, तर्कशक्ति और मौखिक कौशल का भी विकास होता है। बच्चों को सही उत्तर बताने पर उसका कारण भी बताना चाहिए कि ऐसा ही क्यों करेंगे। बच्चे उसे अपने मानसिक और संज्ञानात्मक विकास के अनुसार ही ग्रहण करेंगे। जो भविष्य में उन्हें संबंधित विषय के प्रत्ययों को स्पष्ट करने में सहायता करेगा। यह कारण और प्रभाव संबंध बच्चों की आयु वर्ग को ध्यान में रखते हुए भी प्रयोग किया जाना चाहिए। इस प्रकार प्रश्नोत्तर विधि का प्रयोग कर बच्चों के मन में उठने वाले अनेक प्रश्नों का समाधान किया जा सकता है।

मौखिक शिक्षण विधियों द्वारा बच्चों के बोलने और सुनने के कौशल के विकास के साथ ही विषय के प्रति उनकी रुचि, विचारों की अभिव्यक्ति, शब्द ज्ञान व भंडार में वृद्धि, ध्यान केंद्रित करने की क्षमता, मनोरंजन और आत्मविश्वास को भी प्रोत्साहन मिलता है।

## दृश्यात्मक शिक्षण विधि

दृश्यात्मक शिक्षण तकनीक मौखिक तकनीक की अपेक्षा अधिक प्रभावकारी है। इस तकनीक द्वारा विषय को अधिक रुचिकर बनाया जा सकता है जिसके परिणामस्वरूप उसका प्रभाव अधिक समय तक बच्चों के मन और मस्तिष्क पर प्रभाव डालता है। दृश्यात्मक शिक्षण तकनीक में हम निम्न क्रियाओं व विधियों का प्रयोग कर सकते हैं —

- नाटकीयकरण
- प्रयोगात्मक विधि
- बच्चों और शिक्षिकाओं का कार्य प्रदर्शन

### नाटकीयकरण

इस तकनीक में बच्चों की आयु अनुसार कहानी, कविता सुनाकर फिर पुनरावृत्ति में नाटकीयकरण करवाया जाता है। सुनी हुई कहानी का वाक्यों, हावभावों द्वारा अभिनय किया जाता है। इसी प्रकार किसी व्यक्ति, वस्तु आदि का अभिनय करवा सकते हैं जैसे — शिक्षक, डॉक्टर इत्यादि। बच्चों को परिस्थिति बता कर अभिनय व नाटक भी करवाया जा सकता है, जैसे — दुकानदार और ग्राहक, शिक्षक और (बच्चा/विद्यार्थी की वार्तालाप) करना आदि। इस प्रक्रिया में बच्चे अपनी व्यक्तिगत क्षमता और आयु वर्ग के अनुसार संवाद बोलने में मदद और प्रोत्साहन देने की आवश्यकता होती है। बच्चे आयु अनुसार स्वयं भी संवाद बनाकर नाटक कर सकते हैं।

### प्रयोगात्मक विधि

इसके द्वारा बच्चों पर क्रिया का प्रभाव स्थायी हो जाता है। जो बात व विषय वे सुनकर इतना अच्छा ग्रहण

नहीं कर पाते हैं, उसे वे देख कर स्थायी व मूर्त प्रत्यय का निर्माण करने में समर्थ होते हैं। प्रयोग द्वारा बच्चों को वास्तविक अनुभव तो मिलता ही है वरन् साथ में उसके मूर्त रूप से भी अवगत होते हैं। यदि हम बच्चे को यह बताएँ कि पानी का कोई रंग नहीं होता है तो वे अवश्य उसे सफ़ेद रंग का बताते हैं और जब हम यही प्रयोग द्वारा करके दिखाते हैं, तो वे इसे स्थायी रूप से समझ जाते हैं। जिसके परिणामस्वरूप वे उसे अपने आगामी अध्ययन से भी सहसंबंध कर पाते हैं। प्रयोगात्मक विधि का प्रयोग हमेशा आयु वर्ग को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए जैसे 3-4 साल का बच्चा केवल देख सकता है। संभव है कि कुछ देखकर भी न समझ आए क्योंकि समझने की शक्ति नहीं होती है और न ही ध्यान केंद्रित करने की क्षमता ही विकसित हो पाती है। अतः यह केवल एक जादू या खेल क्रिया की भाँति ही होता है। वहीं 4-5 साल का बच्चा रुचि लेगा, समझने का प्रयास करेगा। स्वयं करके देखने के लिए भी तत्पर होगा।

### बच्चों और शिक्षिकाओं का कार्य प्रदर्शन

कक्षा में बच्चों और शिक्षिकाओं द्वारा किया जाने वाला कार्य प्रदर्शन कक्षा की सुंदरता को ही नहीं बढ़ाता अपितु विषय-वस्तु की स्पष्टता, बच्चों की रुचि व एकाग्रता को भी सुनिश्चित करता है। समय-समय पर यह प्रदर्शन विषय-वस्तु के अनुसार बदलता रहना चाहिए और बच्चों को भी इससे अवगत कराते रहना चाहिए। कक्षा के कार्यक्रम अनुसार विषय-सामग्री का बदलाव सभी को कक्षा की प्रगति और विकास के बारे में भी बताता है। शिक्षिका के कार्य



प्रदर्शन से बच्चों को प्रोत्साहन मिलता है। विषय संबंधी ज्ञान व प्रत्ययों को सुनकर तथा प्रदर्शित रूप से देखकर बच्चों का मूर्त प्रत्यय निर्माण होता है और वे विषय का स्पष्टता से सह-संबंध स्थापित कर पाते हैं। उदाहरण के लिए, यदि शिक्षिका बच्चों को कोई कहानी सुनाती हैं और साथ ही उसका एक-एक घटना क्रम का चित्र दिखाकर उसका कक्षा में प्रदर्शन भी करती हैं तो बच्चों को वह कहानी क्रम से याद भी हो जाती है। वह रोज उसे देखेंगे और उस पर चर्चा करेंगे तो इस प्रकार उनके घटनाक्रम को याद रखने और उसे क्रम से बताने और चित्रों को क्रम से लगाने की भी योग्यता का विकास होता है। केवल शिक्षिका के कार्य प्रदर्शन से नहीं वरन् बच्चों द्वारा किए गए कार्य के प्रदर्शन से भी बच्चों को खुशी मिलती है कि उनके काम को भी कक्षा में प्रदर्शित किया गया है। उदाहरण के लिए, फ्री हैंड ड्रॉइंग में बच्चे अपने बनाए गए चित्रों को स्पष्टता से समझते हैं और अपने मित्रों से भी इस पर चर्चा करके संतुष्ट होते हैं। इस कार्य प्रदर्शन से उनमें 'स्व' की भावना का विकास होता है तथा अभिभावक भी देखकर समझ पाते हैं कि कक्षा में बच्चे के काम का क्या स्तर है। वे बच्चे की क्रियाओं के प्रदर्शन से शिक्षिका और विद्यालय की कार्य-प्रणाली से भी अवगत हो पाते हैं।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि मौखिक एवं दृश्यात्मक शिक्षण विधि बच्चों की शिक्षा में महत्वपूर्ण योगदान निभाती है, लेकिन दृश्यात्मक विधि से अधिक अच्छे परिणाम सामने आते हैं। मौखिक विधि की अपेक्षा यह अधिक अच्छी व प्रभावशाली सिद्ध होती है क्योंकि —

- यह मूर्त है और बच्चे इसे देखकर अधिक स्पष्टता से विषय-वस्तु को समझ सकते हैं।
- बच्चे सुनने के साथ देखकर अधिक स्थायी ज्ञान प्राप्त करते हैं।
- देखकर जो समझ आता है उसकी छवि/छाप लंबे समय तक मस्तिष्क में बनी रहती है।
- विषय-वस्तु का ज्ञान देखकर अधिक शीघ्रता से समझ आता है।
- आँखों की माँसपेशियों का विकास होता है।
- अवलोकन क्षमता का विकास होता है।
- सौंदर्यानुभूति का अनुभव करना सीखते हैं।
- वातावरण को सुंदर, अच्छा बनाने के लिए।
- बच्चों में एकाग्रता आती है। यह उनका ध्यान आकर्षित कर उनमें एकाग्रता को बढ़ाती है।
- छात्र और शिक्षिका के बीच में एक जोड़ है क्योंकि क्रियाओं द्वारा बच्चों को समझने में मदद मिलती है।

इन विधियों का प्रयोग करते समय पूर्व प्राथमिक शिक्षिकाओं को निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए —

- यह बच्चों की आयु-वर्ग को ध्यान में रख कर प्रयोग करनी चाहिए।
- बच्चों के मानसिक स्तर, ध्यान केंद्रित करने की क्षमता का ज्ञान होने पर इनका प्रयोग करना चाहिए।
- इन्हें सरल से जटिल, मूर्त से अमूर्त के क्रम में प्रयोग करना चाहिए।
- व्यक्तिगत भिन्नताओं को ध्यान में रखना चाहिए।
- बच्चों को भी स्वयं करके सीखने के अवसर प्रदान करने चाहिए।

- यह शिक्षा के उद्देश्यों को पूरा करने में सहायक होनी चाहिए।
- रोचक व मनोरंजनपूर्ण होनी चाहिए। प्रयोगों की नीरसता से बचना चाहिए।
- बच्चों को उचित अवसर और प्रोत्साहन प्रदान करना चाहिए।
- बच्चों की तुलना व अवहेलना नहीं करनी चाहिए। उनमें आत्मविश्वास, आत्माभिव्यक्ति, एकाग्रता को बढ़ाना चाहिए।
- बच्चों के सर्वांगीण विकास के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए इनका प्रयोग करना चाहिए।
- ज्ञात से अज्ञात, पूर्णतः से अंशतः के क्रम को ध्यान में रखते हुए क्रियाएँ कराई जानी चाहिए। अन्यथा आयोजन अर्थविहीन हो जाएगा।
- बच्चों में समायोजन, माँसपेशियों का विकास, स्वतंत्रता, भाषा, प्रत्यय-निर्माण, सामाजिक कौशल आदि सभी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए लचीली होनी चाहिए।
- इन विधियों के प्रयोग द्वारा विषय संबंधी ज्ञान का मूल्यांकन किया जा सकता है यह बच्चों के विकास में कितनी उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

अतः इस प्रकार हम कह सकते हैं कि शिक्षण-अधिगम को प्रभावशाली और रोचक बनाने हेतु इन विधियों/तकनीकों का आयु-वर्ग के अनुसार प्रयोग करना पूर्व-प्राथमिक शिक्षण के स्तर और उद्देश्यों को पूर्णतः स्पष्ट करता है। किसी भी पाठ्यक्रम

की योजना को कार्यान्वित करने में यह अपनी अहम भूमिका निभाती है। बच्चे आत्म-प्रस्तुतीकरण कर अनुभव द्वारा व्यावहारिक जीवन में समस्याओं के समाधान ढूँढ़ सकें और अपने वर्तमान को समझते हुए भविष्य के लिए तैयार हो सकें यही इनका ध्येय होना चाहिए।

### निष्कर्ष

बच्चे की ज्ञान-अर्जन की प्रक्रिया में शिक्षण विधियों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। यदि उचित शिक्षण विधि का चयन नहीं किया जाता तो शिक्षण प्रक्रिया प्रभावहीन व अर्थहीन होकर रह जाएगी। हर आयु वर्ग के लिए भिन्न-भिन्न शिक्षण विधियों की आवश्यकता होती है तथा हर विषय को पढ़ाने के लिए भी अलग-अलग प्रकार की शिक्षण विधियों का चयन करना पड़ता है। जैसे विज्ञान का ज्ञान देने के लिए सिद्धांत के साथ-साथ प्रायोगिक ज्ञान भी आवश्यक होता है। भाषाओं के शिक्षण में व्याकरण के साथ-साथ उच्चारण भी सिखाने होते हैं। इसी प्रकार पूर्व प्राथमिक शिक्षा में खेल-विधि को प्रयोग किया जाना चाहिए। लेकिन उच्च स्तर पर खेल विधि अर्थहीन हो जाती है। अतः इन सभी शिक्षण विधियों का ज्ञान तथा मनोवैज्ञानिक आधार शिक्षिकाओं के लिए इस युग में अतिआवश्यक है। उसी प्रकार बच्चों को ज्ञान प्रदान करने की आधुनिक विधियों का ज्ञान भी एक शिक्षिका के लिए अतिआवश्यक हो चुका है।

## पूर्व प्राथमिक शिक्षा में समायोजन काल का महत्त्व

ज्योतिकांत प्रसाद\*

बच्चा जब प्रथम बार नर्सरी विद्यालय में प्रवेश करता है तो वह पहली बार अपनी माँ व परिवार के सदस्यों से अलग होता है। इस समय उसकी समझ में नहीं आता है कि उसके साथ ऐसा क्यों हो रहा है, इस स्थिति का सामना करना उसके लिए बहुत दुःखदायी होता है। परिवार के पश्चात् विद्यालय से जुड़ने का यह समय पूर्व प्राथमिक शिक्षा में समायोजन काल कहलाता है। बच्चे के लिए यह समय बहुत महत्वपूर्ण होता है। प्रस्तुत लेख में पूर्व प्राथमिक शिक्षा में समायोजन काल के महत्त्व को प्रस्तुत किया गया है।

प्रत्येक बच्चा एक-दूसरे से भिन्न होता है। वे बच्चे जो नर्सरी विद्यालय से पहले किसी आँगनवाड़ी या क्रैश में रहकर आए होते हैं वे जल्दी से विद्यालय के वातावरण में रम जाते हैं क्योंकि उन्हें अपने परिवार के सदस्यों से अलग रहने की आदत हो चुकी होती है। लेकिन जो बच्चे सीधा नर्सरी विद्यालय में आते हैं वे देर से विद्यालय के वातावरण में रमते हैं। इस समय शिक्षिका का कर्तव्य हो जाता है कि वह व्यक्तिगत विभिन्नता को ध्यान में रखकर बच्चों को विद्यालय के वातावरण के साथ सामंजस्य स्थापित करने में सहायता प्रदान करे। बच्चे के साथ माँ एवं परिवार के सदस्य की तरह व्यवहार करे।

### समायोजन काल के उद्देश्य

- बच्चे बिना किसी तनाव के खुशी-खुशी विद्यालय में आएँ।

- बच्चे खुशी-खुशी अपना समय विद्यालय में व्यतीत करें।
  - बच्चों में पहल करना, स्वाधीनता एवं आत्मविश्वास के गुणों को विकसित करना।
  - संवेगों को पहचानने एवं उन पर नियंत्रण करने, भली प्रकार अभिव्यक्त करने में समर्थ करना।
- समायोजन काल में शिक्षिका को निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए।

- बच्चे का स्वागत स्नेहपूर्ण मुस्कुराहट तथा उत्साहवर्द्धक शब्दों के साथ करना चाहिए। इसके लिए वह कठपुतली का सहारा ले सकती हैं। कठपुतली द्वारा बच्चों को गुड मॉर्निंग (सुप्रभात) करवा सकती हैं। बच्चे के हाथ में खेलने को उसे दे सकते हैं।
- आरंभ में बच्चों को विद्यालय में रखने की अवधि में उदारता दिखाना चाहिए। पूरे दिन में

\* मुख्य अध्यापिका, आई.आई.टी. नर्सरी स्कूल, हौज खास, नयी दिल्ली – 110016

उसे विद्यालय में रहने के लिए बाध्य नहीं करना चाहिए। आरंभ में केवल दो घंटे का समय रख सकते हैं। धीरे-धीरे आधे घंटे की समय अवधि बढ़ा सकते हैं। पंद्रह दिन तक अवधि कम रखनी चाहिए। पंद्रह दिन के पश्चात् हम पूरे दिन का कार्यक्रम रख सकते हैं। यदि कोई बच्चा पंद्रह दिन के बाद भी समायोजित नहीं होता है तो उसके लिए समय की अवधि कम रखनी होगी।

- ऐसे बच्चे जो विद्यालय में रो-रोकर परेशान हो रहे हैं, उनकी माँ अथवा परिवार के किसी भी सदस्य को विद्यालय में रहने की इजाजत दे सकते हैं। जब बच्चा विद्यालय के वातावरण के साथ समायोजित हो जाए तो परिवार के सदस्य का साथ में रहना बंद करवा देना चाहिए। यदि ऐसा नहीं करेंगे तो बच्चे को परिवार के सदस्य के साथ रहने की आदत हो जाएगी।
- शुरू में यदि बच्चा कक्षा में बैठना नहीं चाहता है तो उसे विद्यालय परिसर में घूमने-फिरने की स्वतंत्रता दे देनी चाहिए, लेकिन बच्चा हमेशा किसी की निगरानी में होना चाहिए।
- बच्चों को समूह में शैक्षिक गतिविधियाँ करवानी चाहिए ताकि उनकी दोस्ती दूसरे बच्चों से हो सके।
- यदि बच्चा किसी गतिविधि में भाग नहीं लेता है तो उसे मजबूर नहीं करना चाहिए। यदि बच्चा थोड़ा बहुत भी सक्रिय रहता है तो ताली बजाकर उसका उत्साह बढ़ाना चाहिए।
- आरंभ के दिनों में विद्यालय को सुंदर ढंग से सजा सकते हैं। बच्चे गुब्बारे बहुत पसंद करते हैं। रंग-बिरंगे गुब्बारे से विद्यालय को सजा सकते

हैं। विद्यालय से घर जाते समय बच्चों को गुब्बारे उपहार के रूप में दे सकते हैं इससे बच्चे दूसरे दिन भी विद्यालय में आने का इंतजार करेंगे।

- कक्षा में फ़ैमिली ट्री (family tree) लगा सकते हैं जिसमें बच्चे के परिवार के सदस्यों के चित्र लगे होंगे ऐसा देखने से बच्चे को कक्षा में घर जैसा वातावरण महसूस होगा।

- बच्चों को ऐसी क्रियाएँ करवाएँ जिसमें वे रुचि लेते हैं; जैसे — खेल, कहानी, गीत, चित्र पठन आदि।

शुरुआत में खेल गतिविधियाँ अधिक-से-अधिक करवानी चाहिए। खेलना शिशु की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। खेल से बच्चे को आनंद की प्राप्ति होती है, खेल के माध्यम से बच्चे अपने भाव-विचारों को प्रकट करते हैं। इसमें रुचि लेते हैं। खेल के माध्यम से बच्चे अपने आसपास के वातावरण को अच्छी तरह समझते हैं। इससे बच्चों को सामाजिक संबंधों को स्थापित करने में सहायता मिलती है। शिशु के सभी पक्षों के विकास में खेलों का बहुत महत्त्व है। खेल के माध्यम से बच्चे सक्रिय रूप से सीखने की क्रिया में भाग लेते हैं। खेल बच्चों की समस्या समाधान, शारीरिक, भाषायी और सामाजिक दक्षताओं की वृद्धि करते हैं। सामूहिक व एकांकी दोनों खेल करवाए जा सकते हैं।

कक्षा की दीवारें रंगीन तसवीरों से सजी होनी चाहिए। प्रदर्शन बोर्ड सुंदर सजे होने चाहिए। स्कूल का वातावरण ऐसा रखना चाहिए जिसमें बच्चे अपने को सुरक्षित महसूस करें, खुशी महसूस करें, विद्यालय में दोबारा आना चाहें। छत के पंखे रंगीन रंग से रंगे होने चाहिए। शौचालय साफ़-सुथरे होने चाहिए। बच्चों की उम्र के अनुसार सुविधाजनक होने चाहिए। कक्षा की

दीवार पर बच्चों की कद के अनुसार बोर्ड लगा होना चाहिए जिस पर बच्चे चॉक से तसवीरें बना सकें। फ़र्नीचर टूटा-फूटा नहीं होना चाहिए।

समायोजन काल में शिक्षिका को मातृभाषा का प्रयोग करना चाहिए। क्योंकि छोटे बच्चे अपनी परिचित भाषा में ही अवधारणाओं को गृहण करने व स्वयं को व्यक्त करने में समर्थ होते हैं। बच्चा यदि कोई प्रश्न करता है तो उसका उत्तर ज़रूर देना चाहिए। बच्चे को नज़रअंदाज नहीं करना चाहिए।

इस समय शिक्षिका को बच्चों की इंद्रियों को विकसित करने पर ध्यान देना चाहिए। बच्चों की श्रवण इंद्रिय को विकसित करने के लिए विभिन्न प्रकार की आवाज़ें सुनानी चाहिए; जैसे — ताली, चुटकी, ढोलक, घूँघरू की आवाज़ की पहचान।

बच्चों की स्वाद इंद्रिय को विकसित करने के लिए विभिन्न स्वाद; जैसे खट्टी-मीठी, नमकीन चीज़ों को चखाना चाहिए।

स्पर्श इंद्रिय को विकसित करने के लिए मुलायम, सख्त वस्तुओं का स्पर्श कराना चाहिए।

सुँघने की इंद्रिय को विकसित करने के लिए विभिन्न गंद की वस्तुएँ सुँघानी चाहिए; जैसे — डिटोल, पुदीना, करी पत्ता, साबुन आदि।

आरंभ में समूह में बैठाकर परिचयात्मक खेल (Introductory game) करवाने चाहिए। इसमें बच्चों का रुचिपूर्ण तरीके से दूसरे बच्चों से परिचय होता है।

उदाहरण के लिए,

1. शिक्षिका — मेरा नाम प्यारा-प्यारा राधा है (मोहन की तरफ)

आपका नाम प्यारा-प्यारा क्या है?

मोहन — मेरा नाम प्यारा-प्यारा मोहन है (सीमा की तरफ इशारा करते हुए)

आपका नाम प्यारा-प्यारा क्या है?

सीमा — मेरा नाम प्यारा-प्यारा सीमा है

आपका नाम प्यारा-प्यारा क्या है?

इस प्रकार परिचयात्मक खेल जारी रहेगा

2. शिक्षिका — मेरा नाम हीरा है। मैं दिल्ली में रहती हूँ। आपका नाम क्या है? आप कहाँ पर रहते हो?

माया — मेरा नाम माया है। मैं फ़रीदाबाद में रहती हूँ। आपका नाम क्या है? आप कहाँ पर रहते हो? इसी तरह एक बच्चा दूसरे बच्चे से पूछेगा और खेल जारी रहेगा।

3. गोलाकार में बच्चों को बिठाएँगे। यह गीत गाएँगे।

हम सब बच्चे हैं मन के सच्चे हैं अमन मेरा नाम है, खेलना मेरा काम है

चिराग — चिराग मेरा नाम है, नाचना मेरा काम है।

इसी तरह इस खेल को बारी-बारी से सब बच्चे करेंगे।

उपरोक्त खेलों द्वारा बच्चों की एक-दूसरे से जल्दी ही दोस्ती हो जाएगी।

## कहानी

बच्चे कहानी में बहुत रुचि लेते हैं और आसानी से कहानी सुनने के लिए तैयार हो जाते हैं। इसलिए समायोजन काल में शिक्षिका को प्रतिदिन कहानी अवश्य सुनानी चाहिए। शिक्षिका को ध्यान रखना चाहिए कि सरल शब्दों में कहानी को सुनाएँ,

कहानी बहुत ज़्यादा बड़ी न हो। कहानी को विभिन्न माध्यम से सुना सकते हैं। जैसे कहानी के फ़्लैश कार्ड द्वारा, कहानी के फ़ोल्डर द्वारा, पुस्तकों द्वारा आदि।

## गीत

समायोजन काल में शिक्षिका को प्रतिदिन गीत सुनाने चाहिए। बच्चों को साथ में गाने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। कठपुतली चार्ट आदि का सहारा ले सकते हैं।

बच्चे जानवर, यातायात के साधन, फलों एवं सब्जियों में बहुत रुचि लेते हैं। इनसे संबंधित गीत सुना सकते हैं। गीत छोटे व आसान शब्दों में होने चाहिए।

विद्यालय में संगीत के उपकरण होने चाहिए; जैसे — डोलक, ढपली, तबला आदि। टेपरिकॉर्डर द्वारा गीत सुना सकते हैं। बच्चों को नाचने के लिए उत्साहित कर सकते हैं।

पूरे दिन के कार्यक्रम की योजना शिक्षिका को पहले से ही बना लेनी चाहिए। ताकि कक्षा में शिक्षिका केवल बच्चों पर ही ध्यान दे सकें। कक्षा पूर्ण रूप से व्यवस्थित होनी चाहिए ताकि बच्चों को घूमने-फिरने में आसानी हो। टूटी-फूटी वस्तुओं एवं खिलौनों को हटा देना चाहिए, ताकि बच्चों को चोट नहीं लगे। खेल के मैदान में जितने भी झूले हैं उनका रख-रखाव व ठीक ढंग से करना चाहिए। साफ़-सुथरे होने चाहिए, ताकि खेलते समय बच्चों को चोट ना लगे और उनके कपड़े गंदे न हों।

- बच्चों को खेल के मैदान में ले जाकर शिक्षिका को सब झूलों के नाम से परिचित करवाना चाहिए

व बताना चाहिए कि किस प्रकार इनके साथ खेलना है। जोर से झूला नहीं झूलना चाहिए। झूला झूलते समय दूसरे बच्चों को धक्का नहीं देना है। अपनी बारी का इंतजार करना चाहिए। खेल के मैदान में रेत, जिसमें बच्चे खेलते हैं, साफ़ होनी चाहिए। कोई नुकीली चीज़ उसमें नहीं होनी चाहिए।

- शिक्षिका कक्षा में रखे खिलौने से बच्चों को अवगत कराएँगी। उनसे कैसे खेला जाता है, बताएँगी। सभी खिलौनों को रखने का सही स्थान बताएँगी।
- शिक्षिका बच्चों को अपनी कक्षा व अपने नाम से, कक्षा की सहायिका (आया) के नाम से परिचित करवाएँगी। बच्चों का दूसरी कक्षा में भ्रमण कराएँगी। दूसरी कक्षा की शिक्षिका एवं आया के नाम से परिचित कराएँगी। विद्यालय के ऑफिस, स्टाफ़ रूम, लाइब्रेरी, क्रिएटिव रूम, टॉयलेट आदि दिखाएँगी।
- आरंभ के दिनों में यदि बच्चा टॉयलेट जाता है तो उसे अकेला बिल्कुल नहीं भेजें क्योंकि अभी उनको ठीक ढंग से नहीं मालूम होता है कि किस तरह कमोड का इस्तेमाल करना है। अन्यथा वह गिर या फिसल सकते हैं।
- बच्चों के प्रति सकारात्मक और स्नेहपूर्ण व्यवहार रखना चाहिए। शिक्षिका को समय-समय पर बच्चे को गले लगाना चाहिए, प्यार से थपकी देनी चाहिए। जो बच्चा शांत और शर्मीला है या अत्यधिक आक्रामक रुख अपनाने वाला है उसे अपने पास आगे बिठाना चाहिए। ऐसा करने से वह अपने को महत्वपूर्ण समझेगा।

## समायोजन काल में कराई जाने वाली गतिविधियाँ

### गीत

A red apple  
growing on a tree  
one for you and one for me  
one for your papa  
one for my mummy  
Yummy Yummy ...

टन-टन-टन Hello टेलीफोन बोल रहा है कौन  
आहा ये तो पापा की आवाज़  
पापा आना जल्दी आज  
खिलौने लाना एक हज़ार

छोटी सी मुन्नी  
लाल-गुलाबी चुन्नी  
नर्सरी में पढ़ती हूँ  
सबको टाटा करती हूँ

छोटी सी मिनी  
खाए बहुत चीनी  
दाँत में लगा कीड़ा  
हुई बहुत पीड़ा  
थोड़ी दवाई लगानी पड़ी  
थोड़ी दवाई खानी पड़ी  
ज़्यादा चीनी मत खाना  
अच्छे बच्चे बन जाना।

My Mummy is Sweet  
Like Sugar and Honey  
I sit in her lap

Like a little Bunny  
Mummy and papa, I love you  
Came to me when I call you  
Give me a kiss when I ask you

जब बच्चा नर्सरी स्कूल में जाने वाला होता है तो बच्चे और अभिभावक दोनों के मन में डर होता है। अभिभावक इस बात को लेकर डरते हैं कि हमारा बच्चा किस प्रकार से उन लोगों के साथ (जिनको वह अभी जानता तक नहीं है) कैसे रह पाएगा।

अभिभावकों के मन से इस डर को हटाने के लिए स्कूल में अभिभावक सभा करनी होगी और उनको विश्वास दिलाना होगा कि उनका बच्चा पूर्ण रूप से सुरक्षित वातावरण में रहेगा। घर जैसा माहौल प्राप्त होगा। उनको इस बात की भी जानकारी देनी होगी कि किस प्रकार से उन्हें अपने बच्चे को विद्यालय में आने के लिए मानसिक रूप से तैयार करना होगा।

### कराई जाने वाली क्रियाएँ

- मोती पिरोना, बीजों से आकृति करवाना
- चित्रकला एवं रंगने जैसी उपयोगी क्रियाएँ
- अभिनय एवं नाटक आदि करवाना

### बच्चों में क्रियात्मकता बढ़ाने वाली क्रियाएँ

- विभिन्न प्रकार के खेल
- बच्चों को कुछ ज़िम्मेदारियाँ देना; जैसे — रजिस्टर लाना, सामान अपने स्थान पर रखना
- बारी-बारी से बच्चों को नेतृत्व करने का मौका देना
- विभिन्न क्रियाओं द्वारा बच्चों में अच्छी आदतों का विकास कराना; जैसे — खाना खाने से पहले हाथों को साबुन एवं पानी से धोना



- व्यक्तिगत सफ़ाई व स्वच्छता के विषय में दैनिक जीवन की क्रियाओं से संबंधित वार्तालाप करना
- शौचालय का सही प्रयोग करना तथा कूड़ा-कचरा कचरे की पेटी में फेंकना
- बैग, बोतल और जूते सही स्थान पर रखवाना।

प्रत्येक शिक्षिका को इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि समायोजन काल का उद्देश्य बच्चों का विद्यालयी वातावरण के साथ सामंजस्य स्थापित कराना है, न कि आते ही उनको पढ़ाई-लिखाई करवाना है। स्कूल के प्रति लगाव पैदा कराना हमारा प्रथम उद्देश्य होना चाहिए।

## उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान सीखने के प्रतिफल (कक्षा 6 से 8)

### परिचय

उच्च प्राथमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान विषय का प्रमुख उद्देश्य अपने आस-पास में होने वाली विभिन्न घटनाओं को विस्तार से समझना है। अपेक्षित है कि इस विषय के अंतर्गत बच्चों को विभिन्न क्षेत्रों और संस्कृतियों में रहने वाले लोगों और उनकी सामाजिक रीतियों से परिचित कराया जाए। सामाजिक विज्ञान की एक महत्वपूर्ण भूमिका बच्चों में करुणा, समानुभूति, विश्वास, शांति, सहयोग, सामाजिक न्याय, पर्यावरण संरक्षण जैसे अन्य मानवीय मूल्यों के प्रति संवेदना जगाना है।

यह अपने, अपने परिवार, अपने सामाजिक वातावरण के विभिन्न भौगोलिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कारकों के साथ अंतःक्रिया द्वारा विकसित होता है। बच्चों को विकास की गतिशीलता से परिचित कराना आवश्यक है, ताकि उनमें अन्य विषयों से उनके जुड़ाव को स्वतंत्र रूप से समझने की क्षमता, पर्याप्त जागरूकता और आवश्यक कौशलों का विकास हो सके।

### पाठ्यचर्या संबंधी अपेक्षाएँ

यह आशा की जाती है कि उच्च प्राथमिक स्तर (कक्षा-8) के अंत तक बच्चे अग्रलिखित

पाठ्यचर्या संबंधी अपेक्षाओं को पूरा करने में समर्थ हों —

- उन तरीकों को पहचानना जिनके द्वारा राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक मुद्दे उनके दैनिक जीवन को समय-समय पर प्रभावित करते हैं।
- पृथ्वी को मानव तथा जीवों के एक आवास के रूप में समझना।
- अपने स्वयं के क्षेत्र से परिचित होना तथा विभिन्न प्रदेशों (स्थानीय से लेकर भूमंडलीय) की पारस्परिक निर्भरता को समझना।
- संसाधनों के स्थानीय वितरण तथा उनके संरक्षण को समझना।
- भारतीय इतिहास के विभिन्न कालों के ऐतिहासिक विकास को समझना। विभिन्न प्रकार के स्रोतों से इतिहासकार अतीत का अध्ययन कैसे करते हैं – इसे समझना।
- एक स्थान/क्षेत्र के विकास का दूसरे से संबंध स्थापित करते हुए ऐतिहासिक विविधता को समझना।
- भारतीय संविधान के मूल्यों और दैनिक जीवन में उनके महत्त्व को आत्मसात् करना।
- भारतीय लोकतंत्र और उसकी संस्थाओं एवं संघीय, प्रांतीय तथा स्थानीय स्तर की प्रक्रियाओं के प्रति समझ विकसित करना।

- परिवार, बाज़ार और सरकार जैसी संस्थाओं की सामाजिक, आर्थिक भूमिका से परिचित होना।
- राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा पर्यावरण-प्रक्रियाओं में समाज के विभिन्न वर्गों के योगदान को पहचानना।

## कक्षा 6 (सामाजिक विज्ञान)

सीखने-सिखाने की प्रस्तावित प्रक्रियाएँ	सीखने के प्रतिफल (Learning Outcomes)
<p>सभी शिक्षार्थियों को जोड़ों में/समूहों में/व्यक्तिगत रूप से अध्ययन के लिए अवसर प्रदान करें तथा निम्नलिखित प्रक्रियाओं के लिए प्रोत्साहित करें —</p> <ul style="list-style-type: none"> <li>● पृथ्वी की गतियों को समझने के लिए चित्रों, मॉडल और दृश्य-श्रव्य सामग्रियों का प्रयोग।</li> <li>● खगोलीय परिघटनाओं, जैसे — तारे, ग्रह, उपग्रह (चाँद), ग्रहण को अपने माता-पिता/शिक्षक/ बड़ों की सहायता से देखकर समझना।</li> <li>● अक्षांशों एवं देशांतरों को समझने के लिए ग्लोब का प्रयोग।</li> <li>● स्थलमंडल, जलमंडल, वायुमंडल और जैवमंडल को समझने के लिए चित्रों का प्रयोग।</li> <li>● महाद्वीपों, महासागरों, सागरों, भारत के राज्यों/ केंद्रशासित प्रदेशों, भारत तथा इसके पड़ोसी देशों, भारत के भौतिक स्वरूपों, जैसे — पर्वतों, पठारों, मैदानों, मरुस्थलों, नदियों इत्यादि की स्थिति को समझने के लिए मानचित्रों का अध्ययन।</li> <li>● ग्रहणों से जुड़े हुए पूर्वाग्रहों पर चर्चा।</li> <li>● विभिन्न प्रकार के स्रोतों और उनके चित्रों का प्रयोग करना, ताकि वे उन्हें देखकर, पढ़कर, समझकर और चर्चा कर यह जान सकें कि इतिहासकारों ने प्राचीन भारत के इतिहास के पुनर्निर्माण के लिए इनकी व्याख्या कैसे की है।</li> <li>● शिकारी-संग्रहकर्ताओं, खाद्य उत्पादकों, हड़प्पा सभ्यता, जनपदों, महाजनपदों, साम्राज्यों, बुद्ध और</li> </ul>	<p>बच्चे —</p> <ul style="list-style-type: none"> <li>● तारों, ग्रहों, उपग्रहों, जैसे — सूर्य, पृथ्वी तथा चंद्रमा में अंतर करते हैं।</li> <li>● पृथ्वी को एक विशिष्ट खगोलीय पिंड के रूप में समझते हैं, क्योंकि पृथ्वी के विभिन्न भागों विशेष रूप से जैवमंडल में जीवन पाया जाता है।</li> <li>● दिन और रात तथा ऋतुओं की समझ प्रदर्शित करते हैं।</li> <li>● समतल सतह पर दिखाएँ अंकित करते हैं तथा विश्व के मानचित्र पर महाद्वीपों और महासागरों को चिह्नित करते हैं।</li> <li>● अक्षांशों और देशांतरों, जैसे — ध्रुवों, विषुववृत्त, कर्क व मकर रेखाओं, भारत के राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों अन्य पड़ोसी देशों को ग्लोब एवं विश्व के मानचित्र पर पहचानते हैं।</li> <li>● भारत के मानचित्र पर भौतिक स्वरूपों, जैसे — पर्वतों, पठारों, मैदानों, नदियों, मरुस्थल इत्यादि को अंकित करते हैं।</li> <li>● अपने आस-पड़ोस का मानचित्र बनाते हैं और उस पर मापक, दिखाएँ तथा अन्य विशेषताओं को रूढ़ चिह्नों की सहायता से दिखाते हैं।</li> <li>● ग्रहण से संबंधित अंधविश्वासों को तर्कपूर्ण रूप से परखते हैं।</li> <li>● बच्चे विभिन्न प्रकार के स्रोतों (पुरातात्विक, साहित्यिक आदि) को पहचानते हैं और इस अवधि के इतिहास के पुनर्निर्माण में उनके उपयोग का वर्णन करते हैं।</li> </ul>

महावीर के जीवन से संबंधित स्थानों, कला और वास्तुकला केंद्रों, भारत के बाहर जिन क्षेत्रों के साथ भारत के संबंध थे, ऐसे महत्वपूर्ण स्थानों, पुरास्थलों को मानचित्र में अंकित करना।

- महाकाव्यों, रामायण, महाभारत, सिलप्पादिकाराम, मणिमेकालाई या कालिदास के कुछ महत्वपूर्ण कार्यों का पता लगाना।
- बौद्ध धर्म, जैन धर्म और अन्य विचारधाराओं के आधारभूत विचारों और केंद्रीय मूल्यों, वर्तमान में इनकी प्रासंगिकता — प्राचीन भारत में कला और वास्तुकला के विकास, संस्कृति और विज्ञान के क्षेत्र में भारत के योगदान पर चर्चा करना।
- विभिन्न ऐतिहासिक विषयों, जैसे — कलिंग युद्ध के बाद अशोक के हृदय परिवर्तन तथा समकालीन साहित्यिक कार्यों में वर्णित किसी घटना या प्रकरण पर 'रोल प्ले' करना।
- राज्य संस्था के विकास, गण अथवा संघ की कार्यप्रणाली, संस्कृति के क्षेत्र में विभिन्न साम्राज्यों और राजवंशों के योगदान, भारत के बाहर के क्षेत्रों के साथ भारत के संपर्क और इन संपर्कों के प्रभाव आदि विभिन्न विषयों पर परियोजना कार्य करना और कक्षा में उन पर चर्चा करना।
- प्रारंभिक मानव बस्तियों तथा हड़प्पा सभ्यता के भौतिक अवशेषों को देखने के लिए संग्रहालयों में जाना और इन संस्कृतियों के बीच निरंतरता और परिवर्तन पर चर्चा करना।
- विविधता, भेदभाव, सरकार एवं आजीविका की अवधारणाओं पर विचार-विमर्श में भाग लेना।
- समाज, स्कूल, परिवार आदि में लोगों के साथ उचित/अनुचित व्यवहार पर ध्यान देना।

- महत्वपूर्ण ऐतिहासिक पुरास्थलों तथा अन्य स्थानों को भारत के एक रूपरेखा मानचित्र पर अंकित करते हैं।
- प्रारंभिक मानव संस्कृतियों की विशिष्ट विशेषताओं को पहचान पाते हैं और उनके विकास के बारे में बात करते हैं।
- महत्वपूर्ण साम्राज्यों, राजवंशों के विशिष्ट योगदानों को उदाहरणों के साथ सूचीबद्ध करते हैं, जैसे — अशोक के शिलालेख, गुप्त सिक्के, पल्लवों द्वारा निर्मित रथ, मंदिर आदि।
- प्राचीन काल के दौरान हुए व्यापक बदलावों की व्याख्या करते हैं। उदाहरण के लिए, शिकार-संग्रहण की अवस्था, कृषि की शुरुआत, सिंधु नदी किनारे के आरंभिक शहर आदि और एक स्थान पर हुए बदलावों को दूसरे स्थान पर हुए बदलावों के साथ जोड़कर देखते हैं।
- उस समय की साहित्यिक रचनाओं में वर्णित मुद्दों, घटनाओं, व्यक्तित्वों का वर्णन करते हैं।
- धर्म, कला, वास्तुकला आदि के क्षेत्र में भारत का बाहर के क्षेत्रों के साथ संपर्क और उस संपर्क के प्रभावों के बारे में बताते हैं।
- संस्कृति और विज्ञान के क्षेत्र में, जैसे — खगोल विज्ञान, चिकित्सा, गणित और धातुओं का ज्ञान आदि में भारत के महत्वपूर्ण योगदान को रेखांकित करते हैं।
- विभिन्न ऐतिहासिक घटनाओं से संबंधित जानकारी का समन्वय करते हैं।
- प्राचीन काल के विभिन्न धर्मों और विचारों के मूल तत्वों और मूल्यों का विश्लेषण करते हैं।
- अपने आस-पास की मानवीय विविधताओं के विभिन्न रूपों का वर्णन करते हैं।
- अपने आस-पास मानवीय विविधताओं के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण विकसित करते हैं।

- |   |  |
|---|--|
| <ul style="list-style-type: none"> <li>● पुस्तक में दिए पाठ का अध्ययन तथा किसी ग्राम पंचायत अथवा नगरपालिका / नगरनिगम के कार्यकलाप देखना (विद्यार्थी के निवास स्थान के अनुसार)।</li> <li>● समाज में सरकार की भूमिका तथा किसी परिवार और किसी गाँव / शहर के मामलों का अंतर समझना।</li> <li>● स्थानीय क्षेत्र/गाँव में रोजगार संबंधी विशेष अध्ययनों का वर्णन करना।</li> </ul> | <ul style="list-style-type: none"> <li>● विभिन्न प्रकार के भेद-भाव को पहचानते हैं और उनकी प्रकृति एवं स्रोत को समझते हैं।</li> <li>● समानता और असमानता के विभिन्न रूपों में भेद करते हैं और उनके प्रति स्वस्थ भाव रखते हैं।</li> <li>● सरकार की भूमिका का वर्णन करते हैं, विशेषकर स्थानीय स्तर पर।</li> <li>● सरकार के विभिन्न स्तरों, स्थानीय, प्रांतीय और संघीय, को पहचानते हैं।</li> <li>● स्वास्थ्य और शिक्षा के क्षेत्र में ग्रामीण एवं शहरी स्थानीय शासकीय निकायों के कार्यों का वर्णन करते हैं।</li> <li>● ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में चल रहे विभिन्न रोजगारों की उपलब्धता के कारणों का वर्णन करते हैं।</li> </ul> |
|---|--|

## कक्षा 7 (सामाजिक विज्ञान)

सीखने-सिखाने की प्रस्तावित प्रक्रियाएँ	सीखने के प्रतिफल (Learning Outcomes)
<p>सभी शिक्षार्थियों को जोड़ों में/समूहों में/व्यक्तिगत रूप से अध्ययन के लिए अवसर प्रदान करें तथा निम्नलिखित प्रक्रियाओं के लिए प्रोत्साहित करें —</p> <ul style="list-style-type: none"> <li>मुख्य संकल्पनाओं, जैसे — पारितंत्र, वायुमंडल, आपदाओं, मौसम, जलवायु, जलवायु प्रदेश इत्यादि को बच्चों के अनुरूप संसाधनों द्वारा समझना।</li> <li>अपने आस-पास के पर्यावरण के विविध पहलुओं, जैसे — पर्यावरण के प्राकृतिक व मानवीय घटकों, विभिन्न पारितंत्रों/जलवायु प्रदेशों के पादपों और जंतुओं, विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों, अलवण जल के स्रोतों इत्यादि को देखना व समझना तथा अपने अनुभवों को आपस में बाँटना व चर्चा करना।</li> <li>ग्लोब तथा मानचित्र पर ऐतिहासिक स्थानों/राज्यों, जलवायु प्रदेशों और अन्य संसाधनों की स्थिति को ढूँढना।</li> <li>पृथ्वी की आंतरिक संरचना, विभिन्न स्थलरूपों तथा महासागरीय जल की गतियों को समझने के लिए चित्रों/मॉडलों/दृश्य-श्रव्य सामग्रियों का उपयोग करना।</li> <li>विभिन्न स्थल रूपों को दर्शाने के लिए मॉडल बनाना।</li> <li>अपने आस-पास के विभिन्न शैलों को पहचानना व उनके नमूने एकत्र करना।</li> <li>भूकंप या अन्य आपदाओं से संबंधित 'मॉक ड्रिल' में भाग लेना।</li> <li>विभिन्न आपदाओं, जैसे — सुनामी, बाढ़, भूकंप इत्यादि के प्राकृतिक व मानवीय कारणों पर चर्चा करना।</li> <li>भारत सहित विश्व के विभिन्न जलवायु प्रदेशों में रहने वाले लोगों के जीवन से संबंधित समानताओं और असमानताओं पर चर्चा करना।</li> </ul>	<p>बच्चे —</p> <ul style="list-style-type: none"> <li>चित्र में पृथ्वी की प्रमुख आंतरिक परतों, शैलों के प्रकार तथा वायुमंडल की परतों को पहचानते हैं।</li> <li>ग्लोब अथवा विश्व के मानचित्र पर विभिन्न जलवायु प्रदेशों के वितरण तथा विस्तार को बताते हैं।</li> <li>विभिन्न आपदाओं, जैसे — भूकंप, बाढ़, सूखा आदि के दौरान किए जाने वाले बचाव कार्य को विस्तार से बताते हैं।</li> <li>विभिन्न कारकों द्वारा निर्मित स्थलरूपों के बनने की प्रक्रिया का वर्णन करते हैं।</li> <li>वायुमंडल के संघटन एवं संरचना का वर्णन करते हैं।</li> <li>पर्यावरण के विभिन्न घटकों तथा उनके पारस्परिक संबंधों का वर्णन करते हैं।</li> <li>अपने आस-पास प्रदूषण के कारकों का विश्लेषण करते हैं तथा उन्हें कम करने के उपायों की सूची बनाते हैं।</li> <li>विभिन्न जलवायु एवं स्थलरूपों में पाए जाने वाले पादपों एवं जंतुओं की विभिन्नताओं के कारणों को बताते हैं।</li> <li>आपदाओं तथा विपत्ति के कारकों पर विचार व्यक्त करते हैं।</li> <li>प्राकृतिक संसाधनों, जैसे — वायु, जल, ऊर्जा, पादप एवं जंतुओं के संरक्षण के प्रति संवेदना व्यक्त करते हैं।</li> <li>विश्व के विभिन्न जलवायु प्रदेशों में रहने वाले लोगों के जीवन तथा भारत के विभिन्न भागों में रहने वाले लोगों के जीवन में अंतर्संबंध स्थापित करते हैं।</li> <li>विशिष्ट क्षेत्रों के विकास को प्रभावित करने वाले कारकों का विश्लेषण करते हैं।</li> </ul>

- पुस्तकों/स्थानीय वातावरण में उपलब्ध इतिहास के विभिन्न स्रोतों की पहचान करना, जैसे — पांडुलिपि/नक्शे/चित्रण/पेंटिंग/ऐतिहासिक स्मारकों/फ़िल्मों, जीवनी नाटकों, टेली-धारावाहिकों, लोक नाटकों और इनकी व्याख्या कर उस काल विशेष को समझने का प्रयास करना।
- नए राजवंशों के उद्भव के साथ परिचित होना और इस समय के दौरान घटी महत्वपूर्ण घटनाओं का पता लगाने के लिए एक घटनाक्रम तैयार करना।
- ऐतिहासिक अवधि अथवा महत्वपूर्ण व्यक्तियों, जैसे — रज़िया सुल्तान, अकबर आदि के जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं को नाटक के रूप में प्रस्तुत करना।
- मध्यकालीन समाज में हुए बदलावों पर विचार करना और वर्तमान समय के साथ इसकी तुलना करना।
- राजवंशों/राज्यों/प्रशासनिक सुधारों और किसी काल की वास्तुशिल्प विशेषताओं, जैसे — खिलजी, मुगल आदि पर परियोजनाएँ तैयार करना।
- भक्ति या सूफ़ी संतों की कविताओं/भजनों, कीर्तनों या कव्वालियों, संतों से जुड़े दरगाहों/गुरुद्वारों/मंदिरों का भ्रमण करना और विभिन्न धर्मों के बुनियादी सिद्धांतों पर चर्चा के माध्यम से नए धार्मिक विचारों और आंदोलनों के उद्भव में योगदान देने वाले कारकों को समझने का प्रयास करना।
- लोकतंत्र, समानता, राज्य सरकार, लिंग, मीडिया और विज्ञापन संबंधी अवधारणाओं पर चर्चा में भाग लेना।
- संविधान, उसकी प्रस्तावना, समानता के अधिकार और उस के लिए संघर्ष के महत्व पर आरेख और चित्रों से पोस्टर तैयार करना।
- राज्य/केंद्रशासित प्रदेश के विधानसभा क्षेत्र का नक्शा देखना।
- इतिहास में विभिन्न कालों का अध्ययन करने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले स्रोतों के उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।
- मध्यकाल के दौरान एक स्थान पर हुए महत्वपूर्ण ऐतिहासिक बदलावों को दूसरे स्थान पर होने वाले बदलावों के साथ जोड़कर देखते हैं।
- लोगों की आजीविका के पैटर्न और निवास क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति के बीच संबंध का वर्णन करते हैं। उदाहरण के लिए, जनजातियों, खानाबदोशों और बंजारों की।
- मध्यकाल के दौरान हुए सामाजिक-राजनीतिक और आर्थिक परिवर्तनों का विश्लेषण करते हैं।
- विभिन्न राज्यों द्वारा सैन्य नियंत्रण हेतु अपनाए गए प्रशासनिक उपायों और रणनीतियों का विश्लेषण करते हैं, जैसे — खिलजी, तुगलक़, मुगल आदि।
- विभिन्न शासकों की नीतियों की तुलना करते हैं।
- मंदिरों, मकबरों और मस्जिदों के निर्माण में इस्तेमाल की गई विशिष्ट शैलियों और तकनीक की विशेषताओं का उदाहरणों के साथ वर्णन करते हैं।
- उन कारकों का विश्लेषण करते हैं जिससे नए धार्मिक विचारों और आंदोलनों (भक्ति और सूफ़ी) का उद्भव हुआ।
- भक्ति और सूफ़ी संतों के काव्य में कही बातों से मौजूदा सामाजिक व्यवस्था को समझने का प्रयास करते हैं।
- लोकतंत्र में समानता का महत्त्व समझते हैं।
- राजनीतिक समानता, आर्थिक समानता और सामाजिक समानता के बीच अंतर करते हैं।
- समानता के अधिकार के संदर्भ में अपने क्षेत्र में सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक मुद्दों की व्याख्या करते हैं।



- 'मॉक' मतदान (mock poll) और युवा विधान सभा का आयोजन करना।
- मीडिया की भूमिका के बारे में बहस करना।
- लोकतंत्र में समानता, लड़कियों द्वारा भेदभाव का सामना करना जैसे — विषयों पर गीतों और कविताओं के साथ नाट्य प्रदर्शन करना।
- ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में लड़कियों और महिलाओं के जीवन स्तर के बारे में, वर्णनात्मक और आलोचनात्मक लेखन से अपने विचारों को व्यक्त करना।
- एक बेहतर समाज के लिए काम करने वाली महिलाओं के बारे में मौखिक और लिखित प्रस्तुतियाँ देना।
- राज्य सरकार द्वारा चुनिंदा मुद्दों (जैसे — स्वास्थ्य, भोजन, कृषि, सड़कों) पर काम और अपने निर्वाचन क्षेत्र के विधायक द्वारा किए गए कुछ सार्वजनिक कार्यों के बारे में अखबारी कोलाज तैयार करना।
- विज्ञापनों के प्रकारों के बारे में अकेले, जोड़ी या समूह में प्रोजेक्ट बनाना और जल व ऊर्जा को बचाने की ज़रूरत पर विज्ञापन बनाना।
- अपने इलाके में स्वच्छता, सार्वजनिक स्वास्थ्य और सड़क सुरक्षा के बारे में जागरूकता अभियान चलाना।
- अपने इलाके में राज्य सरकार/संघ-शासित प्रशासन के अधीन किसी कार्यालय (जैसे — बिजली बिल कार्यालय) जाकर उसका कार्य देखना और उस पर एक संक्षिप्त रिपोर्ट तैयार करना।
- स्थानीय बाज़ार तथा बड़े बाज़ारों में जाकर उस समूह के बारे में जानकारीयाँ हासिल करना और उन पर विषय अध्ययन तथा प्रोजेक्ट तैयार करना।
- स्थानीय सरकार और राज्य सरकार के बीच अंतर करते हैं।
- विधान सभा के चुनाव की प्रक्रिया का विभिन्न चरणों में वर्णन करते हैं।
- राज्य / संघ राज्य क्षेत्र के विधान सभा निर्वाचन क्षेत्र के मानचित्र पर अपना निर्वाचन क्षेत्र देखते हैं और स्थानीय विधायक का नाम बताते हैं।
- समाज के विभिन्न वर्गों की महिलाओं के सामने आने वाली कठिनाइयों के कारणों और परिणामों का विश्लेषण करते हैं।
- भारत के अलग-अलग क्षेत्रों से आने वाली विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्धियाँ हासिल करने वाली महिलाओं को पहचानते हैं।
- विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं के योगदान को उपयुक्त उदाहरणों के साथ वर्णित करते हैं।
- समाचार-पत्रों के समुचित उदाहरणों से मीडिया के कामकाज की व्याख्या करते हैं।
- विज्ञापन बनाते हैं।
- विभिन्न प्रकार के बाज़ारों में अंतर बताते हैं।
- विभिन्न बाज़ारों से होकर वस्तुएँ कैसे दूसरी जगहों पर पहुँचती हैं – यह पता लगाते हैं।

## कक्षा 8 (सामाजिक विज्ञान)

सीखने-सिखाने की प्रस्तावित प्रक्रियाएँ	सीखने के प्रतिफल (Learning Outcomes)
<p>सभी शिक्षार्थियों को जोड़ों में/समूहों में/व्यक्तिगत रूप से अध्ययन के लिए अवसर प्रदान करें तथा निम्नलिखित प्रक्रियाओं के लिए प्रोत्साहित करें –</p> <ul style="list-style-type: none"> <li>अपने आस-पास के प्राकृतिक संसाधनों, जैसे – भूमि, मृदा, जल, प्राकृतिक वनस्पति, वन्य जीवन, खनिज, ऊर्जा संसाधनों तथा विभिन्न प्रकार के उद्योगों के वितरण से संबंधित सूचनाएँ एकत्रित करना तथा भारत और विश्व में इन संसाधनों के वितरण से संबंध स्थापित करना।</li> <li>अपने आस-पड़ोस/जिले/राज्य में प्रचलित विभिन्न कृषि पद्धतियों के बारे में जानकारी एकत्रित करना तथा किसानों से इनके बारे में बातचीत करना।</li> <li>प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता तथा उनके संरक्षण एवं अन्य राज्यों/देशों में कृषि की विविध पद्धतियों को समझने के लिए चित्रों/समाचार-पत्रों/दृश्य-श्रव्य संसाधनों का उपयोग करना।</li> <li>प्राकृतिक तथा मानव निर्मित संसाधनों के संरक्षण पर परियोजना/प्रोजेक्ट बनाना।</li> <li>वनों की आग (दावानल), भूस्खलन, औद्योगिक आपदाओं के घटित होने के प्राकृतिक तथा मानवीय कारणों तथा उन पर नियंत्रण के बारे में अपने सहपाठियों से चर्चा करना।</li> <li>विश्व के प्रमुख कृषि क्षेत्रों, औद्योगिक देशों/प्रदेशों तथा जनसंख्या के स्थानिक वितरण को समझने के लिए एटलस/मानचित्रों का उपयोग करना।</li> <li>काल विशेष के व्यक्तियों और समुदायों के अनुभवों की कहानियाँ पढ़ना।</li> <li>घटनाओं और प्रक्रियाओं पर समूह में तथा पूरी कक्षा में चर्चा करना।</li> </ul>	<p>बच्चे —</p> <ul style="list-style-type: none"> <li>कच्चे माल, आकार तथा स्वामित्व के आधार पर विभिन्न प्रकार के उद्योगों को वर्गीकृत करते हैं।</li> <li>अपने क्षेत्र/राज्य की प्रमुख फसलों, कृषि के प्रकारों तथा कृषि पद्धतियों का वर्णन करते हैं।</li> <li>विश्व के मानचित्र पर जनसंख्या के असमान वितरण के कारणों की व्याख्या करते हैं।</li> <li>वनों की आग (दावानल), भूस्खलन, औद्योगिक आपदाओं के कारणों और उनके जोखिम को कम करने के उपायों का वर्णन करते हैं।</li> <li>महत्वपूर्ण खनिजों, जैसे — कोयला तथा खनिज तेल के वितरण को विश्व के मानचित्र पर अंकित करते हैं।</li> <li>पृथ्वी पर प्राकृतिक तथा मानव निर्मित संसाधनों के असमान वितरण का विश्लेषण करते हैं।</li> <li>सभी क्षेत्रों में विकास को बनाए रखने के लिए प्राकृतिक संसाधनों, जैसे — जल, मृदा, वन इत्यादि के विवेकपूर्ण उपयोग के संबंध को तर्कपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करते हैं।</li> <li>ऐसे कारकों का विश्लेषण करते हैं जिनके कारण कुछ देश प्रमुख फसलों, जैसे — गेहूँ, चावल, कपास, जूट इत्यादि का उत्पादन करते हैं। बच्चे इन देशों को विश्व के मानचित्र पर अंकित करते हैं।</li> <li>विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में कृषि के प्रकारों तथा विकास में संबंध स्थापित करते हैं।</li> <li>विभिन्न देशों/भारत/राज्यों की जनसंख्या को दंड आरेख (बार डायग्राम) द्वारा प्रदर्शित करते हैं।</li> <li>स्रोतों के इस्तेमाल, भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न क्षेत्रों के लिए प्रयुक्त नामावली और व्यापक बदलावों के आधार पर 'आधुनिक काल' का 'मध्यकाल' और 'प्राचीनकाल' से अंतर करते हैं।</li> </ul>

- विभिन्न मुद्दों और घटनाओं पर सवाल उठाना, जैसे — ‘इंग्लिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारतीय शासकों के बीच विवादों में खुद को शामिल करना क्यों आवश्यक महसूस किया?’
- भिन्न-भिन्न ‘परियोजना कार्य’ तथा ‘गतिविधियाँ’ करना, जैसे— (अ) ‘गांधी जी के अहिंसा के विचार और भारत के राष्ट्रीय आंदोलन पर इसका प्रभाव’ पर एक निबंध लिखना, (ब) ‘भारत के राष्ट्रीय आंदोलन की महत्वपूर्ण घटनाओं’ पर एक समयरेखा (टाइम लाइन) तैयार करना, (स) ‘चौरी चौरा घटना’ पर एक रोल प्ले करना और (द) ‘औपनिवेशिक काल के दौरान वाणिज्यिक फ़सल की खेती से सबसे अधिक प्रभावित क्षेत्रों’ को भारत के एक रूपरेखा मानचित्र पर अंकित करना।
- विभिन्न आंदोलनों के इतिहास को समझने और उनके पुनर्निर्माण के लिए देशी और ब्रिटिश दस्तावेजों, आत्मकथाओं, जीवनियों, उपन्यासों, चित्रों, फोटोग्राफ़, समकालीन लेखन, दस्तावेजों, समाचार-पत्रों की रिपोर्ट, फ़िल्मों, वृत्तचित्रों और हाल के लेखन जैसे स्रोतों से परिचित होना।
- शैक्षणिक रूप से अभिनव और मानदंड-संदर्भित प्रश्नों से परिचित कराना, जैसे — पलासी की लड़ाई के क्या कारण थे?
- संविधान, संसद, न्यायपालिका और उपेक्षितों से संबंधित चर्चा में भाग लेना।
- भारत के संविधान, इसकी प्रस्तावना, संसदीय सरकार, शक्तियों के पृथक्करण और संघवाद के महत्त्व पर आरेख एवं चित्रों के साथ पोस्टर तैयार करना तथा मौखिक और लिखित प्रस्तुति देना।
- कक्षा/ विद्यालय/ घर/ समाज में स्वतंत्रता, समता और बंधुता के सिद्धांतों का अभ्यास कैसे किया जा रहा है, इस पर बहस करना।
- इंग्लिश ईस्ट इंडिया कंपनी कैसे सबसे प्रभावशाली शक्ति बन गई, बताते हैं।
- देश के विभिन्न क्षेत्रों में औपनिवेशिक कृषि नीतियों के प्रभाव में अंतर बताते हैं, जैसे — ‘नील विद्रोह।’
- उन्नीसवीं शताब्दी में विभिन्न आदिवासी समाज के रूपों और पर्यावरण के साथ उनके संबंधों का वर्णन करते हैं।
- आदिवासी समुदायों के प्रति औपनिवेशिक प्रशासन की नीतियों की व्याख्या करते हैं।
- 1857 के विद्रोह की शुरुआत, प्रकृति और फैलाव और इससे मिले सबक का वर्णन करते हैं।
- औपनिवेशिक काल के दौरान पहले से मौजूद शहरी केंद्रों और हस्तशिल्प उद्योगों के पतन और नए शहरी केंद्रों और उद्योगों के विकास का विश्लेषण करते हैं।
- भारत में नयी शिक्षा प्रणाली के संस्थानीकरण के बारे में बताते हैं।
- जाति, महिला, विधवा पुनर्विवाह, बाल विवाह, सामाजिक सुधार से जुड़े मुद्दों और इन मुद्दों पर औपनिवेशिक प्रशासन के कानूनों और नीतियों का विश्लेषण करते हैं।
- कला के क्षेत्र में आधुनिक काल के दौरान हुई प्रमुख घटनाओं की रूपरेखा तैयार करते हैं।
- 1870 के दशक से लेकर आजादी तक भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की रूपरेखा तैयार करते हैं।
- राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण बदलावों का विश्लेषण करते हैं।
- भारत के संविधान के संदर्भ में अपने क्षेत्र में सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों का विश्लेषण करते हैं।
- मौलिक अधिकार और मौलिक कर्तव्यों को समुचित उदाहरणों से स्पष्ट करते हैं।

- मौलिक अधिकार और मौलिक कर्तव्यों के बारे में (अकेले, जोड़े या समूह में) प्रोजेक्ट बनाना।
- राज्यसभा की टीवी शृंखला संविधान और गांधी, सरदार, डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर जैसी फ़िल्में देखना और चर्चा करना।
- राज्य / केंद्रशासित प्रदेश के संसदीय क्षेत्र का मानचित्र देखना।
- आदर्श आचार संहिता के साथ 'मॉक' मतदान (mock poll) और बाल संसद का आयोजन करना।
- अपने मोहल्ले में पंजीकृत मतदाताओं की सूची तैयार करना
- मतदान के महत्व के बारे में अपने मोहल्ले में एक जागरूकता अभियान चलाना।
- अपने निर्वाचन क्षेत्र के सांसद द्वारा किए गए कुछ सार्वजनिक कार्यों का पता लगाना।
- प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफ.आई.आर.) फ़ॉर्म की सामग्री का अध्ययन करना।
- मुकदमों में न्याय करने में न्यायाधीशों की भूमिका के बारे में वर्णनात्मक और आलोचनात्मक लेखन द्वारा अपने विचार व्यक्त करना।
- स्त्रियों, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, धार्मिक/भाषायी अल्पसंख्यकों, विकलांगों, विशेष ज़रूरतों वाले बच्चों, स्वच्छता कर्मचारियों और अन्य वंचित वर्गों के मानवाधिकारों के उल्लंघन, संरक्षण और प्रोत्साहन पर फ़ोकस समूह-चर्चाएँ आयोजित करना।
- 'आई एम कलाम' (हिंदी, 2011) फ़िल्म देखना और चर्चा करना।
- बाल श्रम, बाल अधिकार और भारत में आपराधिक न्याय प्रणाली के बारे में नाट्य प्रदर्शन करना।
- राज्य सरकार और केंद्र सरकार के बीच अंतर करते हैं।
- लोकसभा के चुनाव की प्रक्रिया का वर्णन करते हैं।
- राज्य/ संघ शासित प्रदेश के संसदीय निर्वाचन क्षेत्र के मानचित्र पर अपना निर्वाचन क्षेत्र पहचान सकते हैं और स्थानीय सांसद का नाम जानते हैं।
- कानून बनाने की प्रक्रिया का वर्णन करते हैं (उदाहरणार्थ, घरेलू हिंसा से स्त्रियों का बचाव अधिनियम, सूचना का अधिकार अधिनियम, शिक्षा का अधिकार अधिनियम)।
- भारत में न्यायिक प्रणाली की कार्यविधि का कुछ प्रमुख मामलों का उदाहरण देकर वर्णन करते हैं।
- एक प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफ.आई.आर.) दर्ज करने की प्रक्रिया को प्रदर्शित करते हैं।
- अपने क्षेत्र के सुविधा वंचित वर्गों की उपेक्षा के कारणों और परिणामों का विश्लेषण करते हैं।
- पानी, सफ़ाई, सड़क, बिजली आदि जन-सुविधाएँ उपलब्ध कराने में सरकार की भूमिका की पहचान करते हैं।
- आर्थिक गतिविधियों के नियमन में सरकार की भूमिका का वर्णन करते हैं।

- सार्वजनिक सुविधाएँ और पानी, स्वच्छता, बिजली की उपलब्धता में असमानता के कारणों पर साथियों के साथ अनुभव साझा करना।
- सरकार जनसुविधाएँ उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी क्यों ले, इस पर वाद-विवाद करना।
- कानून के पालन और मुआवजे में लापरवाही के उदाहरण रूप में समाचार-पत्र की कतरनें या किसी मामले का अध्ययन (केस स्टडी) को बच्चों को उपलब्ध करवाना।
- आर्थिक गतिविधियों के नियमन में सरकार की भूमिका पर समूह-चर्चा, जैसे — भोपाल गैस त्रासदी के कारणों का विश्लेषण करना।
- अपने इलाके में केंद्र सरकार के किसी कार्यालय (जैसे — पोस्ट ऑफिस) जाकर वहाँ का कामकाज देखना और एक संक्षिप्त रिपोर्ट तैयार करना।

## विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए (सामाजिक विज्ञान)

- पर्यावरण अध्ययन एवं सामाजिक विज्ञान के अध्ययन के बाद अपेक्षित परिणाम पाने के लिए कुछ विद्यार्थियों को बोलती किताबें (Talking Books), ऑडियो-टेप, डेजी किताबों के रूप में सहायता की आवश्यकता पड़ सकती है। इसके साथ ही उन्हें अपने विचारों को लिखने या अभिव्यक्त करने के लिए अन्य वैकल्पिक संवाद के तरीके, जैसे — सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (I.C.T.) अथवा बोलना, क्रियाकलापों का समायोजन अथवा गतिविधि चित्रों को समझने के लिए दृश्य सूचनाएँ या शिक्षा के विभिन्न साधनों का उपयोग तथा विभिन्न भौगोलिक संकल्पनाओं, विशेषताओं और पर्यावरण को समझने में सहायता प्रदान करने के लिए विशेष मदद की आवश्यकता हो सकती है।
- सामूहिक प्रोजेक्ट एवं अन्य कार्यों के माध्यम से विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को कक्षा की गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी के लिए सक्षम बनाया जा सकता है।
- विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए विभिन्न संसाधन, जैसे — स्पर्शी चित्र (टैक्टाइल) मानचित्र, बोलती किताबें (Talking Books), दृश्य-श्रव्य सामग्रियाँ, ब्रेल का प्रयोग किया जा सकता है। इस दस्तावेज़ में शैक्षिक प्रक्रियाओं एवं सीखने के प्रतिफल में और भी जोड़ने की उल्लिखित गुंजाइश है। शिक्षकों से अपेक्षा की जाती है कि वे अपने विद्यार्थियों के मूल्यांकन

हेतु सीखने के प्रतिफल को निरंतर सुधारने के लिए समुचित शैक्षिक प्रक्रियाएँ स्वयं भी बनाएँ और उनका पालन करें, ताकि विद्यार्थियों का मूल्यांकन हो।

## दृष्टिबाधित बच्चों के लिए

- भौगोलिक शब्दों और संकल्पनाओं, जैसे — अक्षांश, देशांतर, दिशाएँ आदि के लिए मौखिक विषय सामग्री।
- मानचित्र अध्ययन, आरेख, चित्र, पेंटिंग, अभिलेख, प्रतीक तथा अन्य वास्तुकलाओं का आरेखीय एवं दृश्यात्मक वर्णन आदि।
- पर्यावरण और स्थान, वनस्पति और वन्य जीवन, संसाधनों का वितरण और विभिन्न सेवाओं के बारे में समझना।
- संदर्भ सामग्री, जैसे — वर्तनी सूची, अध्ययन के प्रश्न, महत्वपूर्ण संदर्भ, अन्य सूचनाएँ जिनकी विद्यार्थियों को ज़रूरत पड़ सकती हैं, उन्हें उभरे आकार अथवा इन सभी सामग्रियों को उनके आवश्यकता अनुरूप बनाकर उपलब्ध करवाया जा सकता है।

## श्रवणबाधित बच्चों के लिए

- तकनीकी शब्दों, अमूर्त धारणाएँ, तथ्यों, तुलनाओं, कार्यकारण संबंधों और विभिन्न घटनाओं के तिथिक्रमों को समझना।
- इतिहास और नागरिक शास्त्र जैसे विषयों की कठिन सामग्री (पाठ्यपुस्तकें/स्रोत सामग्री) को पढ़ना।
- पाठ के आधार पर समझ बनाना।

**संज्ञानात्मक रूप से बाधित तथा बौद्धिक असमर्थता वाले बच्चों के लिए**

- लिखित कार्य, चित्र, चार्ट, आरेख एवं मानचित्र की उपलब्धता, विशेष रूप से बौद्धिक असमर्थता वाले विद्यार्थियों के लिए परिचलन, 'विजुअल स्पेशल', 'विजुअल प्रोसेसिंग।'
- सूचनाओं के संग्रहों में से उपयोगी सूचनाओं को निकालना। पढ़ने में कठिनाई महसूस करने

वाले बच्चों के लिए इतिहास जैसे कठिन विषय अक्सर चुनौती के रूप में होते हैं।

- घटनाक्रम और उनके आपसी संबंधों को याद रखना।
- अमूर्त अवधारणाओं को समझना और उनकी व्याख्या करना।
- पाठ्यपुस्तक में दी गई सामग्री को समाज और परिवेश के साथ जोड़कर समझना।



# बालमन कुछ कहता है

## खेलों का महत्व



खेलों का महत्व	Date: 26/1/2018
<p>हमारे जीवन में खेलों का विशेष महत्व है। आधुनिक जीवन-शैली में खेल की उपयोगिता और अधिक बढ़ गयी है। स्कूलों में भी अब खेलों पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है। शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के लिए खेल अत्यन्त उपयोगी हैं। खेल कई प्रकार के होते हैं। कुछ खेल घर में खेले जाते हैं और कुछ मैदान में। छात्रों के लिए तो मैदान में खेले जा सकने वाले खेल ही अधिक लाभदायक होते हैं, जैसे- कबड्डी, हॉकी, क्रिकेट, बैडमिन्टन, टेनिस, खो-खो, बास्केटबॉल, वॉलीबॉल, आदि। इन खेलों से हमारा मनोरंजन भी होता है और व्यायाम भी। खेल हमारे शरीर को स्वस्थ बनाने रखने के साथ-साथ हमारे भीतर कई अच्छे और आवश्यक गुणों का विकास भी करते हैं। खेलों से प्रतिযোগिता की तथा संघर्ष की भावना सहज ही सीखी जा सकती है। सांस्कृतिक जिम्मेदारी, आपसी-सहयोग, अनुशासन की भावना एवं नेतृत्व की क्षमता का विकास भी खेलों से होता है, जिनका हमारे जीवन-निर्माण में विशेष महत्व है। आज के युग में खेलों का महत्व इस कारण से भी अधिक है क्योंकि खेल से हमें खेलार, प्रसिद्धि, धन-दौलत और पद एवं पुरस्कारों की प्राप्ति होती है। निरन्तर खेलने से व्यक्ति को कई प्रकार के लोगों से सुनि मिलती है। खेलों के द्वारा विभिन्न भाषा बोलने वाले के बीच सहज ही मैत्री स्थापित हो जाती है। एक देश से दूसरे देश के बीच सम्बन्ध भी खेल से मजबूत होते हैं। खेल किसी भी देश की संस्कृति को दर्शाता है। खेल से देश का मान भी बढ़ता है। आज सरकार के द्वारा भी खेलों को विशेष महत्व देने दिया जा रहा है। अतः हमें खेल में अवश्य भाग लेना चाहिए।</p>	
नाम-विपुल वत्स -V-F	NAME:-VI PUL VATS Class:-V Sec:-F

मुझे 'पढ़ाते' हो दिन-रात,  
क्यों नहीं करते 'मेरी' बात।  
मेरा मन है निर्मल-कोमल  
करते नहीं मेरे 'मन' की बात

जो मैं चाहूँ वो मैं सीखूँ,  
जैसे चाहूँ वैसे सीखूँ।  
सिखलाओ मेरे अनुसार,  
करते रहो, मेरे मन की बात।

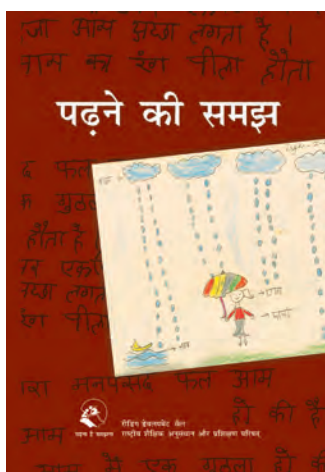
संग में तुम बैठो मेरी मम्मी,  
संग में तुम बैठो पापा।  
और गुरु जी तुम भी बैठो,  
बनके मेरे खेवनहारा।

मेरे शौक है, मेरी जान,  
खेलकूद हैं, मेरी शान।  
इसमें हैं मेरा अभिमान,  
इनको भी मानो तुम शान।

करता हूँ मैं, बनता हूँ मैं,  
खेलकूद कर बढ़ता हूँ मैं।  
रागद्वेष नहीं रखता हूँ मैं,  
देख-समझकर जीता हूँ मैं।

मुझे बनाओ, मुझे 'सँवारो',  
शिक्षा है, मेरा उद्धार।  
कर दो तुम मेरा उद्धार,  
इसमें है, सबका उद्धार॥

## कुछ अन्य एन.सी.ई.आर.टी. प्रकाशन

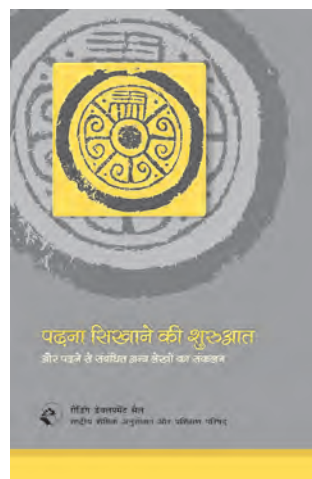


### पढ़ने की समझ

₹ 75.00/pp.178

Code — 3277

ISBN — 978-81-7450-993-2



### पढ़ना सिखाने की शुरुआत

₹ 55.00/pp.68

Code — 2100

ISBN — 978-81-7450-991-6



### लिखने की शुरुआत एक संवाद

₹ 165.00 /pp.130

Code — 32107

ISBN — 978-93-5007-268-4



### पढ़ने की दहलीज़ पर

₹ 35.00/pp.62

Code — 3267

ISBN — 978-81-7450-8371-9

अधिक जानकारी के लिए कृपया [www.ncert.nic.in](http://www.ncert.nic.in) देखिए अथवा कॉपीराइट पृष्ठ पर दिए गए पत्तों पर व्यापार प्रबंधक से संपर्क करें।

## लेखकों के लिए दिशा निर्देश

- लेख सरल भाषा में तथा रोचक होना चाहिए।
- लेख की विषय-वस्तु 2500 से 3000 या अधिक शब्दों में डबल स्पेस में टंकित होना वांछनीय है।
- चित्र कम से कम 300 dpi में होने चाहिए।
- तालिका, ग्राफ़ विषय-वस्तु के साथ होने चाहिए।
- चित्र अलग से भेजे जाएँ तथा विषय-वस्तु में उनका स्थान स्पष्ट रूप से अंकित किया जाना चाहिए।
- शोध-पत्रों के साथ कम से कम सारांश भी दिया जाए।
- लेखक लेख के साथ अपना संक्षिप्त विवरण तथा अपनी शैक्षिक विशेषज्ञता अवश्य भेजें।
- शोधपरक लेखों के साथ संदर्भ की सूची भी अवश्य दें।
- संदर्भ का प्रारूप एन.सी.ई.आर.टी. हाउस स्टाइल के अनुसार निम्नवत होना चाहिए—  
सेन गुप्त, मंजीत. 2013. प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा. पी.एच.आई. लर्निंग प्रा. लि., दिल्ली.

लेखक अपने मौलिक लेख या शोध-पत्र सॉफ़्ट कॉपी (यूनीकोड में) के साथ निम्न पते पर या ई-मेल पर भेजें—

अकादमिक संपादक

प्राथमिक शिक्षक

प्रारंभिक शिक्षा विभाग

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016

ई-मेल—prathamik.shikshak@gmail.com

विद्यया ऽ मृतमश्नुते



एन सी ई आर टी  
NCERT

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्  
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING